- तृतीय दिवस - भागवत कथा 1

सभी कैसे पधारे?
महाराज परीक्षित को श्राप लग गया है। तक्षक नाग के डसने से उनकी मृत्यु हो जायेगी।

⇒ किन्तु शुकदेव जी यह सुन कर नहीं पधारे कि महाराज परीक्षित को श्राप लग गया। वो कैसे पधारे यदृच्छया (यत - इच्छया) किसकी इच्छा से परमात्मा की इच्छा से पधारे। श्री शुकदेवजी का अवधूत वेष है।

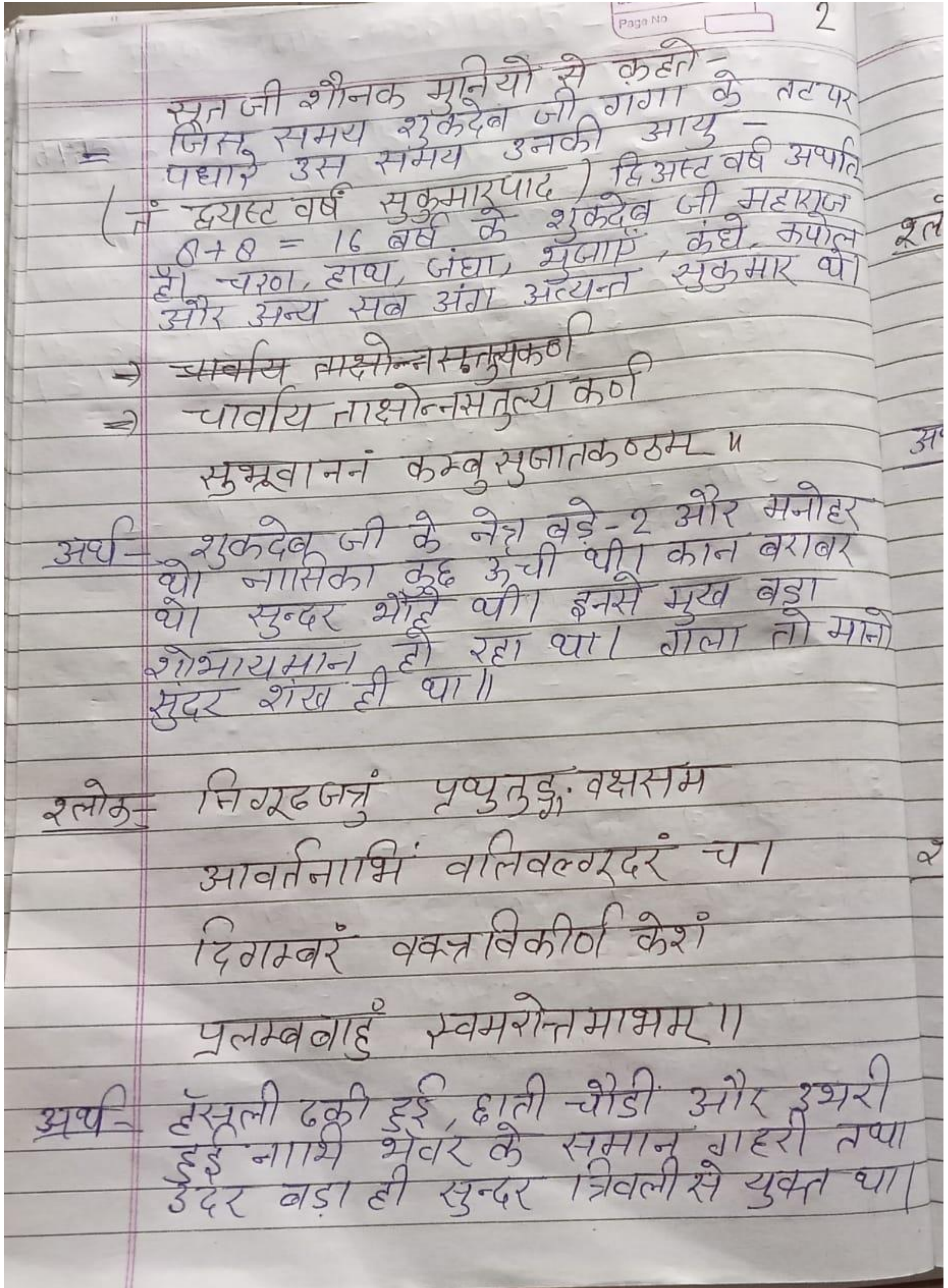
:भजन:

आए मेरे श्याम सुन्दर के प्यारे -2
आए मेरे नन्दनन्दन के प्यारे -2

(1) माला तिलक मनोहर बानो
त्रिभुवन के उजियारे -2
आए मेरे - - -

(2) हृदय कमल के बीच विराजत -2
श्री बृजराज दुलारे -2

न जाने को पुण्य उदय भयो -2
मेरे घर जो पधारे -2
परमानन्द करत न्यौछावर -2
बार - बार तृणवारे - -
आए मेरे नन्दनन्दन के प्यारे -



Page No 2

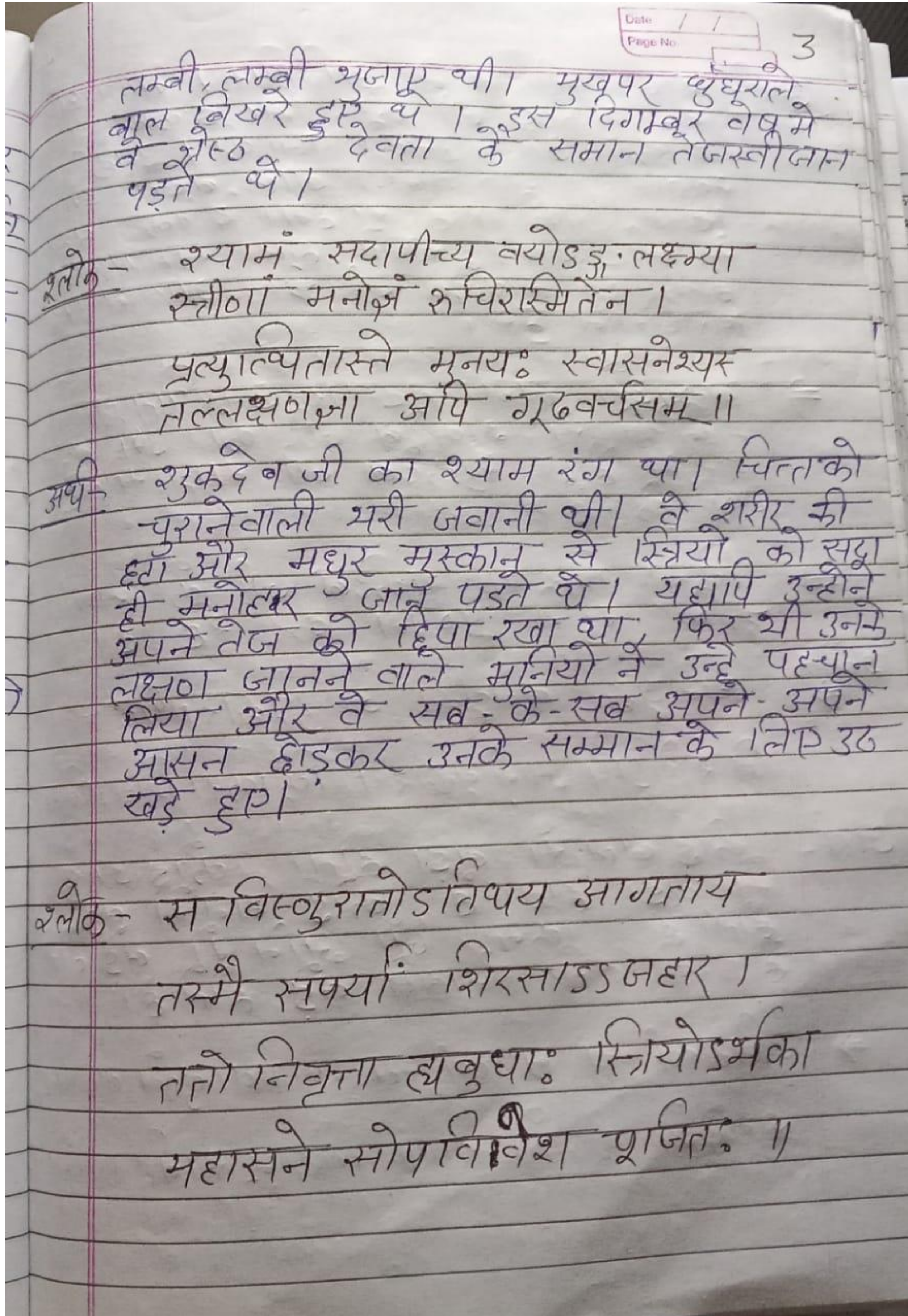
सूत जी शौनक मुनियों से कहते -
जिस समय शुकदेव जी गंगा के तट पर
पधारे उस समय उनकी आयु -
(तो द्वयष्ट वर्ष सुकुमारपाद) द्विअष्ट वर्ष अर्थात
8+8 = 16 वर्ष के शुकदेव जी महाराज
थे। चरण, हाथ, जंघा, भुजाएं, कंधे, कपोल
और अन्य सब अंग अत्यन्त सुकुमार थे।

⇒ ~~चारुनासाक्षोन्नसतुल्यकर्णं~~
⇒ चार्वयिताक्षोन्नसतुल्य कर्णं
सुभ्रूवाननं कम्बुसुजातकण्ठम्॥

अर्थ- शुकदेव जी के नेत्र बड़े-2 और मनोहर
थे नासिका कुछ ऊंची थी। कान बराबर
थे सुन्दर भौंहे थी। इनसे मुख बड़ा
शोभायमान हो रहा था। गला तो मानो
सुंदर शंख ही था॥

श्लोक- निगूढजत्रुं पृथुतुङ्गवक्षसम्
आवर्तनाभिं वलिवल्गूदरं च।
दिगम्बरं वक्त्रविकीर्णकेशं
प्रलम्बबाहुं स्वमरोत्तमाभम्॥

अर्थ- हंसली ढकी हुई, छाती चौड़ी और उभरी
हुई नाभि भंवर के समान गहरी तथा
उदर बड़ा ही सुन्दर त्रिवली से युक्त था।



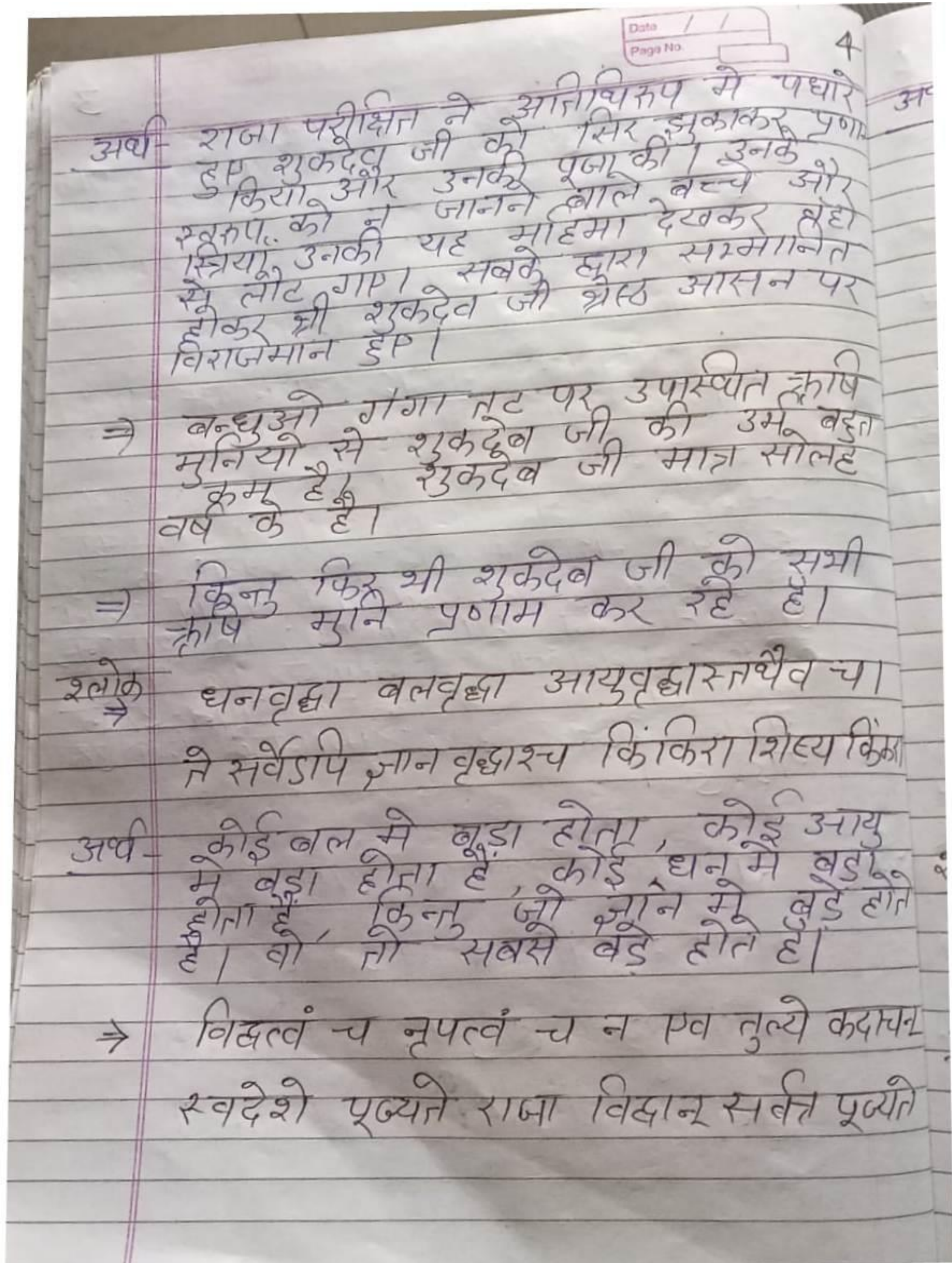
3

लम्बी लम्बी भुजाएं थी। मुख पर घुंघराले बाल बिखरे हुए थे। इस दिगम्बर वेष मे वे श्रेष्ठ देवता के समान तेजस्वी जान पड़ते थे।

श्लोक- श्यामं सदापीच्य वयोऽङ्ग लक्ष्म्या
स्त्रीणां मनोज्ञं रुचिरस्मितेन।
प्रत्युत्थितास्ते मुनयः स्वासनेभ्यस्
तल्लक्षणज्ञा अपि गूढवर्चसम्॥

अर्थ- शुकदेव जी का श्याम रंग था। चित्त को चुराने वाली भरी जवानी थी। वे शरीर की छटा और मधुर मुस्कान से स्त्रियों को सदा ही मनोहर जान पड़ते थे। यद्यपि उन्होंने अपने तेज को छिपा रखा था, फिर भी उनके लक्षण जानने वाले मुनियो ने उन्हें पहचान लिया और वे सब-के-सब अपने-अपने आसन छोड़कर उनके सम्मान के लिए उठ खड़े हुए।

श्लोक- स विष्णुरातोऽतिथय आगताय
तस्मै सपर्यां शिरसाऽऽजहार।
ततो निवृत्ता ह्यबुधाः स्त्रियोऽर्भका
महासने सोपविवेश पूजितः॥


Date / /
Page No. 4

अर्थ- राजा परीक्षित ने अतिथिरूप मे पधारे हुए शुकदेव जी को सिर झुकाकर प्रणाम किया और उनकी पूजा की। उनके स्वरूप को न जानने वाले बच्चे और स्त्रियाँ उनकी यह महिमा देखकर वहाँ से लौट गए। सबके द्वारा सम्मानित होकर श्री शुकदेव जी श्रेष्ठ आसन पर विराजमान हुए।

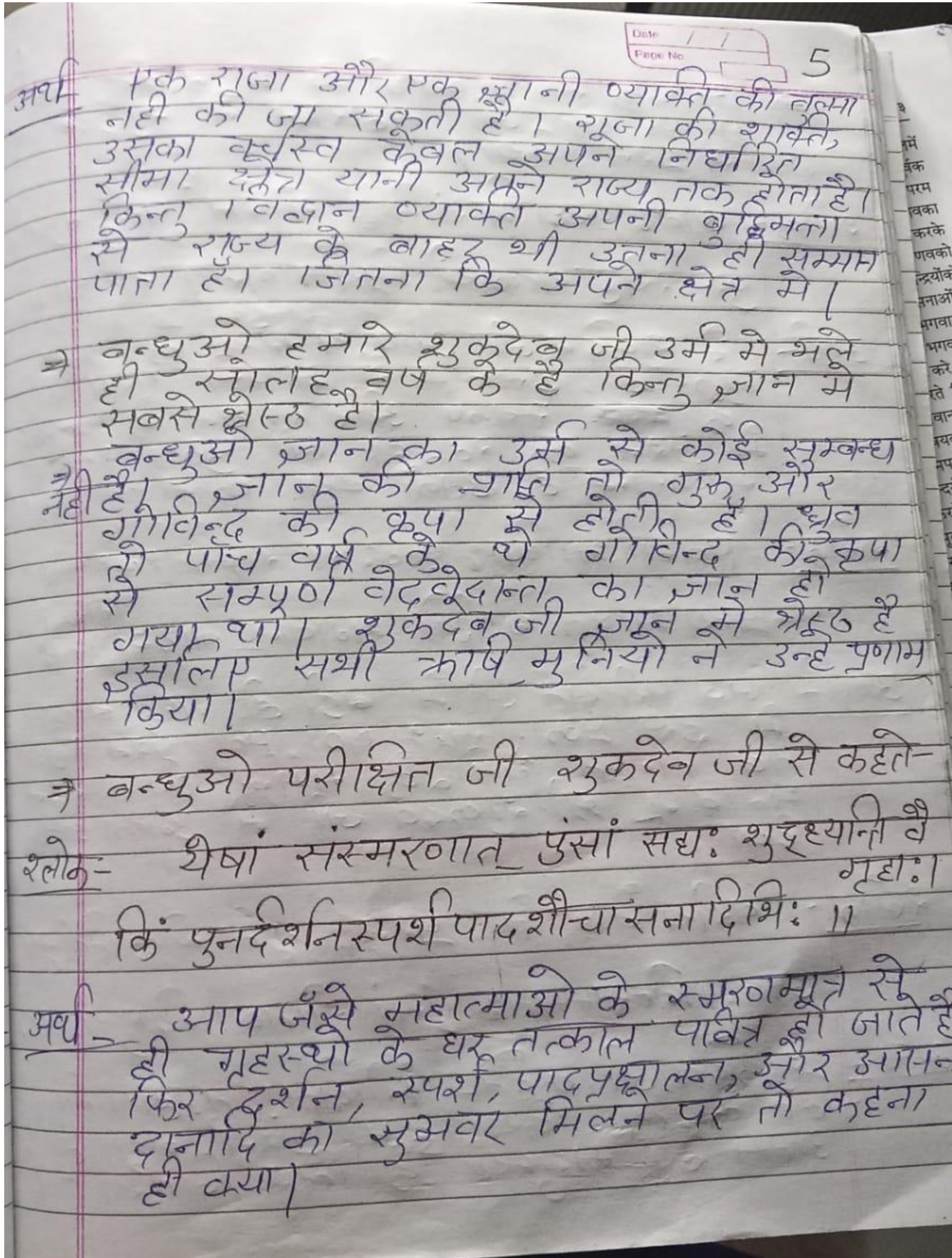
⇒ बन्धुओ गंगा तट पर उपस्थित ऋषि मुनियों से शुकदेव जी की उम्र बहुत कम है। शुकदेव जी मात्र सोलह वर्ष के है।

⇒ किन्तु फिर भी शुकदेव जी को सभी ऋषि मुनि प्रणाम कर रहे है।

श्लोक ⇒ धनवृद्धा बलवृद्धा आयुवृद्धास्तथैव च।
ते सर्वेऽपि ज्ञान वृद्धस्य किंकिरा शिष्य किंकराः

अर्थ- कोई बल मे बड़ा होता, कोई आयु मे बड़ा होता है, कोई धन मे बड़ा होता है, किन्तु जो ज्ञान मे बड़े होते है। वो तो सबसे बड़े होते है।

⇒ विद्वत्वं च नृपत्वं च न एव तुल्ये कदाचन
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते



5

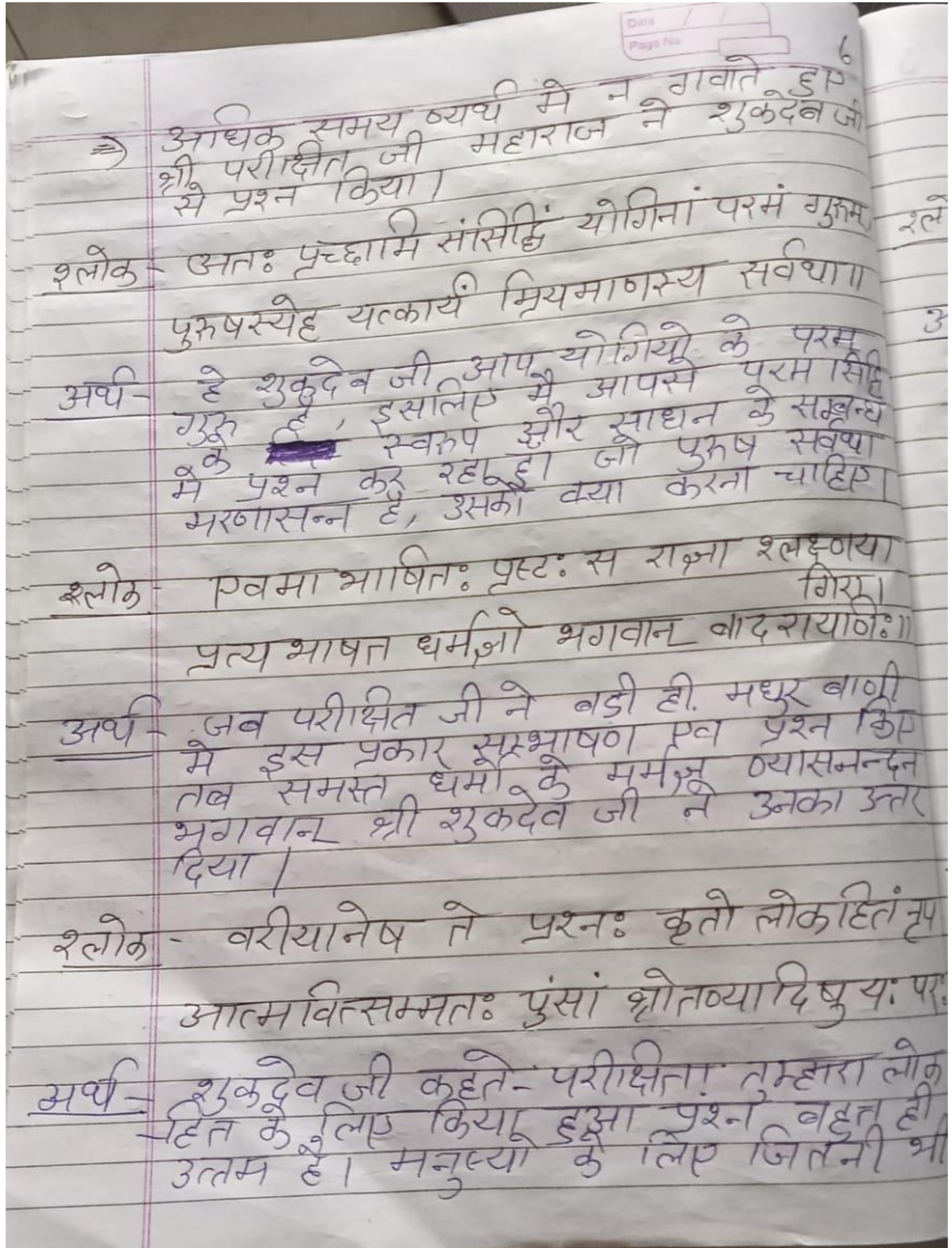
अर्थ- एक राजा और एक ज्ञानी व्यक्ति की तुलना नही की जा सकती है। राजा की शक्ति, उसका वर्चस्व केवल अपने निर्धारित सीमा क्षेत्र यानी अपने राज्य तक होता है। किन्तु विद्वान व्यक्ति अपनी बुद्धिमत्ता से राज्य के बाहर भी उतना ही सम्मान पाता है जितना कि अपने क्षेत्र मे।

→ बन्धुओ हमारे शुकदेव जी उम्र मे भले ही सोलह वर्ष के है किन्तु ज्ञान मे सबसे श्रेष्ठ है।
बन्धुओ ज्ञान का उम्र से कोई सम्बन्ध नही है, ज्ञान की प्राप्ति तो गुरु और गोविन्द की कृपा से होती है। ध्रुव तो पांच वर्ष के थे गोविन्द की कृपा से सम्पूर्ण वेदवेदान्त का ज्ञान हो गया था। शुकदेव जी ज्ञान मे श्रेष्ठ है इसलिए सभी ऋषि मुनियो ने उन्हे प्रणाम किया।

→ बन्धुओ परीक्षित जी शुकदेव जी से कहते-

श्लोक- येषां संस्मरणात् पुंसां सद्यः शुद्ध्यन्ति वै गृहाः।
किं पुनर्दर्शनस्पर्शपादशौचासनादिभिः ॥

अर्थ- आप जैसे महात्माओ के स्मरणमात्र से ही गृहस्थो के घर तत्काल पवित्र हो जाते है फिर दर्शन, स्पर्श, पादप्रक्षालन, और आसन दानादि का सुअवसर मिलने पर तो कहना ही क्या।



6

⇒ अधिक समय व्यर्थ मे न गवाते हुए श्री परीक्षित जी महाराज ने शुकदेव जी से प्रश्न किया।

श्लोक- अतः पृच्छामि संसिद्धिं योगिनां परमं गुरुम्।
पुरुषस्येह यत्कार्यं म्रियमाणस्य सर्वथा॥

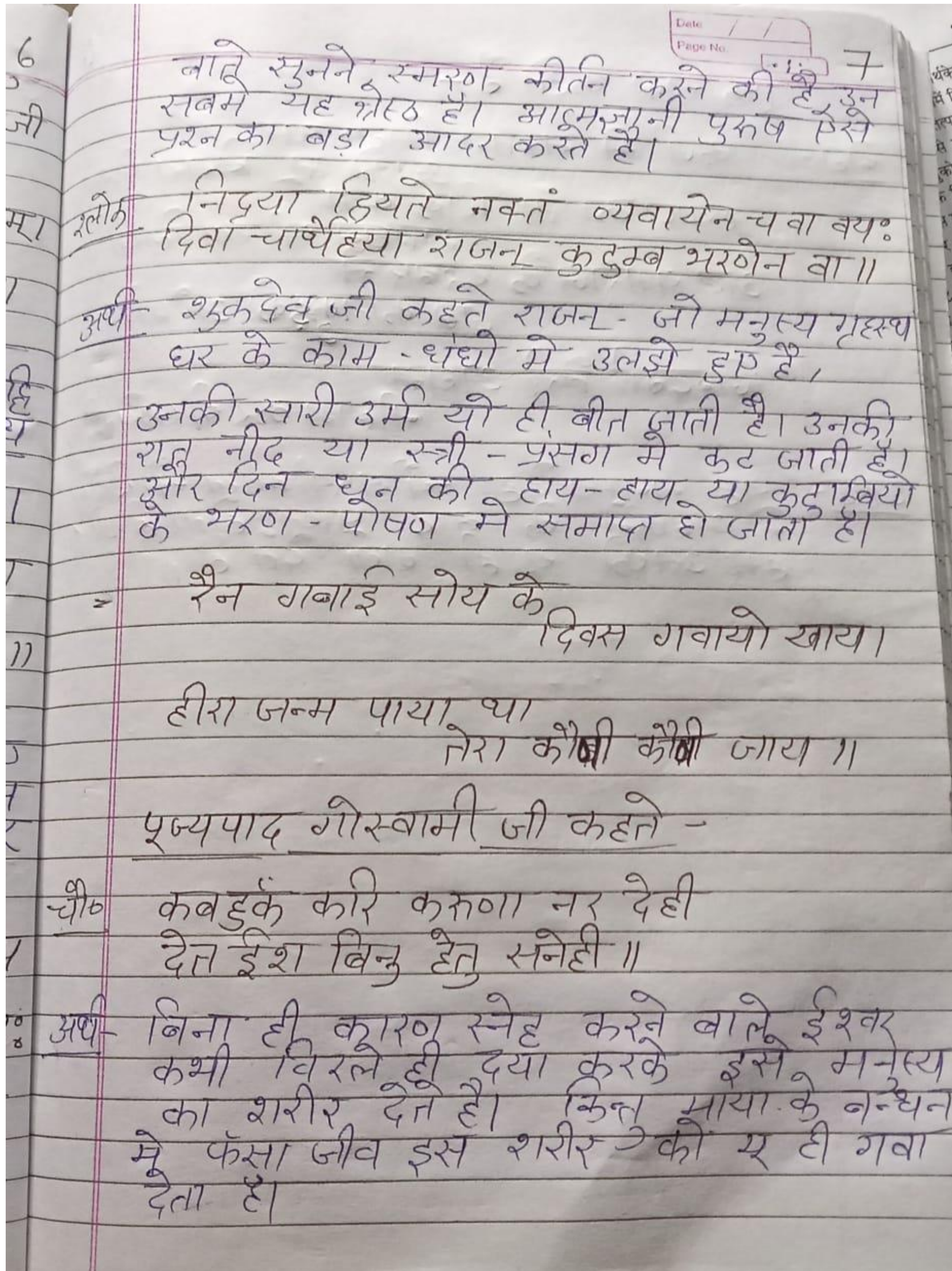
अर्थ- हे शुकदेव जी आप योगियो के परम गुरू हैं, इसलिए मै आपसे परम सिद्धि के स्वरूप और साधन के सम्बन्ध मे प्रश्न कर रहा हूं। जो पुरुष सर्वथा मरणासन्न है, उसको क्या करना चाहिए।

श्लोक- एवमाभाषितः पृष्टः स राज्ञा श्लक्ष्णया गिरा।
प्रत्यभाषत धर्मज्ञो भगवान बादरायणिः॥

अर्थ- जब परीक्षित जी ने बड़ी ही मधुर वाणी मे इस प्रकार सम्भाषण एवं प्रश्न किए तब समस्त धर्मों के मर्मज्ञ व्यासनन्दन भगवान श्री शुकदेव जी ने उनका उत्तर दिया।

श्लोक- वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप।
आत्मवित्सम्मतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः

अर्थ- शुकदेव जी कहते- परीक्षित! तुम्हारा लोक हित के लिए किया हुआ प्रश्न बहुत ही उत्तम है। मनुष्यों के लिए जितनी भी



7

बातें सुनने, स्मरण, कीर्तन करने की हैं, उन सबमे यह श्रेष्ठ है। आत्मज्ञानी पुरुष ऐसे प्रश्न का बड़ा आदर करते हैं।

श्लोक – निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्ब भरणेन वा॥

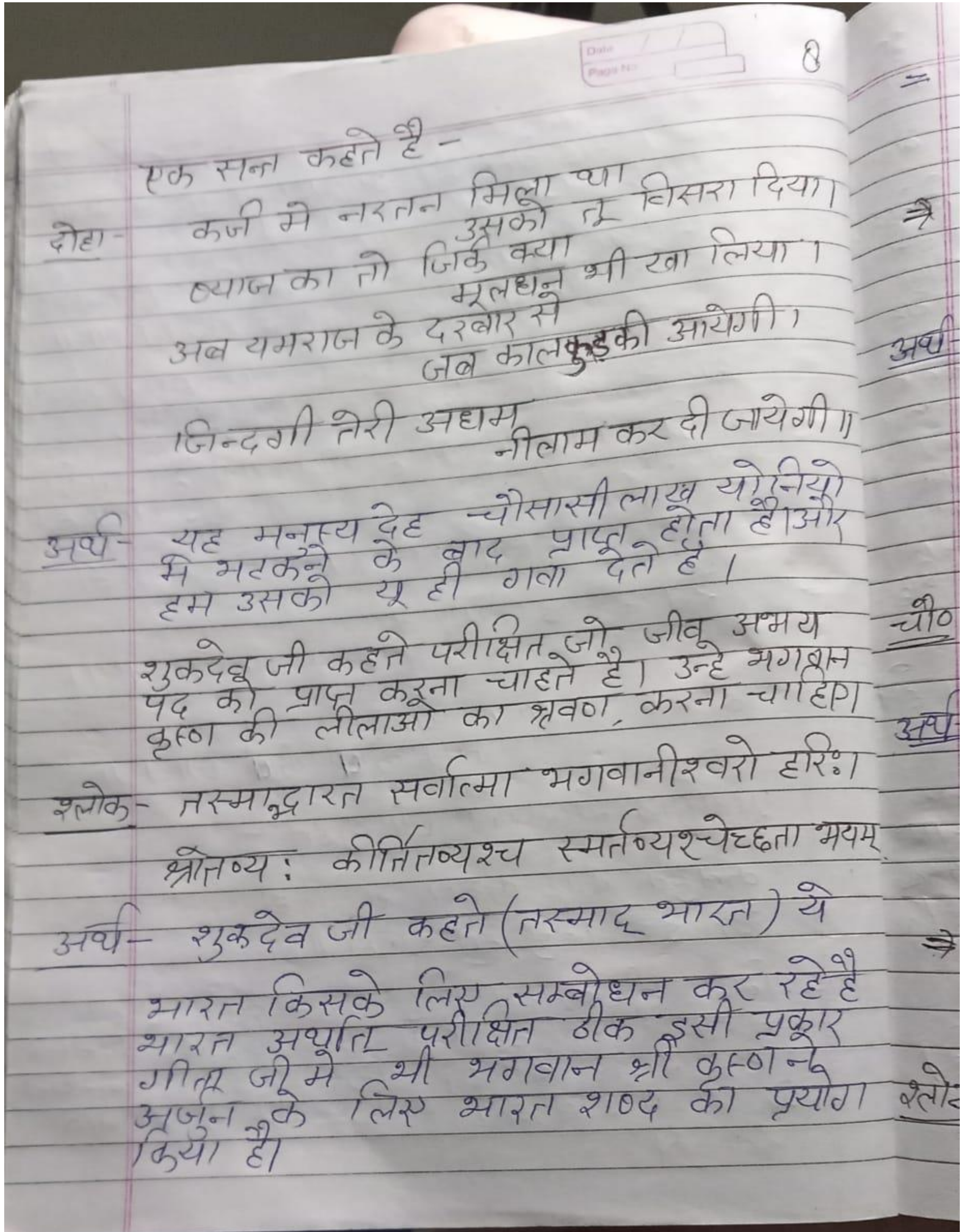
अर्थ – शुकदेव जी कहते राजन – जो मनुष्य गृहस्थ घर के काम-धंधो मे उलझे हुए हैं, उनकी सारी उम्र यों ही बीत जाती है। उनकी रात नींद या स्त्री-प्रसंग मे कट जाती है। और दिन धन की हाय-हाय या कुटुम्बियो के भरण-पोषण मे समाप्त हो जाता है।

रैन गवाई सोय के, दिवस गवायो खाय।
हीरा जन्म पाया था, तेरा कौड़ी कौड़ी जाय॥

पूज्यपाद गोस्वामी जी कहते –

चौ० कबहुंक करि करुणा नर देही
देत ईश बिनु हेतु सनेही॥

अर्थ – बिना ही कारण स्नेह करने वाले ईश्वर कभी विरले ही दया करके इसे मनुष्य का शरीर देते हैं। किन्तु माया के बन्धन मे फँसा जीव इस शरीर को यूं ही गवा देता है।



8

एक सन्त कहते है -

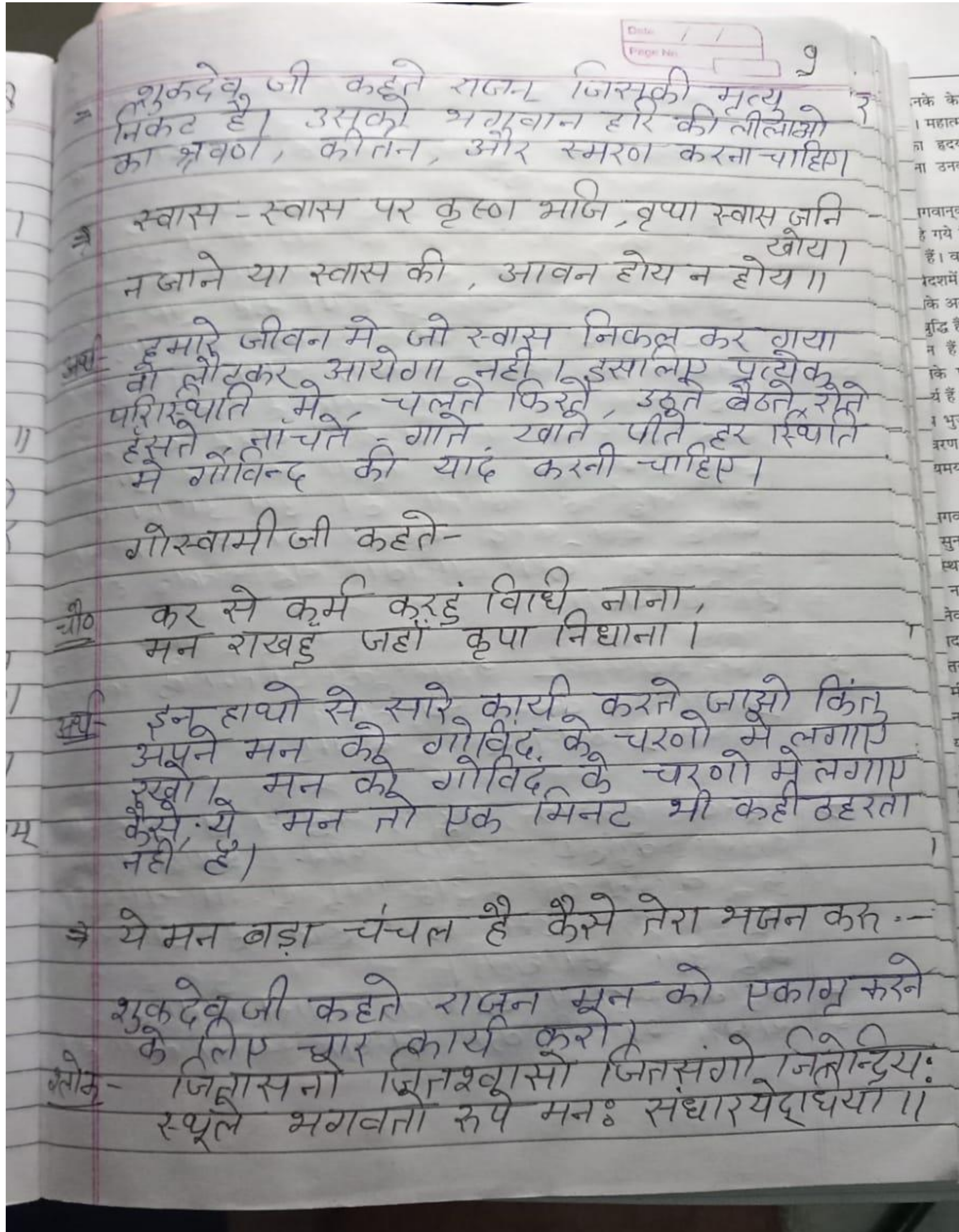
दोहा- कर्जी मे नरतन मिला था उसको तू बिसरा दिया।
ब्याज का तो जिक्र क्या मूलधन भी खा लिया।
अब यमराज के दरबार से जब कालकुर्की आयेगी।
जिन्दगी तेरी अधम नीलाम कर दी जायेगी॥

अर्थ- यह मनुष्य देह चौरासी लाख योनियो मे भटकने के बाद प्राप्त होता है और हम उसको यू ही गवा देते है।

शुकदेव जी कहते परीक्षित जो जीव अभय पद को प्राप्त करना चाहते है। उन्हे भगवान कृष्ण की लीलाओ का श्रवण करना चाहिए।

श्लोक- तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छता भयम्

अर्थ- शुकदेव जी कहते (तस्माद भारत) ये भारत किसके लिए सम्बोधन कर रहे है भारत अर्थात परीक्षित ठीक इसी प्रकार गीता जी मे भी भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन के लिए भारत शब्द का प्रयोग किया है



शुकदेव जी कहते राजन जिसकी मृत्यु निकट है। उसको भगवान हरि की लीलाओ का श्रवण, कीर्तन, और स्मरण करना चाहिए।

स्वास - स्वास पर कृष्ण भजि, वृथा स्वास जनि खोय।
न जाने या स्वास की, आवन होय न होय॥

अर्थ- हमारे जीवन मे जो स्वास निकल कर गया वो लौटकर आयेगा नहीं। इसलिए प्रत्येक परिस्थिति मे, चलते फिरते, उठते बैठते, रोते हंसते, नाचते - गाते, खाते पीते हर स्थिति मे गोविन्द की याद करनी चाहिए।

गोस्वामी जी कहते-

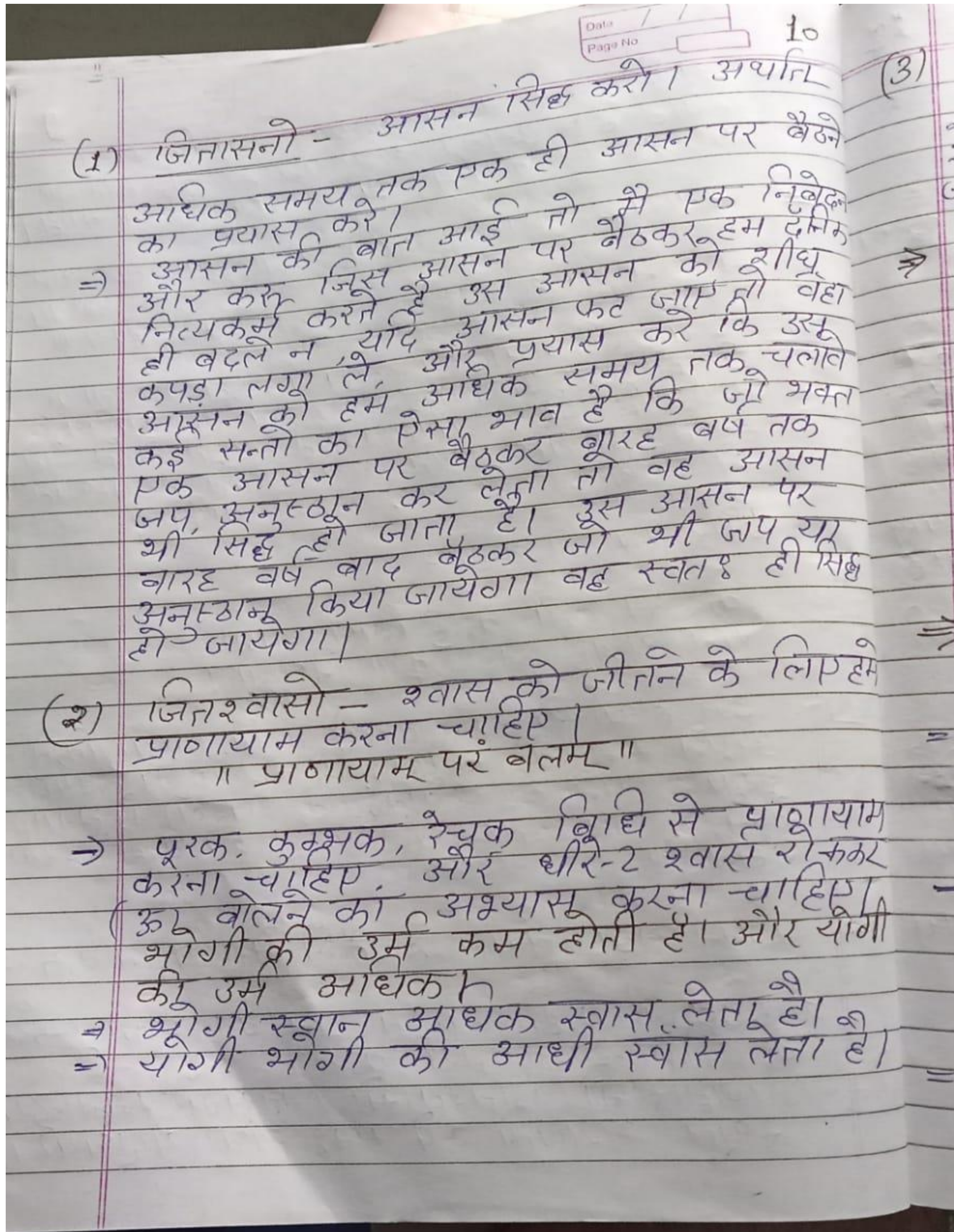
चौ० कर से कर्म करहुं विधि नाना,
मन राखहु जहां कृपा निधाना।

अर्थ- इन हाथो से सारे कार्य करते जाओ किंतु अपने मन को गोविंद के चरणो मे लगाए रखो। मन को गोविंद के चरणो मे लगाए कैसे, ये मन तो एक मिनट भी कही ठहरता नहीं है।

ये मन बड़ा चंचल है कैसे तेरा भजन करु :-

शुकदेव जी कहते राजन मन को एकाग्र करने के लिए चार कार्य करो।

श्लोक- जितासनो जितश्वासो जितसंगो जितेन्द्रियः
स्थूले भगवतो रूपे मनः संधारयेद्धिया॥



Date / / Page No 10 (3)

(1) जितासनो - आसन सिद्ध करो। अर्थात अधिक समय तक एक ही आसन पर बैठने का प्रयास करो।

⇒ आसन की बात आई तो मैं एक निवेदन और करूं जिस आसन पर बैठकर हम दैनिक नित्यकर्म करते हैं उस आसन को शीघ्र ही बदले न, यदि आसन फट जाए तो वहां कपड़ा लगा ले और प्रयास करे कि उस आसन को हम अधिक समय तक चलावें कई सन्तों का ऐसा भाव है कि जो भक्त एक आसन पर बैठकर बारह वर्ष तक जप, अनुष्ठान कर लेता तो वह आसन भी सिद्ध हो जाता है। उस आसन पर बारह वर्ष बाद बैठकर जो भी जप या अनुष्ठान किया जायेगा वह स्वतः ही सिद्ध हो जायेगा।

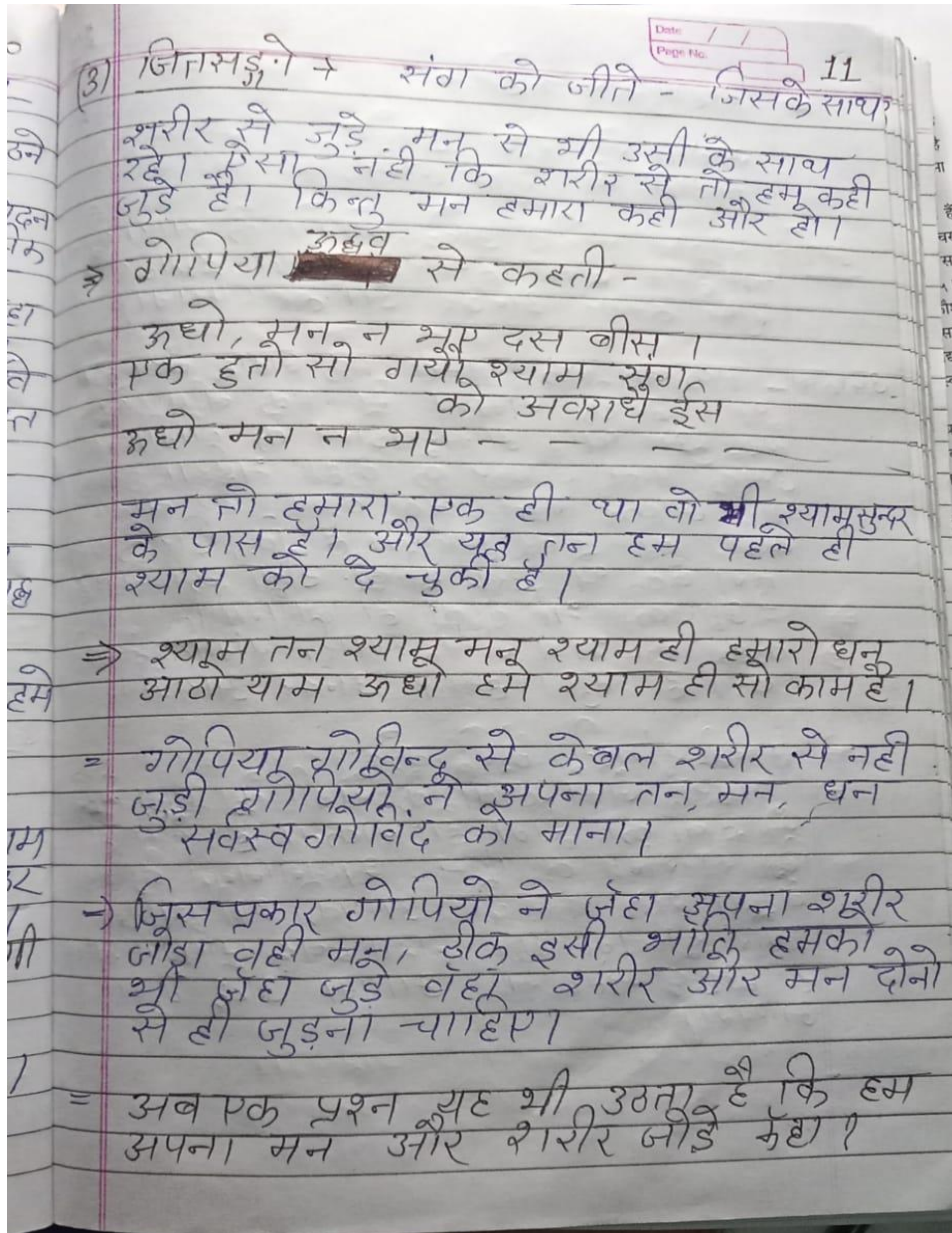
(2) जितश्वासो - श्वास को जीतने के लिए हमें प्राणायाम करना चाहिए।

॥ प्राणायाम परं बलम् ॥

→ पूरक, कुम्भक, रेचक विधि से प्राणायाम करना चाहिए, और धीरे-2 श्वास रोककर (ॐ बोलने का अभ्यास करना चाहिए। भोगी की उम्र कम होती है। और योगी की उम्र अधिक है।

⇒ भोगी स्वान अधिक स्वास लेता है।

⇒ योगी भोगी की आधी स्वास लेता है।



Date / /
Page No. 11

(3) जितसङ्गो → संग को जीते - जिसके साथ शरीर से जुड़े मन से भी उसी के साथ रहो। ऐसा नहीं कि शरीर से तो हम कहीं जुड़े हैं। किन्तु मन हमारा कहीं और हो।

⇒ गोपिया उद्धव से कहती -

ऊधो, मन न भए दस बीस।
एक हुतो सो गयौ श्याम संग,
को अवराधै ईस
ऊधो मन न भए — — —

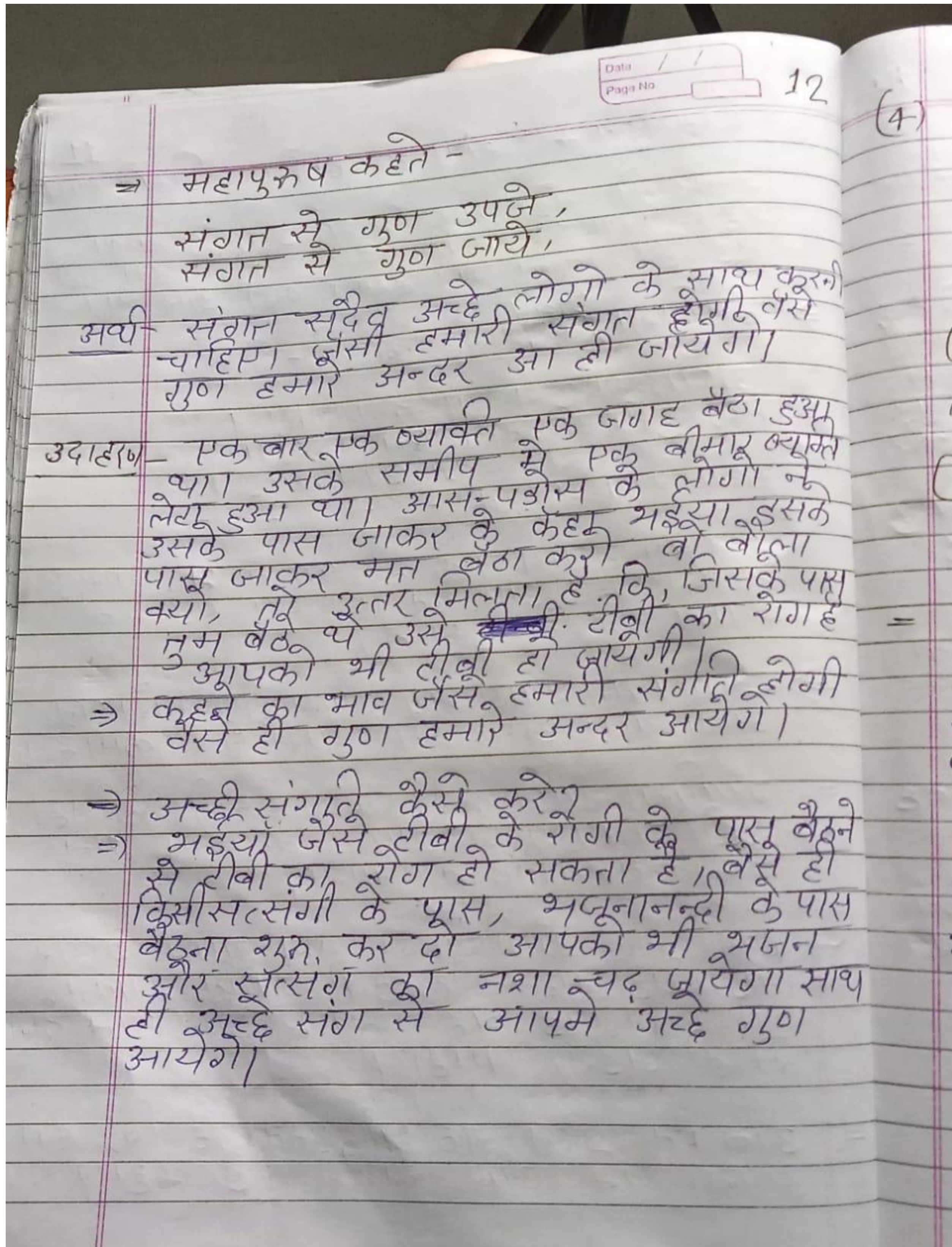
मन तो हमारा एक ही था वो भी श्यामसुन्दर के पास है। और यह तन हम पहले ही श्याम को दे चुकी हैं।

⇒ श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन
आठो याम ऊधो हमे श्याम ही सो काम है।

⇒ गोपिया गोविन्द से केवल शरीर से नहीं जुड़ी गोपियों ने अपना तन, मन, धन सर्वस्व गोविंद को माना।

⇒ जिस प्रकार गोपियो ने जहा अपना शरीर जोड़ा वहीं मन, ठीक इसी भांति हमको भी जहा जुड़े वहा शरीर और मन दोनो से ही जुड़ना चाहिए।

⇒ अब एक प्रश्न यह भी उठता है कि हम अपना मन और शरीर जोड़े कहा?



12 (4)

⇒ महापुरुष कहते -

संगत से गुण उपजे,
संगत से गुण जाये,

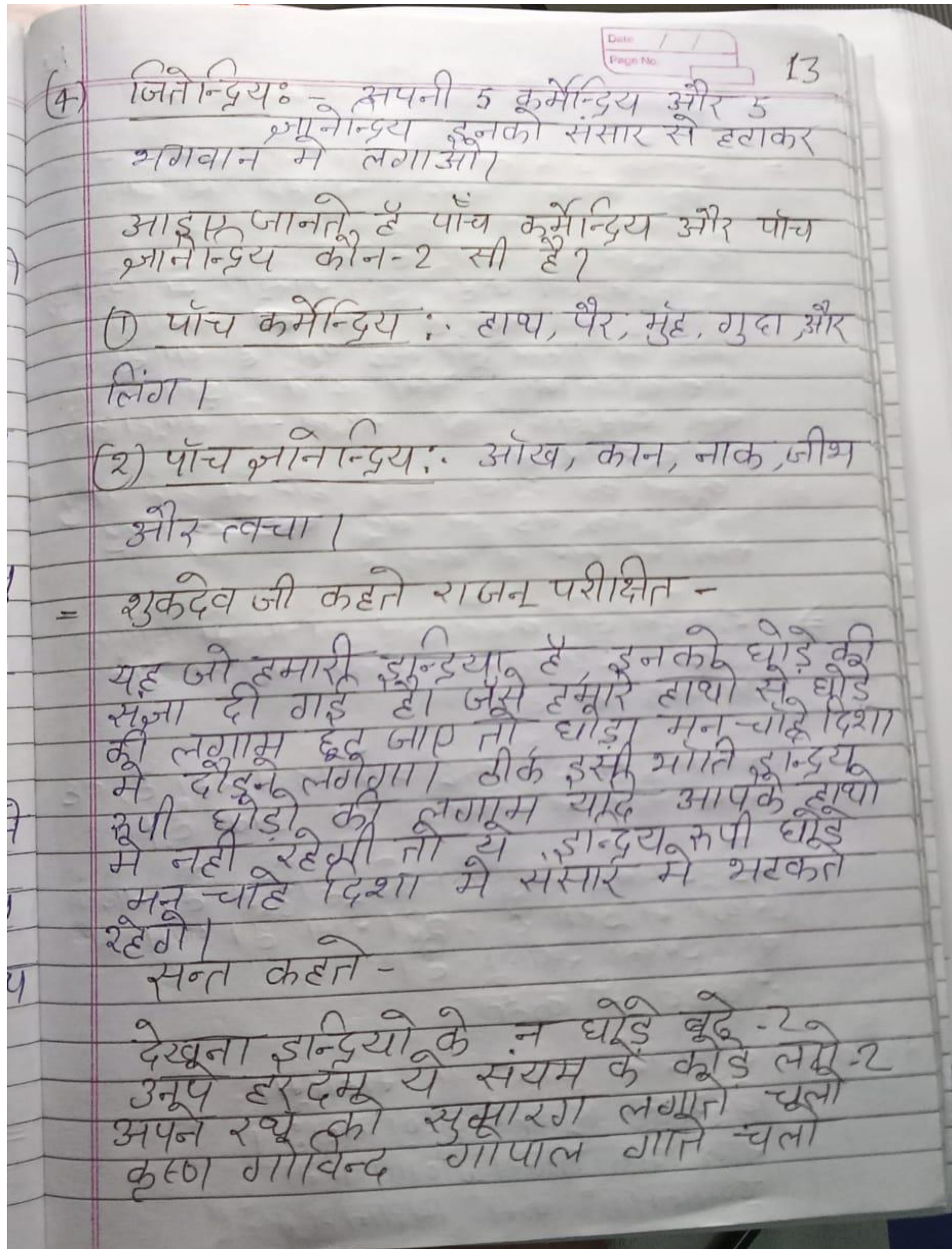
अर्थ- संगत सदैव अच्छे लोगो के साथ करनी चाहिए। जैसी हमारी संगत होगी वैसे गुण हमारे अन्दर आ ही जायेगे।

उदाहरण- एक बार एक व्यक्ति एक जगह बैठा हुआ था। उसके समीप मे एक बीमार व्यक्ति लेटा हुआ था। आस-पड़ोस के लोगो ने उसके पास जाकर के कहा भईया इसके पास जाकर मत बैठा करो वो बोला क्यो, तो उत्तर मिलता है कि, जिसके पास तुम बैठे पे उसे टीबी का रोग है आपको भी टीबी हो जायेगी।

⇒ कहने का भाव जैसी हमारी संगति होगी वैसे ही गुण हमारे अन्दर आयेगे।

⇒ अच्छी संगति कैसे करे?

⇒ भईया जैसे टीबी के रोगी के पास बैठने से टीबी का रोग हो सकता है, वैसे ही किसी सत्संगी के पास, भजनानन्दी के पास बैठना शुरू कर दो आपको भी भजन और सत्संग का नशा चढ़ जायेगा साथ ही अच्छे संग से आपमे अच्छे गुण आयेगे।



13

(4) जितेन्द्रिय: - अपनी 5 कर्मेन्द्रिय और 5 ज्ञानेन्द्रिय इनको संसार से हटाकर भगवान मे लगाओ।

आइए जानते है पाँच कर्मेन्द्रिय और पाँच ज्ञानेन्द्रिय कौन-2 सी है?

(1) पाँच कर्मेन्द्रिय : हाथ, पैर, मुंह, गुदा और लिंग।

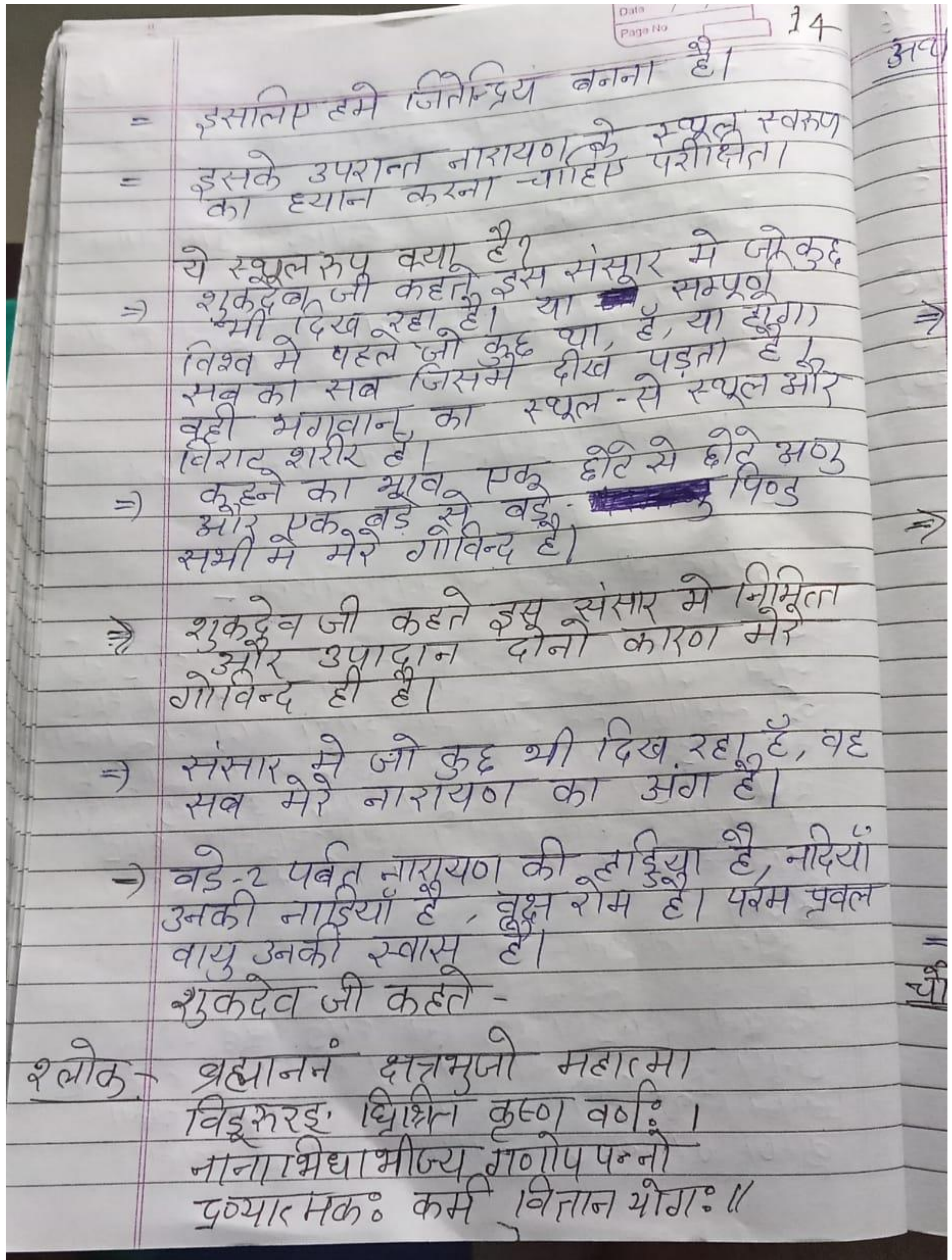
(2) पाँच ज्ञानेन्द्रिय : आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा।

= शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित -

यह जो हमारी इन्द्रिया है इनको घोड़े की संज्ञा दी गई है जैसे हमारे हाथो से घोड़े की लगाम छूट जाए तो घोड़ा मन चाहे दिशा मे दौड़ने लगेगा। ठीक इसी भाँति इन्द्रिय रूपी घोड़ो की लगाम यदि आपके हाथो मे नही रहेगी तो ये इन्द्रिय रूपी घोड़े मन चाहे दिशा मे संसार मे भटकते रहेगे।

सन्त कहते -

देखना इन्द्रियो के न घोड़े छूटे -2
इनपे हर दम ये संयम के कोड़े लगे -2
अपने रथ को सुमारग लगाते चलो
कृष्ण गोविन्द गोपाल गाते चलो



14

= इसलिए हमे जितेन्द्रिय बनना है।

= इसके उपरान्त नारायण के स्थूल स्वरूप का ध्यान करना चाहिए परीक्षित।

ये स्थूल रुप क्या है?

=) शुकदेव जी कहते इस संसार मे जो कुछ भी दिख रहा है या सम्पूर्ण विश्व मे पहले जो कुछ था, है, या होगा, सब का सब जिसमे दीख पड़ता है वही भगवान् का स्थूल-से स्थूल और विराट् शरीर है।

=) कहने का भाव एक छोटे से छोटे अणु और एक बड़े से बड़े पिण्ड सभी मे मेरे गोविन्द है।

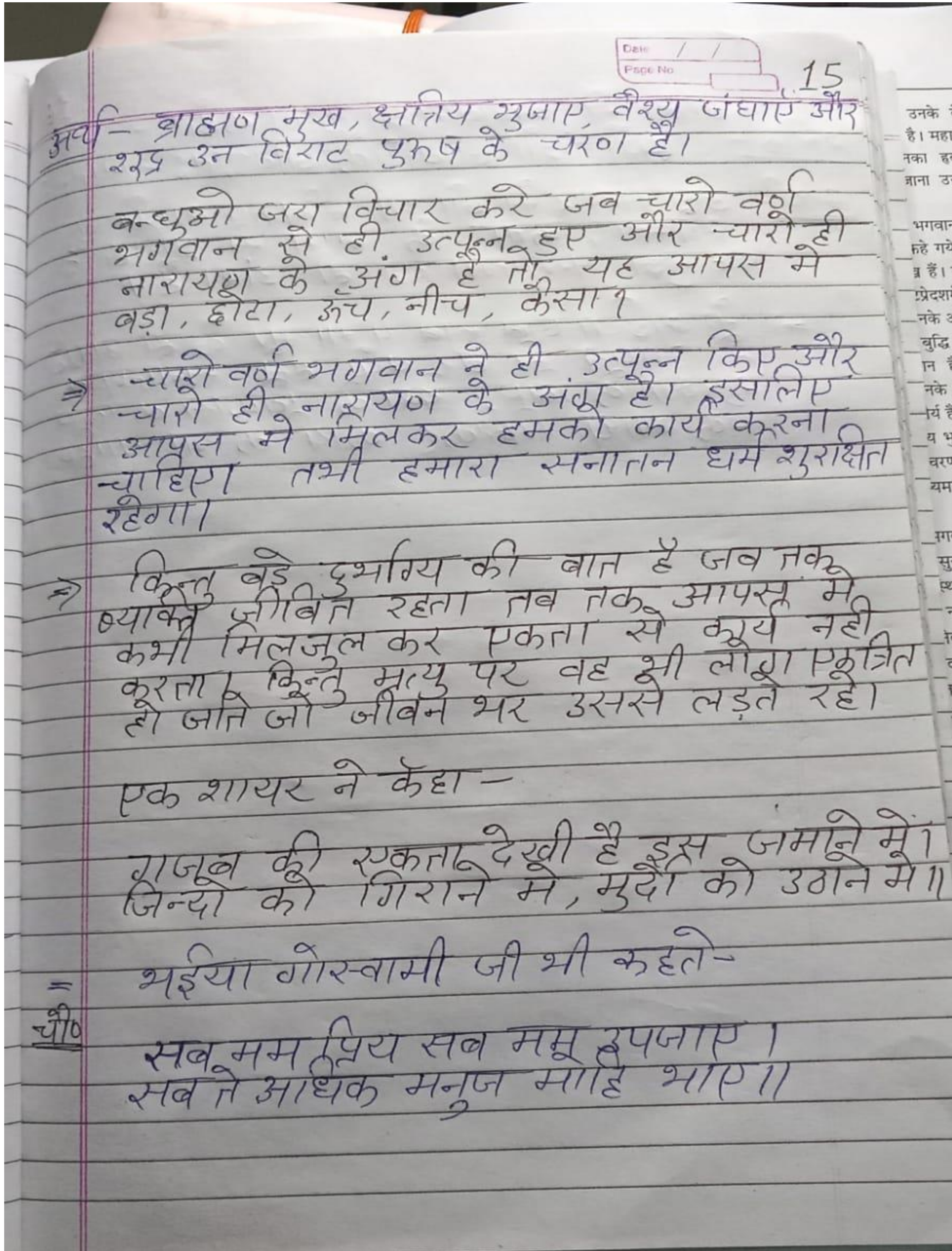
=) शुकदेव जी कहते इस संसार मे निमित्त और उपादान दोनो कारण मेरे गोविन्द ही है।

=) संसार मे जो कुछ भी दिख रहा है, वह सब मेरे नारायण का अंग है।

=) बड़े-२ पर्वत नारायण की हड्डिया है, नदियाँ उनकी नाड़ियाँ है, वृक्ष रोम है। परम प्रबल वायु उनकी स्वास है।

शुकदेव जी कहते -

श्लोक- ब्रह्माननं क्षत्रभुजो महात्मा
विड्रूरङ्घ्रिश्रित कृष्ण वर्णः।
नानाभिधाभीज्य गणोपपन्नो
द्रव्यात्मकः कर्म वितान योगः॥



15

अर्थ- ब्राह्मण मुख, क्षत्रिय भुजाए, वैश्य जंघाएं और शूद्र उन विराट पुरुष के चरण है।

बन्धुओ जरा विचार करे जब चारो वर्ण भगवान से ही उत्पन्न हुए और चारो ही नारायण के अंग है तो यह आपस मे बड़ा, छोटा, ऊंच, नीच, कैसा?

⇒ चारो वर्ण भगवान ने ही उत्पन्न किए और चारो ही नारायण के अंग है। इसलिए आपस मे मिलकर हमको कार्य करना चाहिए तभी हमारा सनातन धर्म सुरक्षित रहेगा।

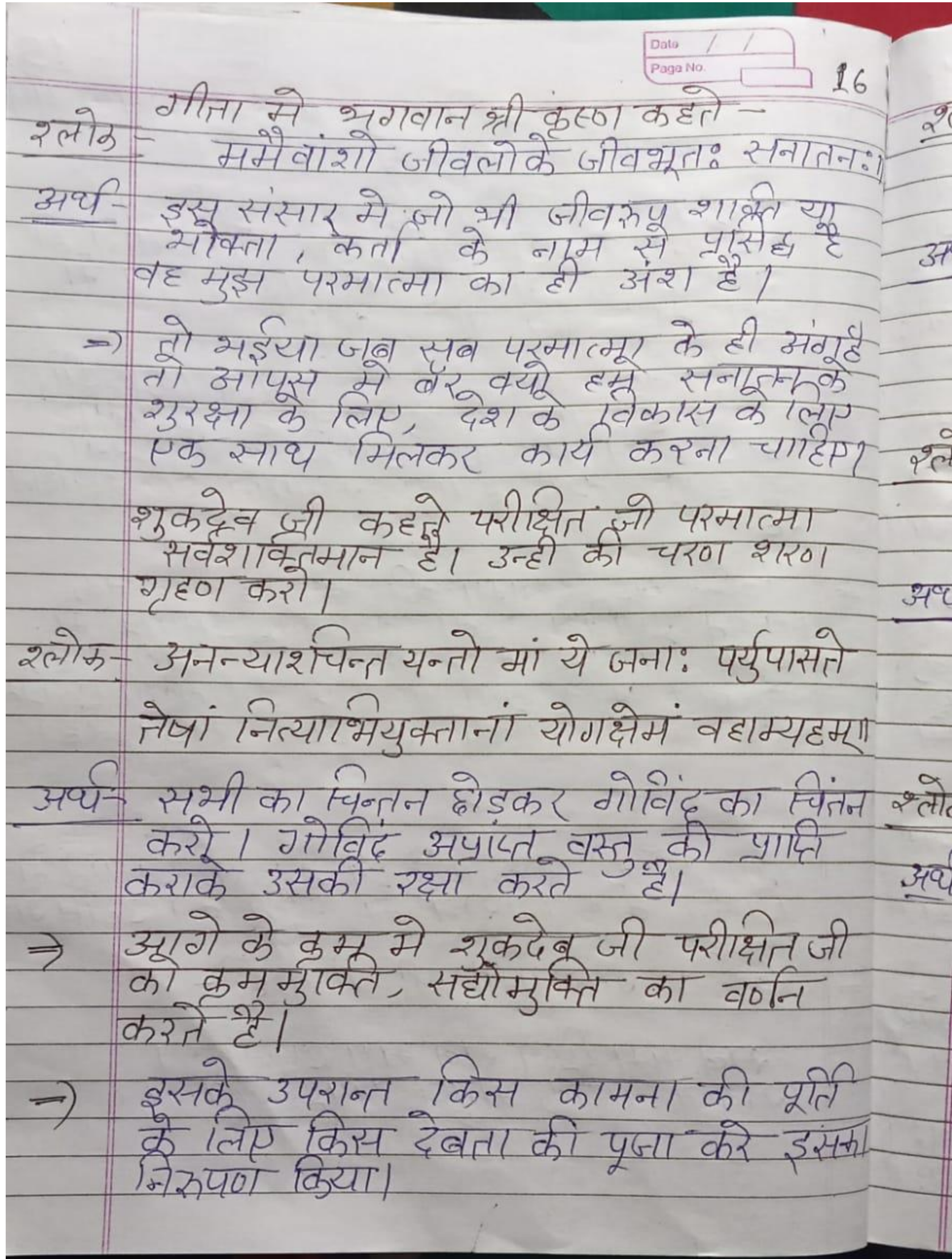
⇒ किन्तु बड़े दुर्भाग्य की बात है जब तक व्यक्ति जीवित रहता तब तक आपस मे कभी मिलजुल कर एकता से कार्य नही करता, किन्तु मृत्यु पर वह भी लोग एकत्रित हो जाते जो जीवन भर उससे लड़ते रहे।

एक शायर ने कहा -

गजब की एकता देखी है इस जमाने में।
जिन्दो को गिराने मे, मुर्दो को उठाने मे।।

= भईया गोस्वामी जी भी कहते-

चौ० सब मम प्रिय सब मम उपजाए।
सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।।


Date / /
Page No. 16

गीता मे भगवान श्री कृष्ण कहते –

श्लोक – ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।

अर्थ – इस संसार मे जो भी जीवरूप शक्ति या भोक्ता, कर्ता के नाम से प्रसिद्ध है वह मुझ परमात्मा का ही अंश है।

=> तो भईया जब सब परमात्मा के ही अंग है तो आपस मे बैर क्यो हम सनातन के सुरक्षा के लिए, देश के विकास के लिए एक साथ मिलकर कार्य करना चाहिए।

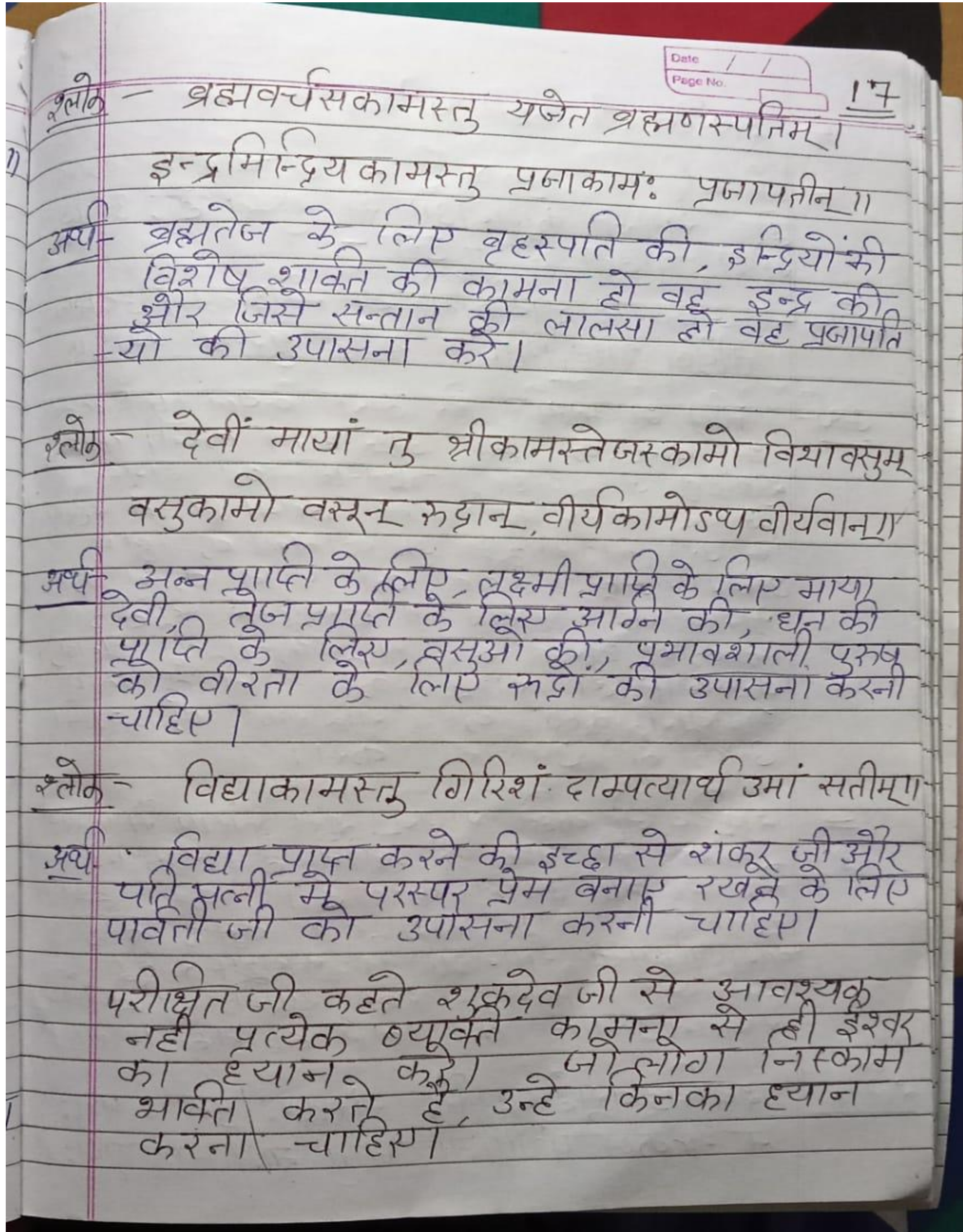
शुकदेव जी कहते परीक्षित जी परमात्मा सर्वशक्तिमान है। उन्ही की चरण शरण ग्रहण करो।

श्लोक – अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

अर्थ – सभी का चिन्तन छोड़कर गोविंद का चिंतन करो। गोविंद अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति कराके उसकी रक्षा करते है।

=> आगे के क्रम मे शुकदेव जी परीक्षित जी को क्रममुक्ति, सद्योमुक्ति का वर्णन करते है।

=> इसके उपरान्त किस कामना की पूर्ति के लिए किस देवता की पूजा करे इसका निरूपण किया।



17

श्लोक - ब्रह्मवर्चसकामस्तु यजेत ब्रह्मणस्पतिम्।
इन्द्रमिन्द्रियकामस्तु प्रजाकामः प्रजापतीन्॥

अर्थ- ब्रह्मतेज के लिए बृहस्पति की, इन्द्रियों की विशेष शक्ति की कामना हो वह इन्द्र की और जिसे सन्तान की लालसा हो वह प्रजापतियो की उपासना करे।

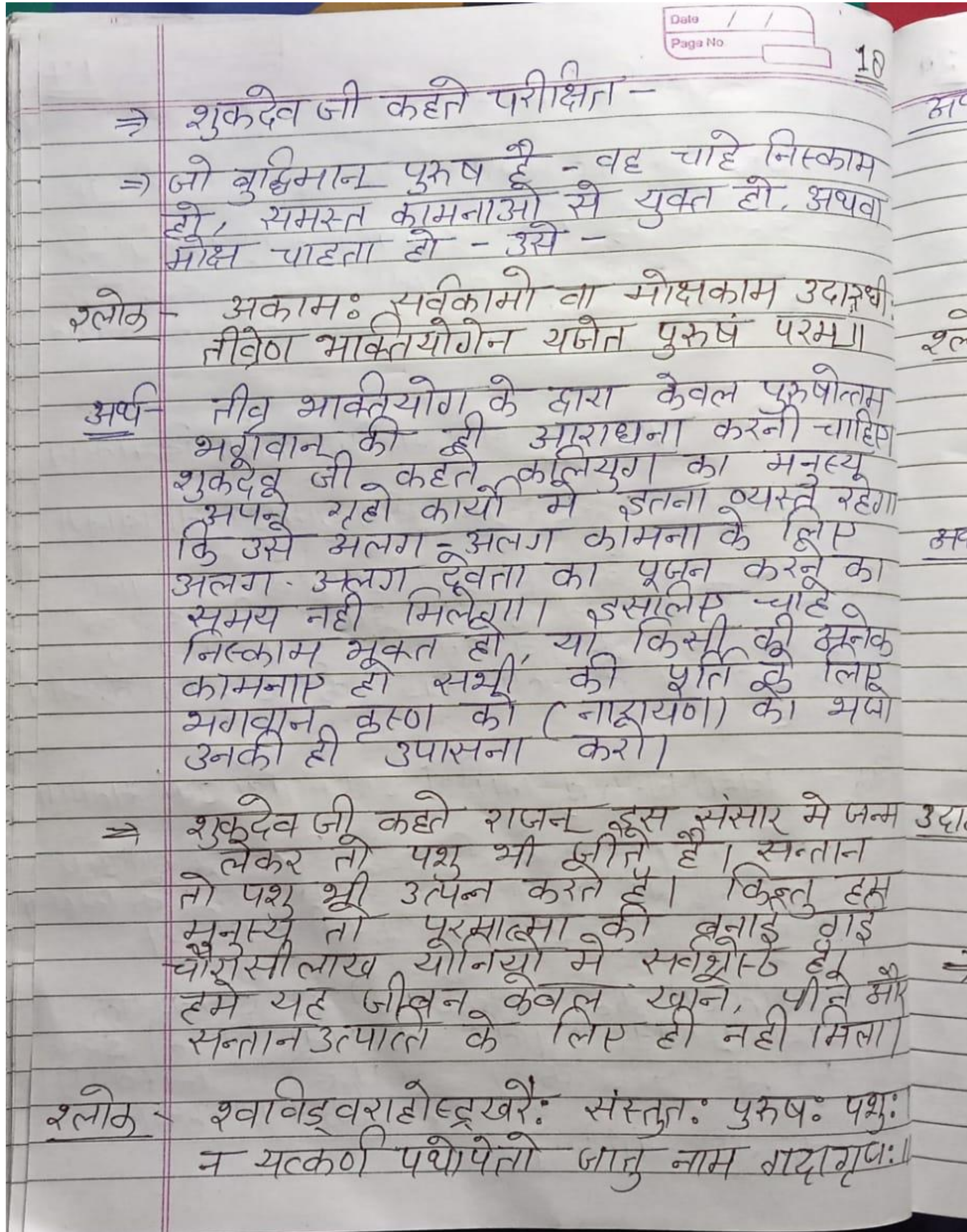
श्लोक - देवीं मायां तु श्रीकामस्तेजस्कामो विभावसुम्
वसुकामो वसून् रुद्रान्, वीर्यकामोऽथ वीर्यवान्॥

अर्थ- अन्न प्राप्ति के लिए, लक्ष्मी प्राप्ति के लिए माया देवी, तेज प्राप्ति के लिए अग्नि की, धन की प्राप्ति के लिए, वसुओ की, प्रभावशाली पुरुष को वीरता के लिए रुद्रो की उपासना करनी चाहिए।

श्लोक - विद्याकामस्तु गिरिशं दाम्पत्यार्थ उमां सतीम्॥

अर्थ: विद्या प्राप्त करने की इच्छा से शंकर जी और पति पत्नी में परस्पर प्रेम बनाए रखने के लिए पार्वती जी को उपासना करनी चाहिए।

परीक्षित जी कहते शुकदेव जी से आवश्यक नहीं प्रत्येक व्यक्ति कामना से ही ईश्वर का ध्यान करे। जो लोग निस्काम भक्ति करते है, उन्हे किनका ध्यान करना चाहिए।



18

⇒ शुकदेव जी कहते परीक्षित –

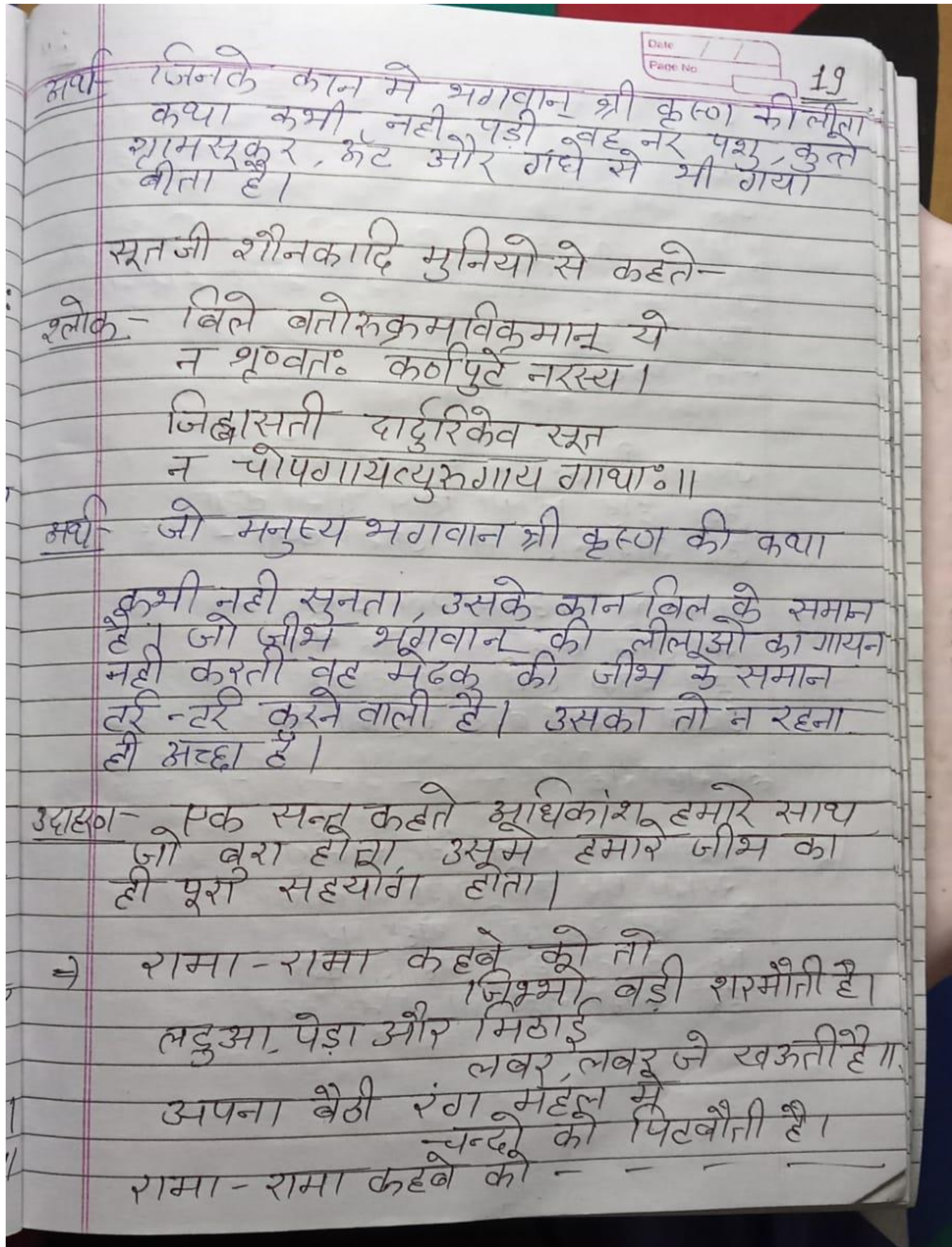
⇒ जो बुद्धिमान पुरुष है – वह चाहे निस्काम हो, समस्त कामनाओ से युक्त हो, अथवा मोक्ष चाहता हो – उसे –

श्लोक – अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम्॥

अर्थ – तीव्र भक्तियोग के द्वारा केवल पुरुषोत्तम भगवान की ही आराधना करनी चाहिए शुकदेव जी कहते कलियुग का मनुष्य अपने गृहो कार्यो मे इतना व्यस्त रहेगा कि उसे अलग-अलग कामना के लिए अलग-अलग देवता का पूजन करने का समय नही मिलेगा। इसलिए चाहे निस्काम भक्त हो, या किसी की अनेक कामनाए हो सभी की पूर्ति के लिए भगवान कृष्ण को (नारायण) को भजो उनकी ही उपासना करो।

⇒ शुकदेव जी कहते राजन इस संसार मे जन्म लेकर तो पशु भी जीते है, सन्तान तो पशु भी उत्पन्न करते है। किन्तु हम मनुष्य तो परमात्मा की बनाई गई चौरासी लाख योनियो मे सर्वश्रेष्ठ है हमे यह जीवन केवल खाने, पीने और सन्तान उत्पत्ति के लिए ही नही मिला।

श्लोक – श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः
न यत्कर्णपथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः॥



19

अर्थ- जिनके कान मे भगवान श्री कृष्ण की लीला कथा कभी नही पड़ी वह नर पशु, कुत्ते ग्रामसूकर, ऊँट और गधे से भी गया बीता है।

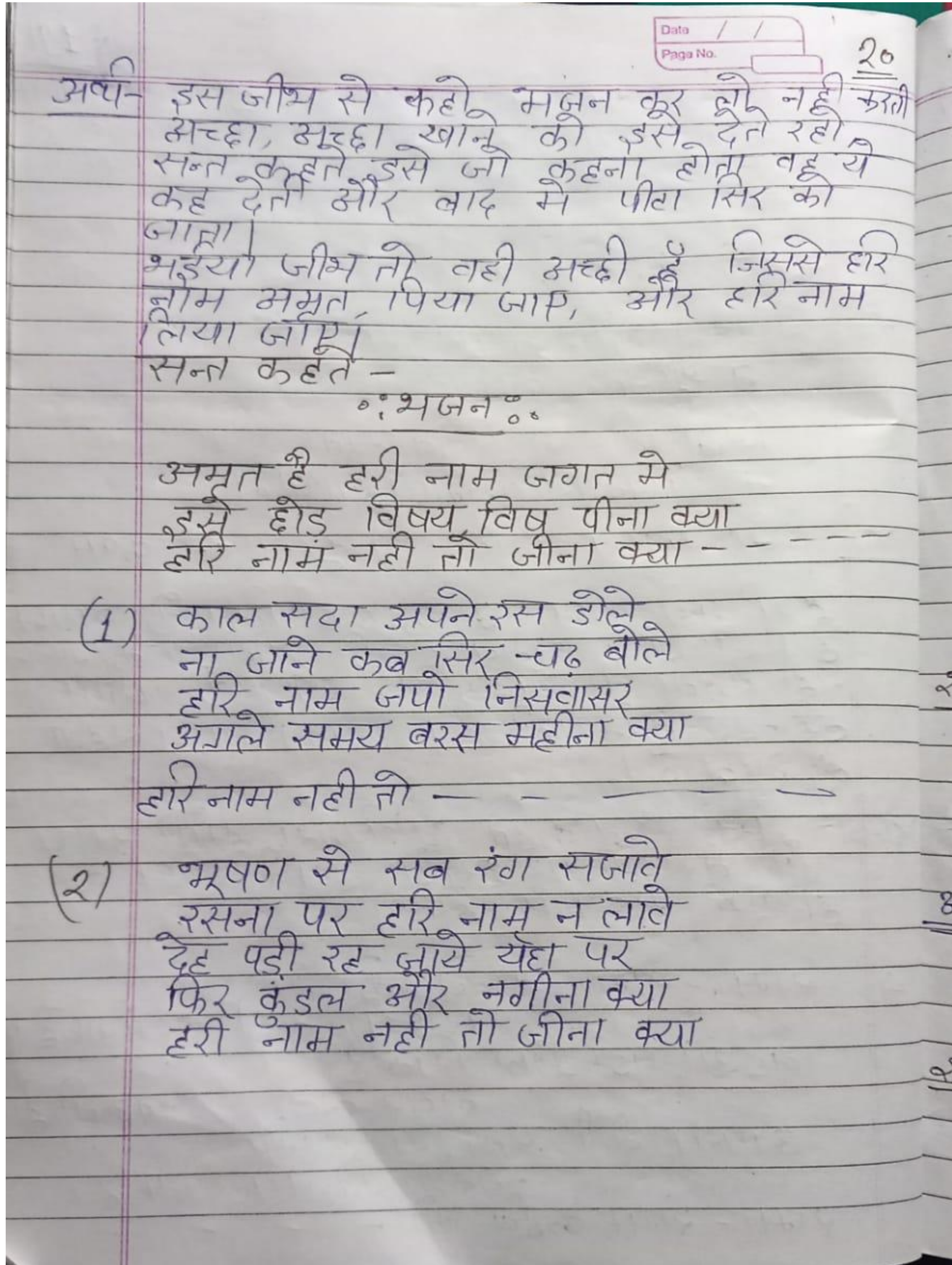
सूतजी शौनकादि मुनियो से कहते-

श्लोक- बिले बतोरुक्रमविक्रमान् ये
न शृण्वतः कर्णपुटे नरस्य।
जिह्वासती दार्दुरिकेव सूत
न चोपगायत्युरुगाय गाथाः॥

अर्थ- जो मनुष्य भगवान श्री कृष्ण की कथा कभी नही सुनता, उसके कान बिल के समान है। जो जीभ भगवान की लीलाओ का गायन नही करती वह मेढक की जीभ के समान टर-टर करने वाली है। उसका तो न रहना ही अच्छा है।

उदाहरण- एक सन्त कहते अधिकांश हमारे साथ जो बुरा होता उसमे हमारे जीभ का ही पूरा सहयोग होता।

→ रामा-रामा कहबे को तो जिभ्भो बड़ी शरमौती है।
लड्डुआ, पेड़ा और मिठाई लबर, लबर जे खऊती है॥
अपना बैठी रंग महल मे चन्दू को पिटवौती है।
रामा-रामा कहबे को - - - -



20

अर्थ- इस जीभ से कहो भजन कर लो नहीं करती अच्छा, अच्छा खाने को इसे देते रहो, सन्त कहते इसे जो कहना होता वह ये कह देती और बाद में पीटा सिर को जाता।
भईया जीभ तो वही अच्छी है जिससे हरि नाम अमृत पिया जाए, और हरि नाम लिया जाए।
सन्त कहते -

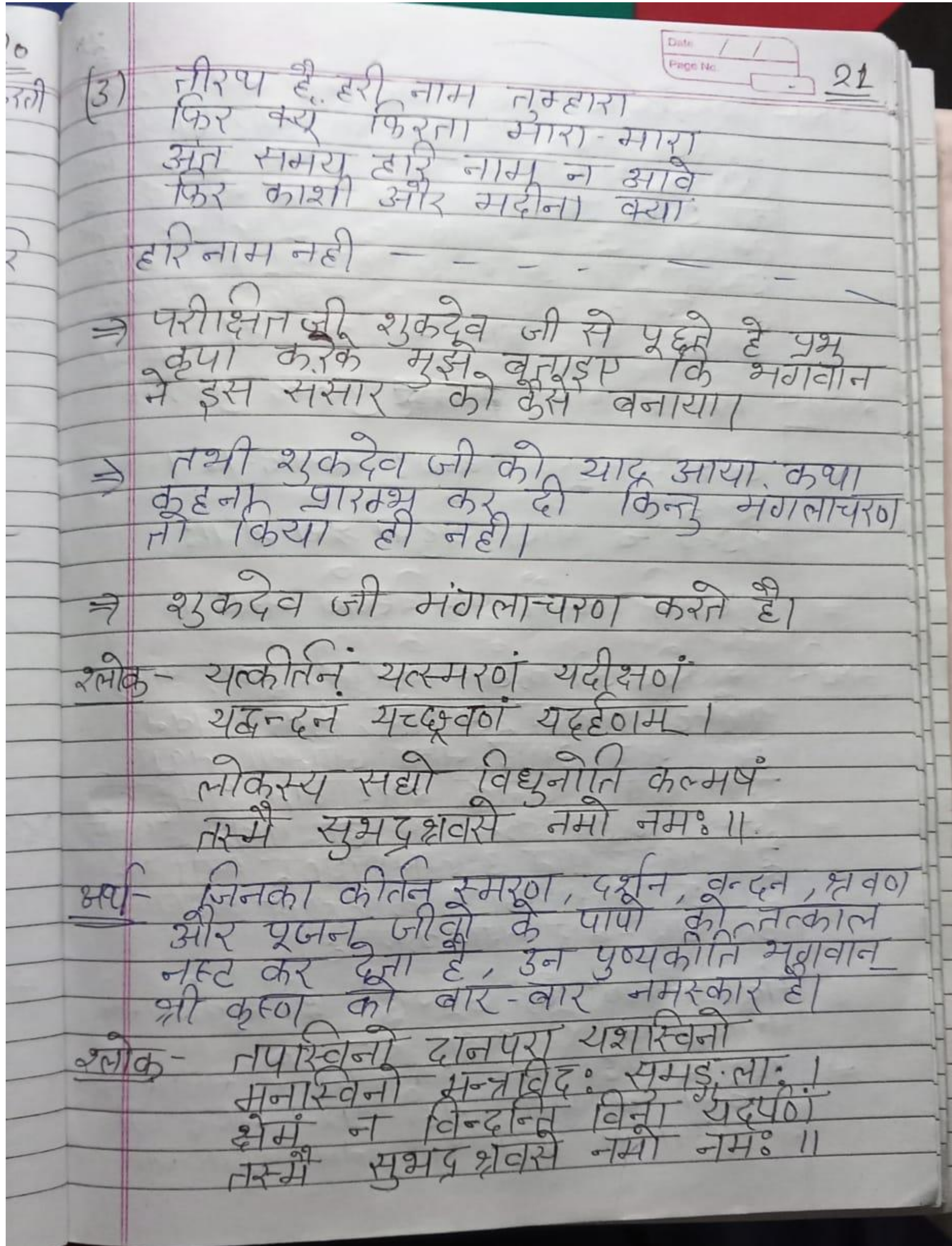
:: भजन ::

अमृत है हरी नाम जगत मे
इसे छोड़ विषय विष पीना क्या
हरि नाम नही तो जीना क्या - - - -

(1) काल सदा अपने रस डोले
ना जाने कब सिर चढ़ बोले
हरि नाम जपो निसवासर
अगले समय बरस महीना क्या

हरि नाम नही तो - - - -

(2) भूषण से सब रंग सजाते
रसना पर हरि नाम न लाते
देह पड़ी रह जाये यहा पर
फिर कुंडल और नगीना क्या
हरी नाम नही तो जीना क्या



21

(3) तीरथ है हरी नाम तुम्हारा
फिर क्यूं फिरता मारा-मारा
अंत समय हरि नाम न आवे
फिर काशी और मदीना क्या

हरि नाम नही — — — —

⇒ परीक्षित जी शुकदेव जी से पूछते है प्रभु कृपा करके मुझे बताइए कि भगवान ने इस संसार को कैसे बनाया।

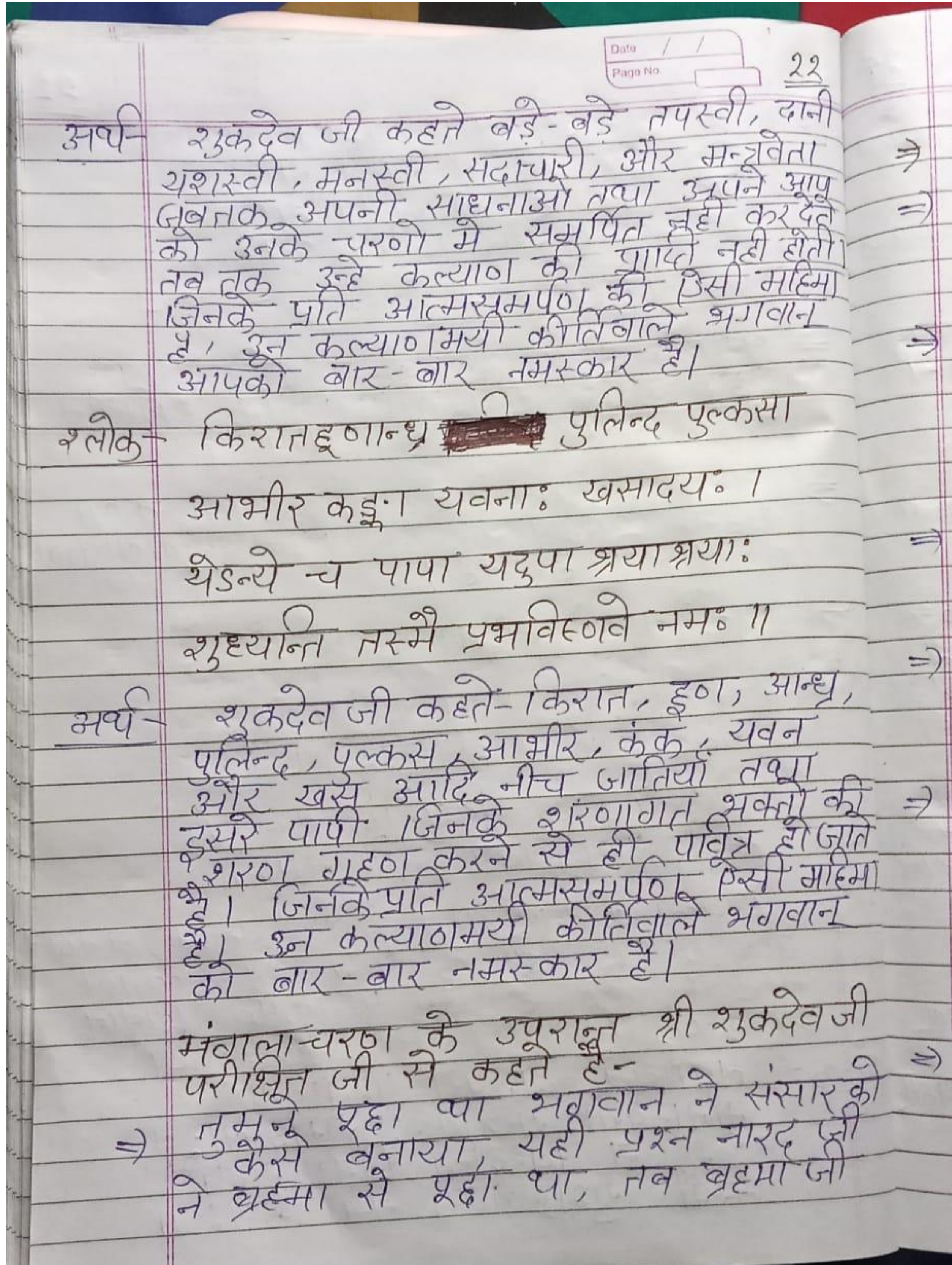
⇒ तभी शुकदेव जी को याद आया कथा कहना प्रारम्भ कर दी किन्तु मंगलाचरण तो किया ही नही।

⇒ शुकदेव जी मंगलाचरण करते है।

श्लोक- यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं
यद्वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् ।
लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥

अर्थ- जिनका कीर्तन स्मरण, दर्शन, वन्दन, श्रवण और पूजन जीवों के पापों को तत्काल नष्ट कर देता है, उन पुण्यकीर्ति भगवान श्री कृष्ण को बार-बार नमस्कार है।

श्लोक- तपस्विनो दानपरा यशस्विनो
मनस्विनो मन्त्रविदः सुमङ्गलाः ।
क्षेमं न विन्दन्ति विना यदर्पणं
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥



Date / /
Page No. 22

अर्थ- शुकदेव जी कहते बड़े-बड़े तपस्वी, दानी यशस्वी, मनस्वी, सदाचारी, और मन्त्रवेता जबतक अपनी साधनाओ तथा अपने आप को उनके चरणो मे समर्पित नही कर देते तब तक उन्हे कल्याण की प्राप्ति नही होती। जिनके प्रति आत्मसमर्पण की ऐसी महिमा है, उन कल्याणमयी कीर्तिवाले भगवान आपको बार-बार नमस्कार है।

श्लोक- किरातहूणान्ध्र पुलिन्द पुल्कसा

आभीर कङ्का यवनाः खसादयः ।

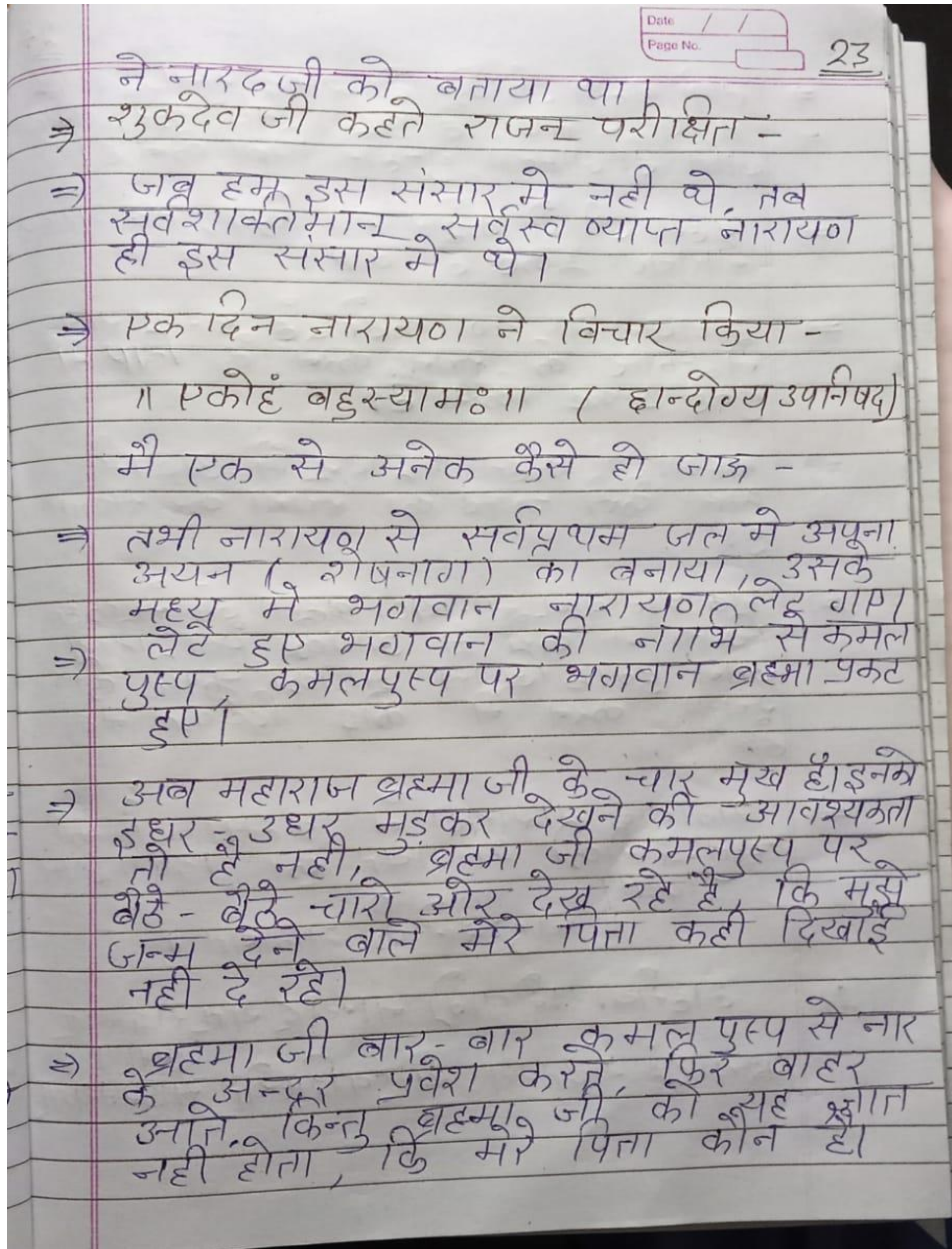
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः

शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥

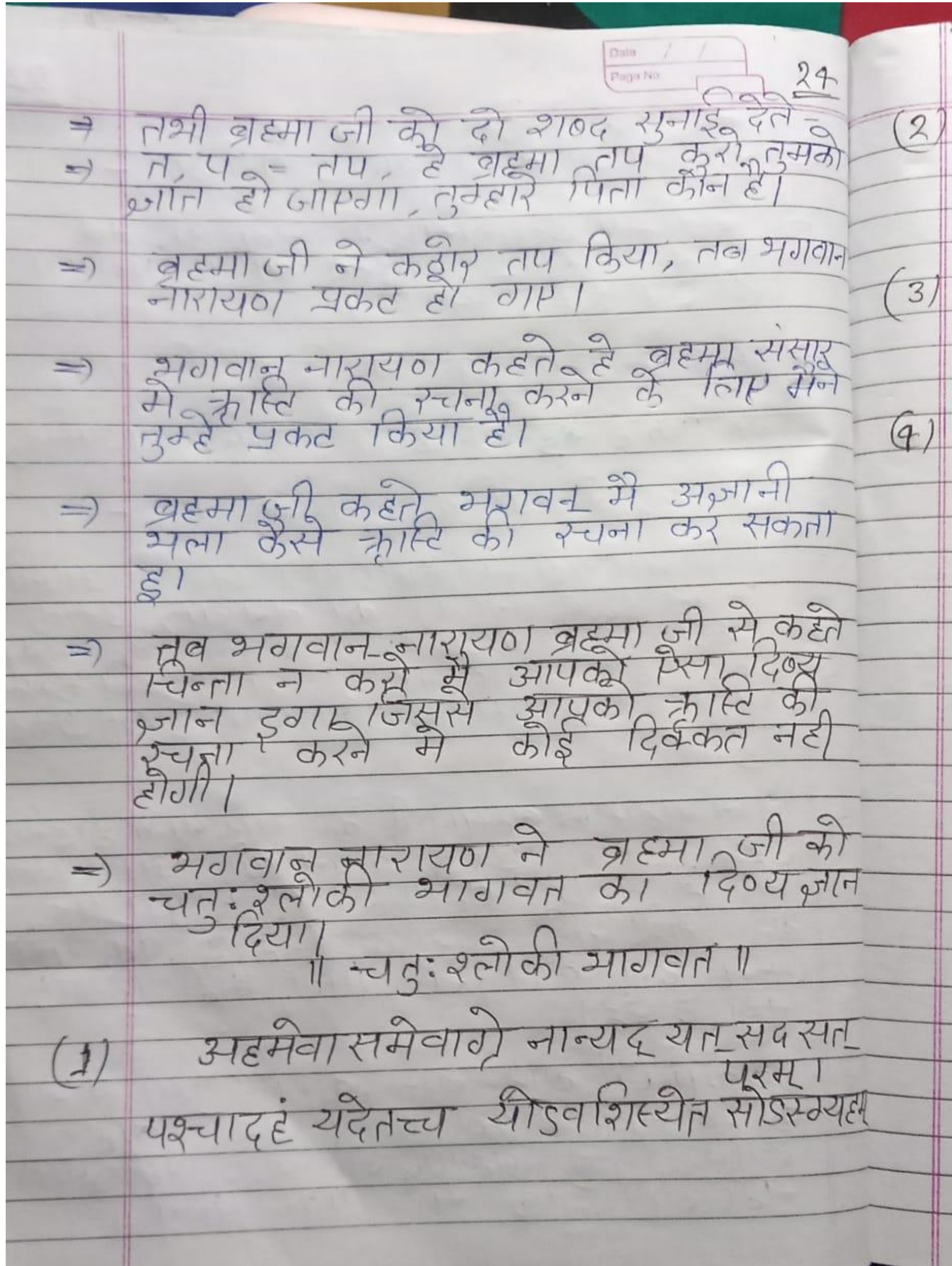
अर्थ- शुकदेव जी कहते- किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, कंक, यवन और खस आदि नीच जातियाँ तथा दूसरे पापी जिनके शरणागत भक्तो की शरण ग्रहण करने से ही पवित्र हो जाते है। जिनके प्रति आत्मसमर्पण ऐसी महिमा है, उन कल्याणमयी कीर्तिवाले भगवान को बार-बार नमस्कार है।

मंगलाचरण के उपरान्त श्री शुकदेव जी परीक्षित जी से कहते है-

⇒ तुमने पूछा था भगवान ने संसार को कैसे बनाया, यही प्रश्न नारद जी ने ब्रह्मा से पूछा था, तब ब्रह्मा जी



ने नारदजी को बताया था।
⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित -
⇒ जब हम इस संसार मे नही थे, तब सर्वशक्तिमान, सर्वस्व व्याप्त नारायण ही इस संसार मे थे।
⇒ एक दिन नारायण ने विचार किया -
॥ एकोहं बहुस्यामः॥ (छान्दोग्य उपनिषद)
मै एक से अनेक कैसे हो जाऊ -
⇒ तभी नारायण से सर्वप्रथम जल मे अपना अयन (शेषनाग) को बनाया, उसके मध्य मे भगवान नारायण लेट गए।
⇒ लेटे हुए भगवान की नाभि से कमल पुष्प, कमलपुष्प पर भगवान ब्रह्मा प्रकट हुए।
⇒ अब महाराज ब्रह्मा जी के चार मुख है। इनको इधर-उधर मुड़कर देखने की आवश्यकता तो है नही, ब्रह्मा जी कमलपुष्प पर बैठे-बैठे चारो और देख रहे है, कि मुझे जन्म देने वाले मेरे पिता कही दिखाई नही दे रहे।
⇒ ब्रह्मा जी बार-बार कमल पुष्प से नाल के अन्दर प्रवेश करते, फिर बाहर आते, किन्तु ब्रह्मा जी को यह ज्ञात नही होता, कि मेरे पिता कौन है।



24

⇒ तभी ब्रह्मा जी को दो शब्द सुनाई देते - (2)

⇒ त, प = तप, हे ब्रह्मा तप करो तुमको ज्ञात हो जाएगा, तुम्हारे पिता कौन है।

⇒ ब्रह्मा जी ने कठोर तप किया, तब भगवान नारायण प्रकट हो गए। (3)

⇒ भगवान नारायण कहते हे ब्रह्मा संसार मे सृष्टि की रचना करने के लिए मैंने तुम्हे प्रकट किया है। (4)

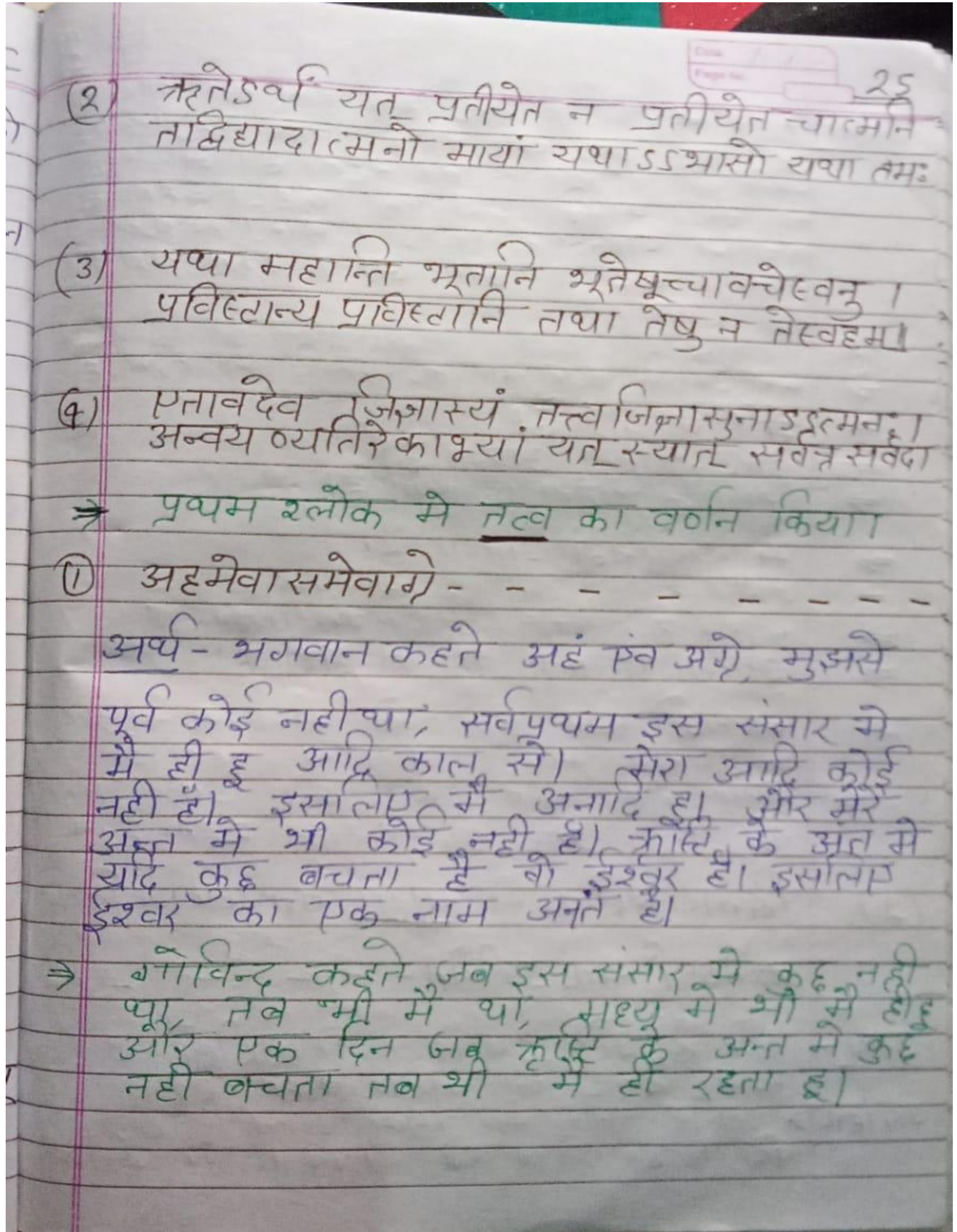
⇒ ब्रह्मा जी कहते भगवन मै अज्ञानी भला कैसे सृष्टि की रचना कर सकता हूँ।

⇒ तब भगवान नारायण ब्रह्मा जी से कहते चिन्ता न करो मै आपको ऐसा दिव्य ज्ञान दूंगा जिससे आपको सृष्टि की रचना करने मे कोई दिक्कत नही होगी।

⇒ भगवान नारायण ने ब्रह्मा जी को चतुःश्लोकी भागवत का दिव्य ज्ञान दिया।

॥ चतुःश्लोकी भागवत ॥

(1) अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परम्।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम्



(2) ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः

(3) यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्य प्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ।

(4) एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः ।
अन्वय व्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा

⇒ प्रथम श्लोक मे तत्व का वर्णन किया।

(1) अहमेवासमेवाग्रे - - - - - - -

अर्थ- भगवान कहते अहं एव अग्रे मुझसे पूर्व कोई नही था, सर्वप्रथम इस संसार मे मै ही हु आदि काल से। मेरा आदि कोई नही है, इसलिए मै अनादि हु। और मेरे अन्त मे भी कोई नही है। सृष्टि के अंत मे यदि कुछ बचता है वो ईश्वर है। इसलिए ईश्वर का एक नाम अनंत है।

⇒ गोविन्द कहते जब इस संसार मे कुछ नही था, तब भी मै था, मध्य मे भी मै होहु और एक दिन जब सृष्टि के अन्त मे कुछ नही बचता तब भी मै ही रहता हु।

Date / /
Page No. 26

उदाहरण→ मान लीजिए कोई एक वर्ष का बालक है, वह एक वर्ष से ही, मैने यह किया, मैने वो किया कहता रहता है और यह मै, मै मरते दम तक कहता रहता है। बचपन निकल जाता, जवानी निकल जाती, बुढ़ापा आ जाता किंतु यह मै नही जाता।

⇒ बन्धुओ जरा विचार करिए ये मै कौन है?
⇒ मै (आत्मा) है।
⇒ व्यष्टि चेतना आत्मा है।
⇒ समष्टि चेतना परमात्मा है।

⇒ मै शरीर नही आत्मा है।
⇒ शरीर को जो चलावे, वो आत्मा
⇒ जगत को जो चलावे, सो परमात्मा
⇒ आत्मा परमात्मा का ही अंश है।

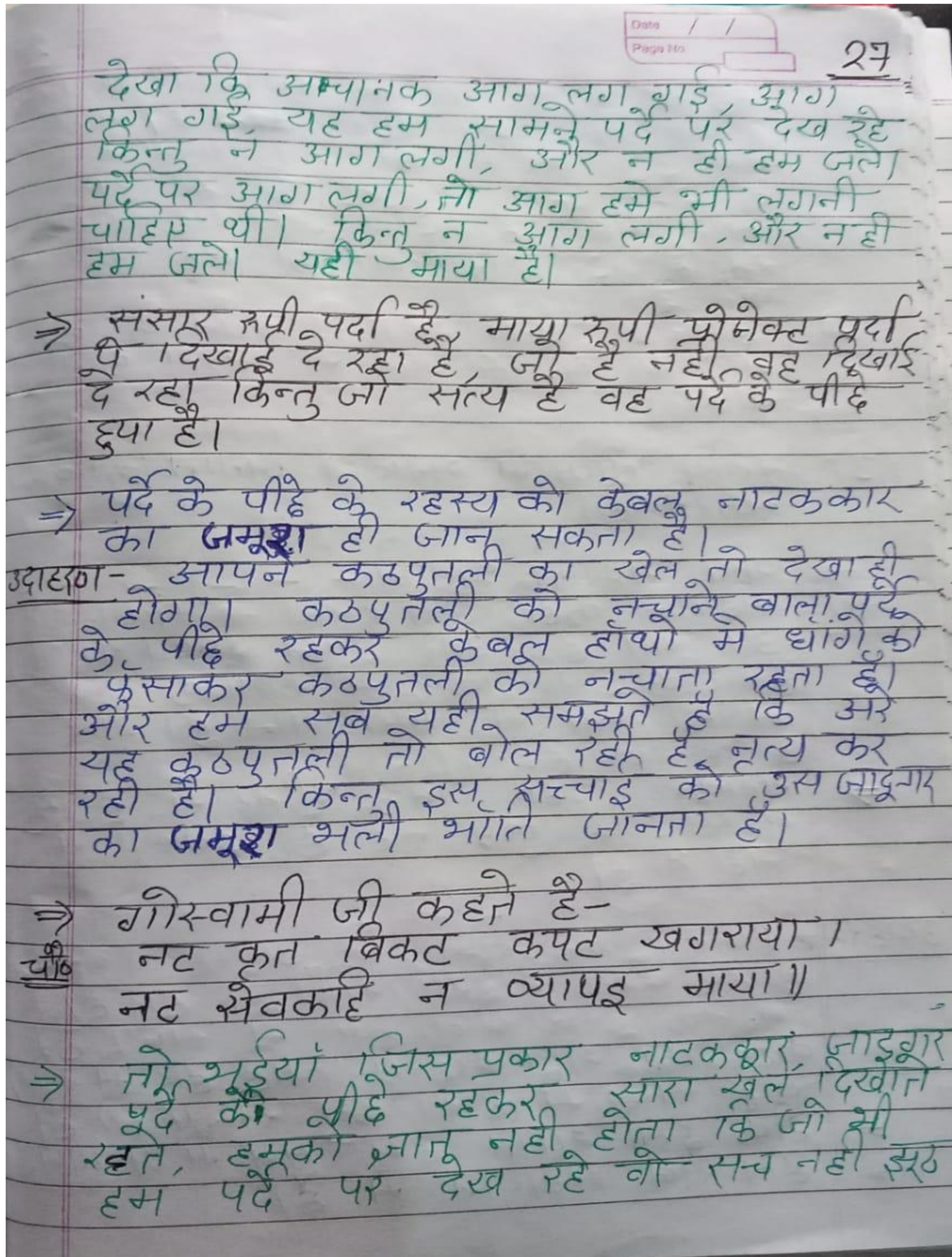
→ बन्धुओ जिस प्रकार से मै जन्म से मृत्यु तक नही जाता, जन्म से पहले और मृत्यु तक रहता, ठीक इसी प्रकार परमात्मा पूर्व, मध्य और अन्त सदैव रहता है।

(2) द्वितीय श्लोक मे माया का वर्णन किया

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत - - - - - -

अर्थ- जो है उसे छुपाले, जो नही है उसे दिखा दे, उसको माया कहते है।

उदाहरण→ सिनेमा घर मे पिक्चर चल रही, पर्दे पर हम देख रहे, पिक्चर मे हमने



27

देखा कि अचानक आग लग गई, आग लग गई, यह हम सामने पर्दे पर देख रहे किन्तु न आग लगी, और न ही हम जले। पर्दे पर आग लगी, तो आग हमे भी लगनी चाहिए थी। किन्तु न आग लगी, और न ही हम जले। यही माया है।

⇒ संसार रूपी पर्दा है, माया रूपी प्रोजेक्ट पर्दा पे दिखाई दे रहा है, जो है नहीं वह दिखाई दे रहा किन्तु जो सत्य है वह पर्दे के पीछे छुपा है।

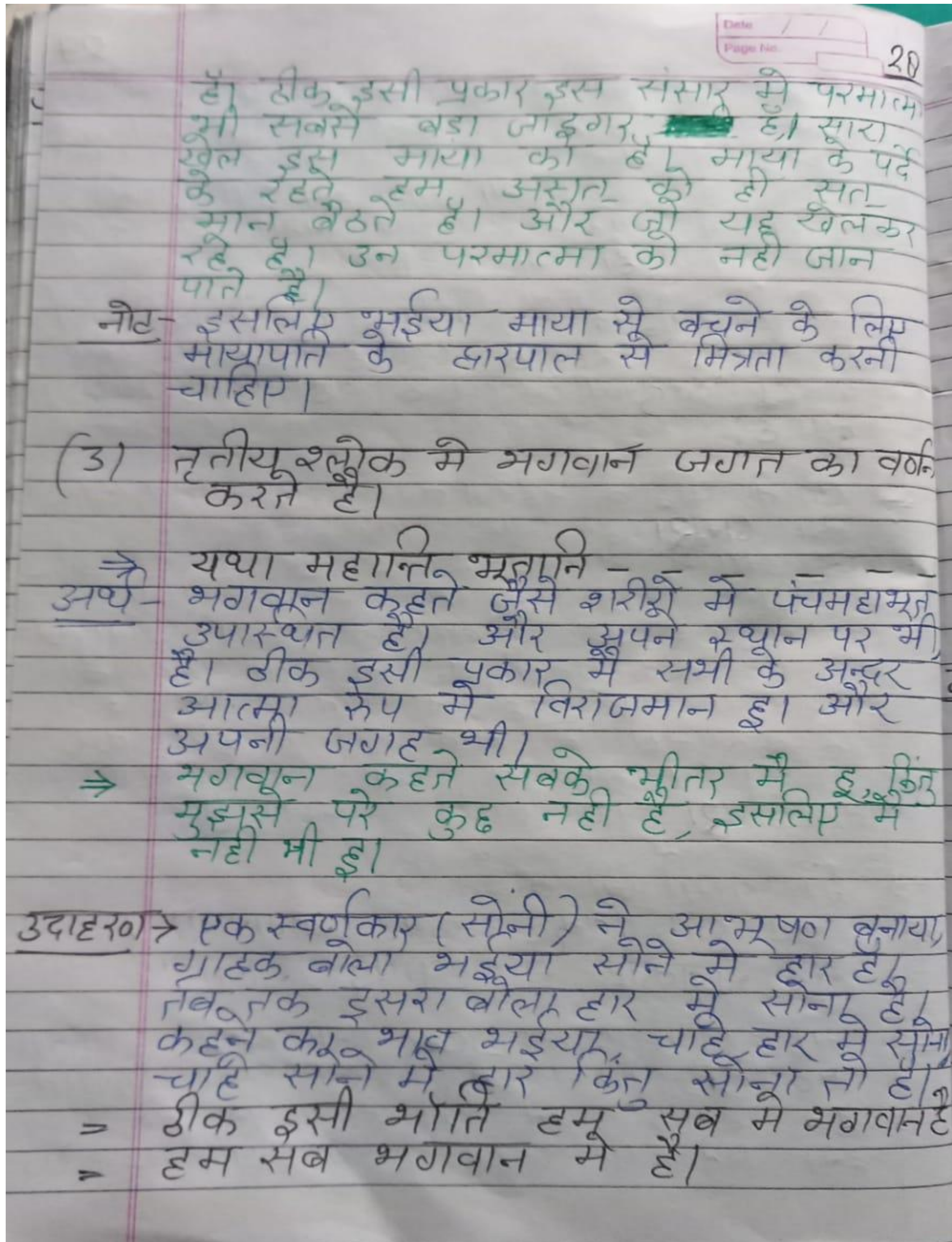
⇒ पर्दे के पीछे के रहस्य को केवल नाटककार का **जमूरा** ही जान सकता है।

उदाहरण- आपने कठपुतली का खेल तो देखा ही होगा। कठपुतली को नचाने वाला पर्दे के पीछे रहकर केवल हाथो मे धागे को फंसाकर कठपुतली को नचाता रहता है। और हम सब यही समझते है कि अरे यह कठपुतली तो बोल रही है, नृत्य कर रही है। किन्तु इस सच्चाई को उस जादूगर का **जमूरा** भली भाँति जानता है।

⇒ गोस्वामी जी कहते है-

चौ० नट कृत बिकट कपट खगराया।
नट सेवकहि न व्यापइ माया॥

⇒ तो भईया जिस प्रकार नाटककार, जादूगर पर्दे के पीछे रहकर सारा खेल दिखाते रहते, हमको ज्ञात नही होता कि जो भी हम पर्दे पर देख रहे वो सच नही झूठ



28

है। ठीक इसी प्रकार इस संसार मे परमात्मा भी सबसे बड़ा जादूगर है। सारा खेल इस माया का है। माया के पर्दे के रहते हम असत् को ही सत् मान बैठते है। और जो यह खेल कर रहे है। उन परमात्मा को नही जान पाते है।

नोट- इसलिए भईया माया से बचने के लिए मायापति के द्वारपाल से मित्रता करनी चाहिए।

(3) तृतीय श्लोक मे भगवान जगत का वर्णन करते है।

⇒ यथा महान्ति भूतानि - - - - -

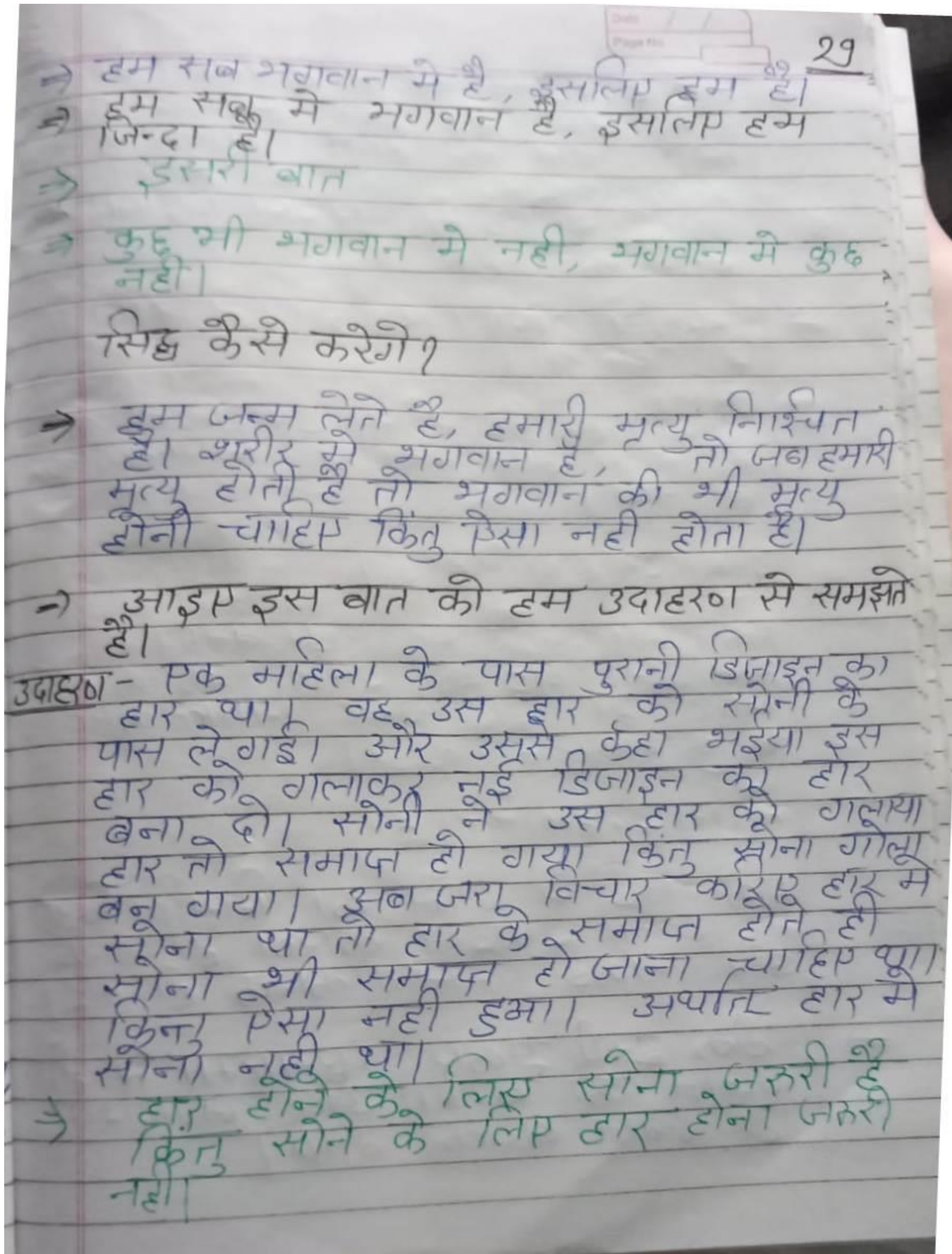
अर्थ- भगवान कहते जैसे शरीरो मे पंचमहाभूत उपस्थित है। और अपने स्थान पर भी है। ठीक इसी प्रकार मैं सभी के अन्दर आत्मा रूप मे विराजमान हूं। और अपनी जगह भी।

⇒ भगवान कहते सबके भीतर मैं हूं, किंतु मुझसे परे कुछ नही है, इसलिए मैं नही भी हूं।

उदाहरण→ एक स्वर्णकार (सोनी) ने आभूषण बनाया, ग्राहक बोला भईया सोने मे हार है, तब तक दूसरा बोला हार मे सोना है। कहने का भाव भईया, चाहे हार मे सोना चाहे सोने मे हार किंतु सोना तो है।

= ठीक इसी भांति हम सब मे भगवान है

= हम सब भगवान मे है।



29

→ हम सब भगवान मे है, इसलिए हम है।

→ हम सब मे भगवान है, इसलिए हम जिन्दा है।

→ दूसरी बात

→ कुछ भी भगवान मे नही, भगवान मे कुछ नही।

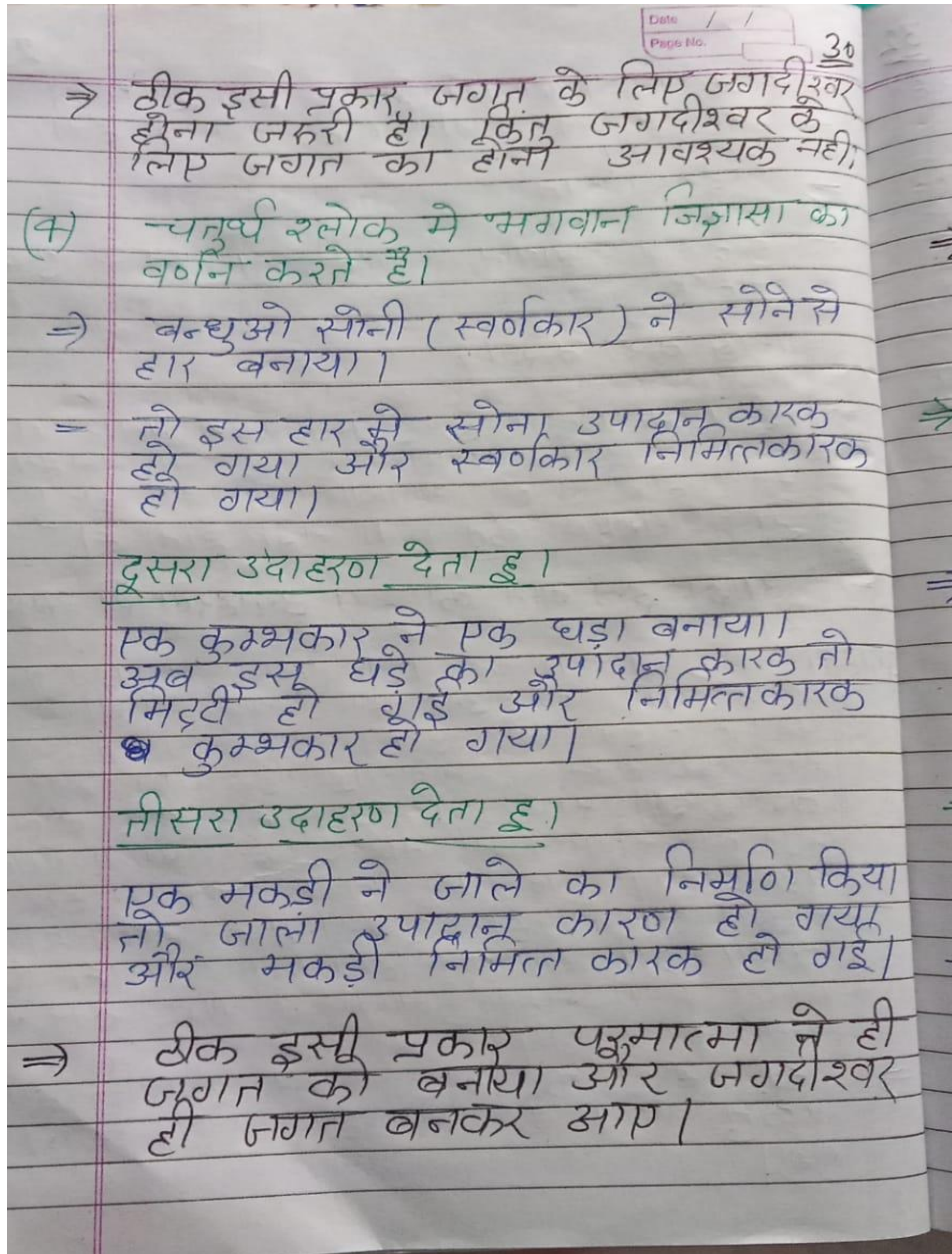
सिद्ध कैसे करेगे?

→ हम जन्म लेते है, हमारी मृत्यु निश्चित है। शरीर मे भगवान है, तो जब हमारी मृत्यु होती है तो भगवान की भी मृत्यु होनी चाहिए किंतु ऐसा नही होता है।

→ आइए इस बात को हम उदाहरण से समझते है।

उदाहरण - एक महिला के पास पुरानी डिजाइन का हार था। वह उस हार को सोनी के पास ले गई। और उससे कहा भइया इस हार को गलाकर नई डिजाइन का हार बना दो। सोनी ने उस हार को गलाया हार तो समाप्त हो गया किंतु सोना गोला बन गया। अब जरा विचार करिए हार मे सोना था तो हार के समाप्त होते ही सोना भी समाप्त हो जाना चाहिए था। किन्तु ऐसा नही हुआ। अर्थात हार मे सोना नही था।

→ हार होने के लिए सोना जरूरी है किंतु सोने के लिए हार होना जरूरी नही।



30

⇒ ठीक इसी प्रकार जगत के लिए जगदीश्वर होना जरूरी है। किंतु जगदीश्वर के लिए जगत का होना आवश्यक नहीं।

(4) चतुर्थ श्लोक मे भगवान जिज्ञासा का वर्णन करते है।

⇒ बन्धुओ सौनी (स्वर्णकार) ने सोने से हार बनाया।

= तो इस हार को सोना उपादान कारक हो गया और स्वर्णकार निमित्तकारक हो गया।

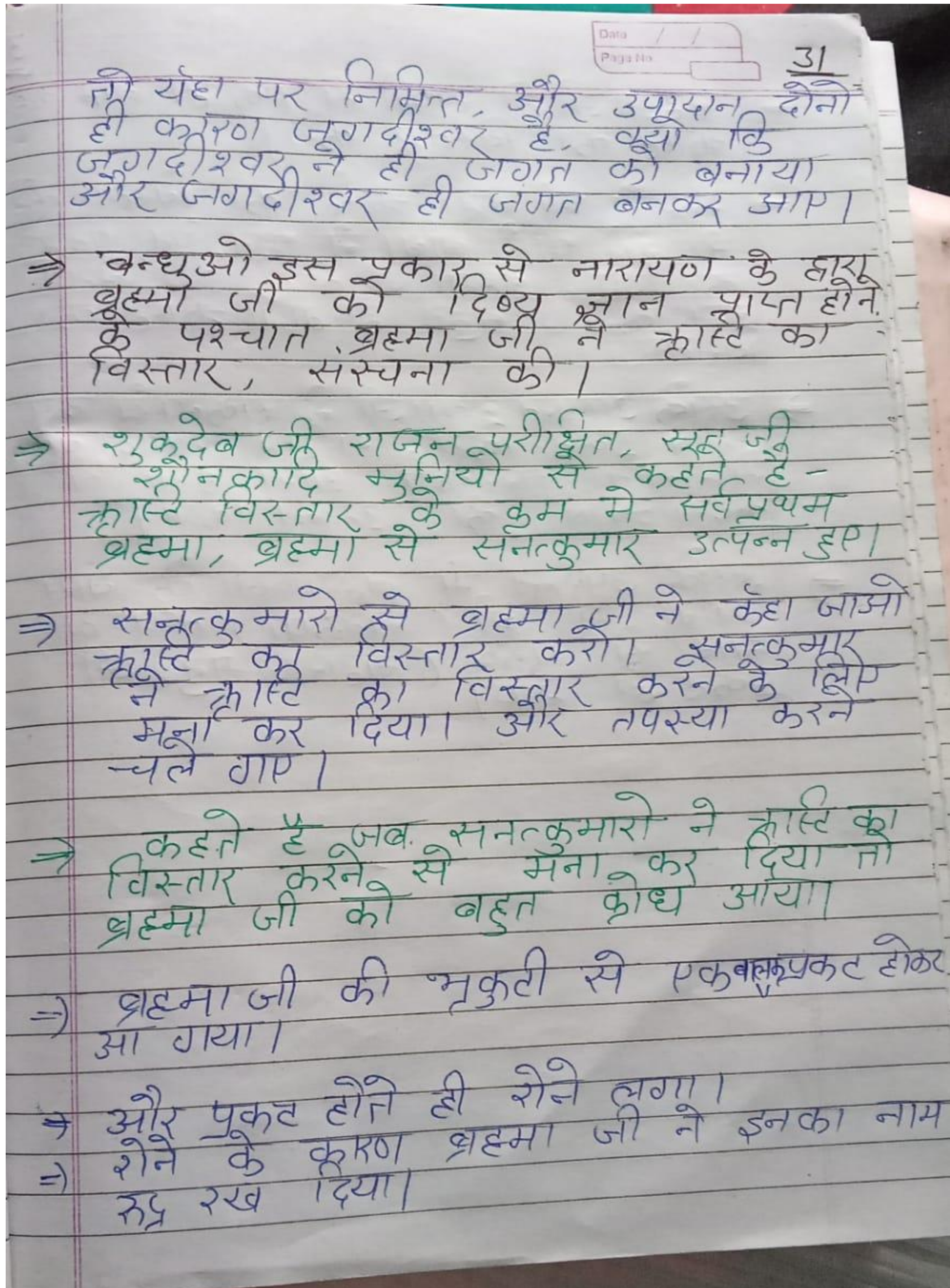
दूसरा उदाहरण देता हू।

एक कुम्भकार ने एक घड़ा बनाया। अब इस घड़े का उपादान कारक तो मिट्टी हो गई और निमित्तकारक कुम्भकार हो गया।

तीसरा उदाहरण देता हू।

एक मकड़ी ने जाले का निर्माण किया तो जाला उपादान कारण हो गया और मकड़ी निमित्त कारक हो गई।

⇒ ठीक इसी प्रकार परमात्मा ने ही जगत को बनाया और जगदीश्वर ही जगत बनकर आए।



31

तो यहां पर निमित्त और उपादान दोनों ही कारण जगदीश्वर है, क्यो कि जगदीश्वर ने ही जगत को बनाया और जगदीश्वर ही जगत बनकर आए।

⇒ बन्धुओ इस प्रकार से नारायण के द्वारा ब्रह्मा जी को दिव्य ज्ञान प्राप्त होने के पश्चात ब्रह्मा जी ने सृष्टि का विस्तार, संरचना की।

⇒ शुकदेव जी राजन परीक्षित, सूत जी शौनकादि मुनियो से कहते है - सृष्टि विस्तार के क्रम मे सर्वप्रथम ब्रह्मा, ब्रह्मा से सनत्कुमार उत्पन्न हुए।

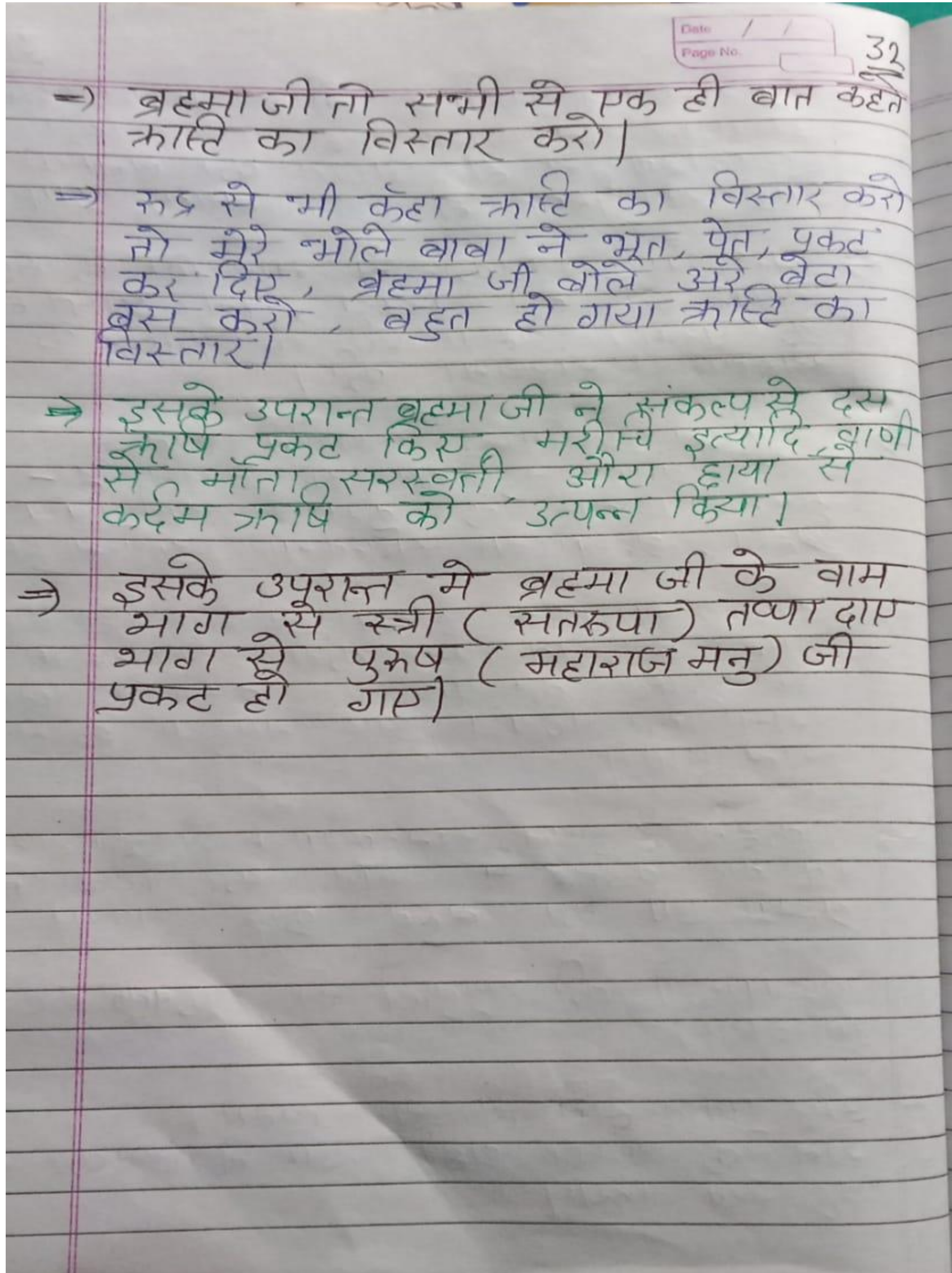
⇒ सनत्कुमारो से ब्रह्मा जी ने कहा जाओ सृष्टि का विस्तार करो। सनत्कुमार ने सृष्टि का विस्तार करने के लिए मना कर दिया। और तपस्या करने चले गए।

⇒ कहते है जब सनत्कुमारो ने सृष्टि का विस्तार करने से मना कर दिया तो ब्रह्मा जी को बहुत क्रोध आया।

⇒ ब्रह्मा जी की भृकुटी से एक बालक प्रकट होकर आ गया।

⇒ और प्रकट होते ही रोने लगा।

⇒ रोने के कारण ब्रह्मा जी ने इनका नाम रुद्र रख दिया।



32

⇒ ब्रह्मा जी तो सभी से एक ही बात कहते सृष्टि का विस्तार करो।

⇒ रुद्र से भी कहा सृष्टि का विस्तार करो तो मेरे भोले बाबा ने भूत, प्रेत, प्रकट कर दिए, ब्रह्मा जी बोले अरे बेटा बस करो, बहुत हो गया सृष्टि का विस्तार।

⇒ इसके उपरान्त ब्रह्मा जी ने संकल्प से दस ऋषि प्रकट किए, मरीचि इत्यादि वाणी से माता सरस्वती और छाया से कर्दम ऋषि को उत्पन्न किया।

⇒ इसके उपरान्त मे ब्रह्मा जी के वाम भाग से स्त्री (सतरूपा) तथा दाए भाग से पुरुष (महाराज मनु) जी प्रकट हो गए।

तृतीय स्कन्ध :-
श्री विदुर, मैत्रेय संवाद

33

⇒ शौनकादि ऋषियो ने सूत जी से पूछा आपने हम लोगो से कहा था कि भगवान के परम भक्त विदुर जी ने अपने आत्मज कुटुम्बियो को भी छोड़कर पृथ्वी के विभिन्न तीर्थों मे विचरण किया।

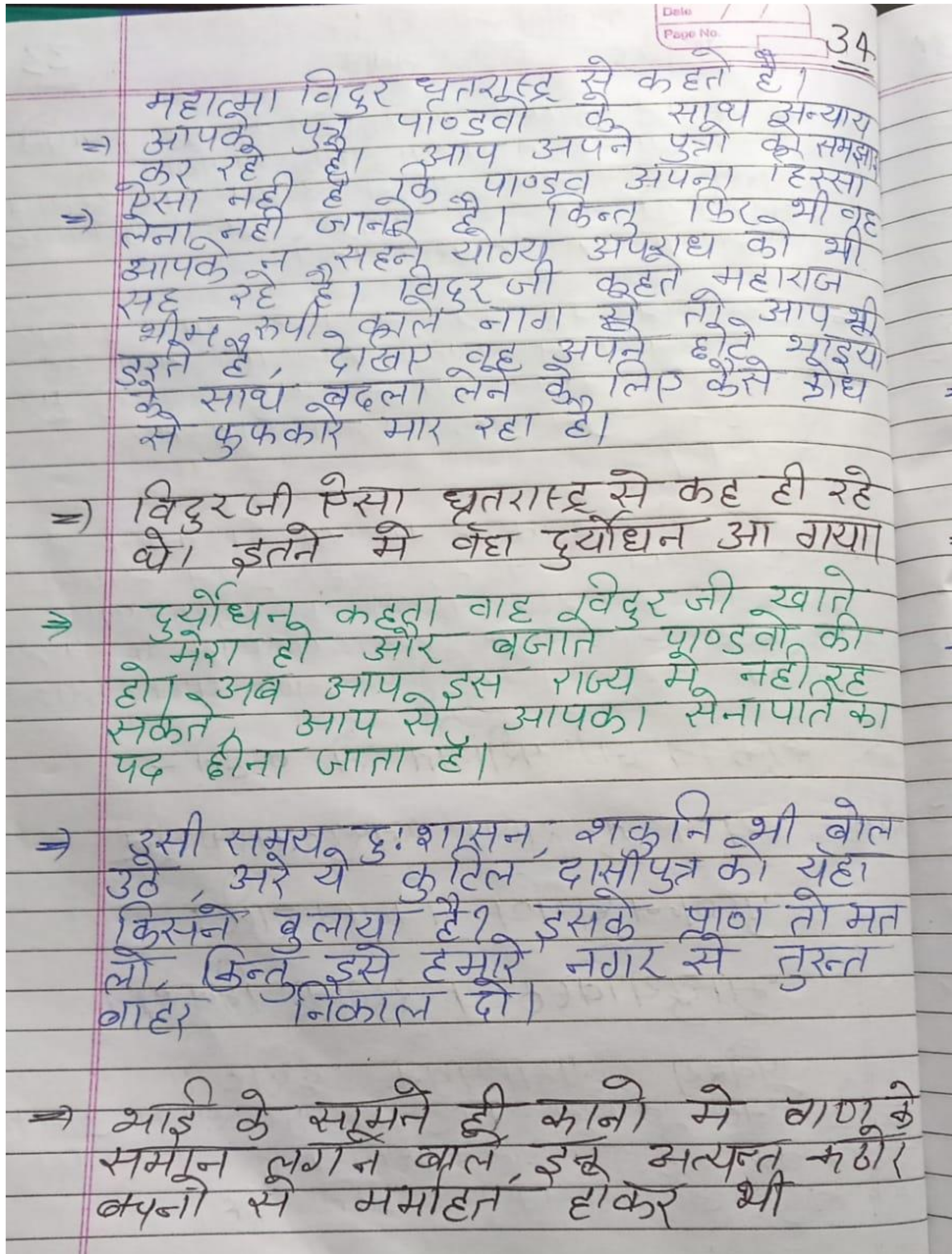
⇒ उस यात्रा मे मैत्रेय ऋषि के साथ अध्यात्म के सम्बन्ध मे उनकी बातचीत कहा हुई थी, तथा मैत्रेय जी ने विदुर जी के प्रश्नो का उत्तर किस प्रकार दिया, विस्तार से बताइए?

⇒ सूत जी शौनकादि मुनियो से कहते जो प्रश्न तुमने किया है, यही प्रश्न राजन परीक्षित ने शुकदेव जी से किया था। शुकदेव जी ने जो उत्तर परीक्षित को दिया था वही मै तुम्हे श्रवण पान कराऊगा।

⇒ शुकदेव जी परीक्षित से कहते -

श्लोक - यदा तु राजा स्वसुतानसाधून
पुष्णन्न धर्मेण विनष्टदृष्टिः
भ्रातुर्यविष्ठस्य सुतान् विबन्धून
प्रवेश्य लाक्षाभवने ददाह ॥

अर्थ - जब कौरव पाण्डवो के साथ अन्याय कर रहे थे, तब धृतराष्ट्र के पास विदुर जी चलकर आते है।



Date / /
Page No. 34

महात्मा विदुर धृतराष्ट्र से कहते है।

=> आपके पुत्र पाण्डवो के साथ अन्याय कर रहे है। आप अपने पुत्रो को समझा

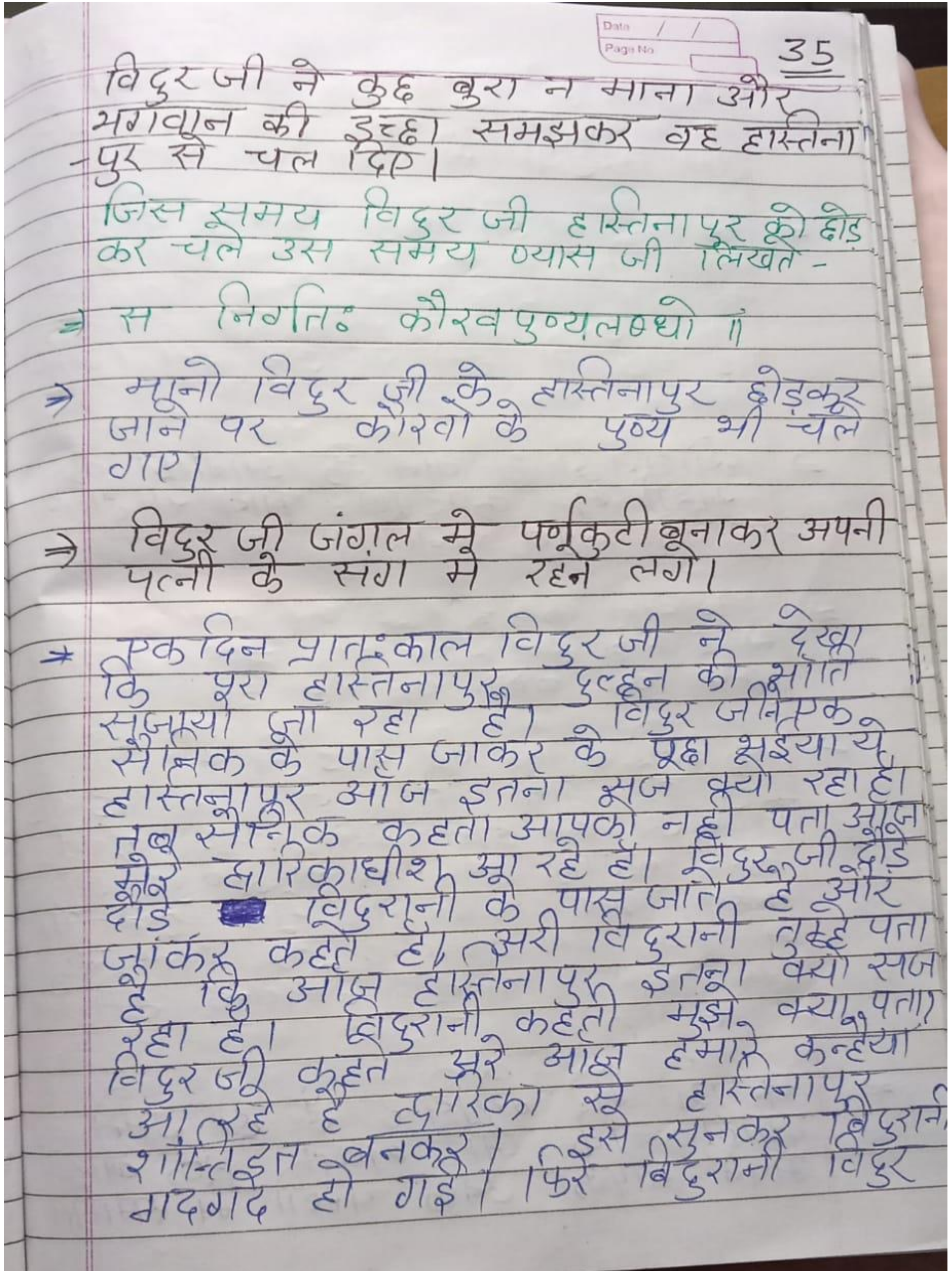
=> ऐसा नही है कि पाण्डव अपना हिस्सा लेना नही जानते है। किन्तु फिर भी वह आपके न सहने योग्य अपराध को भी सह रहे है। विदुर जी कहते महाराज भीम रुपी काले नाग से तो आप भी डरते है, देखिए वह अपने छोटे भाइयो के साथ बदला लेने के लिए कैसे क्रोध से फुफकार मार रहा है।

=> विदुर जी ऐसा धृतराष्ट्र से कह ही रहे थे। इतने मे वहा दुर्योधन आ गया।

=> दुर्योधन कहता वाह विदुर जी खाते मेरा हो और बजाते पाण्डवो की हो। अब आप इस राज्य मे नही रह सकते आप से आपका सेनापति का पद छीना जाता है।

=> इसी समय दुःशासन, शकुनि भी बोल उठे, अरे ये कुटिल दासीपुत्र को यहा किसने बुलाया है? इसके प्राण तो मत लो, किन्तु इसे हमारे नगर से तुरन्त बाहर निकाल दो।

=> भाई के सामने ही कानो मे बाण के समान लगने वाले, इन अत्यन्त कठोर वचनो से मर्माहत होकर भी


35

विदुर जी ने कुछ बुरा न माना और भगवान की इच्छा समझकर वह हस्तिना-पुर से चल दिए।

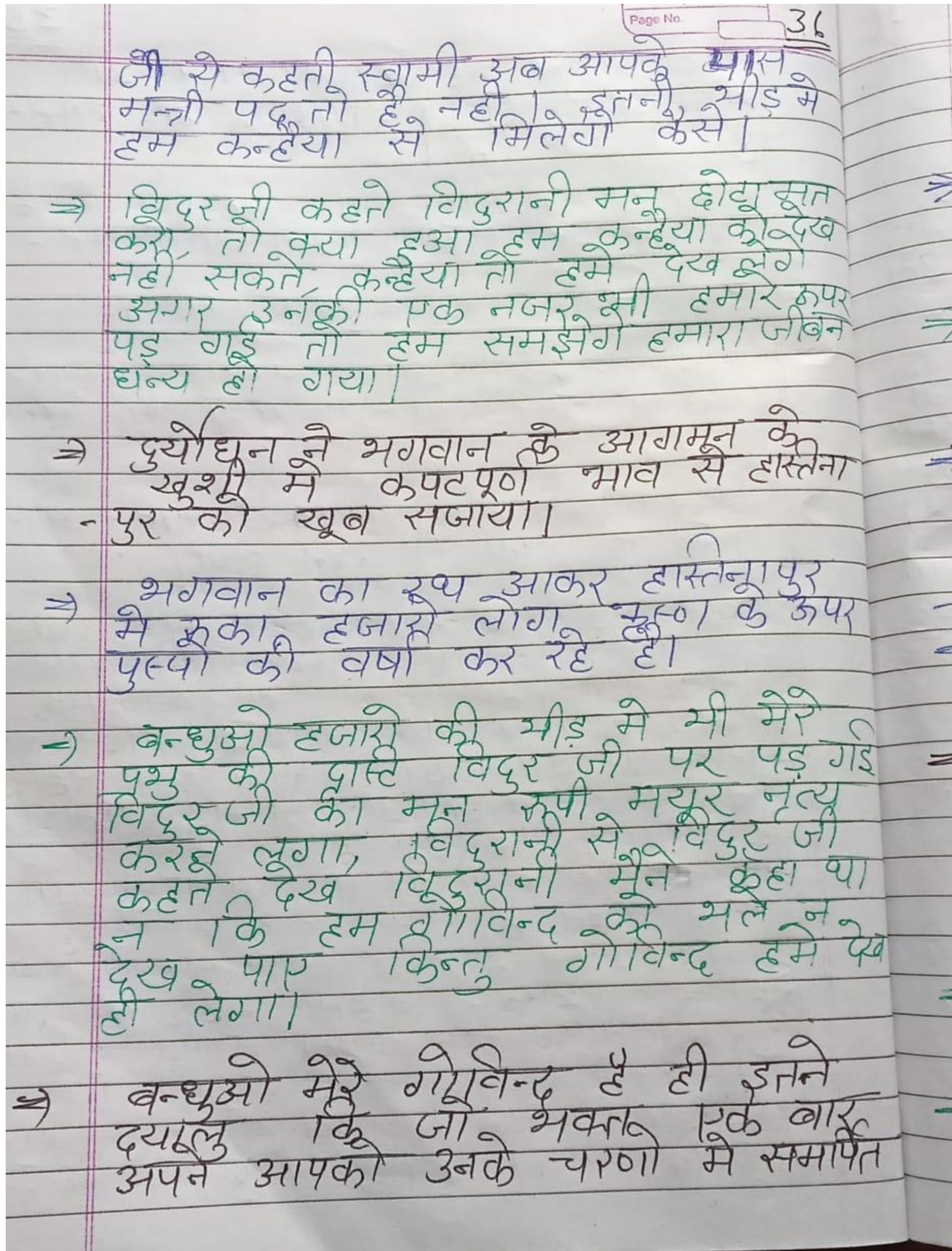
जिस समय विदुर जी हस्तिनापुर को छोड़ कर चले उस समय व्यास जी लिखते -

⇒ स निर्गतः कौरवपुण्यलब्धो ॥

⇒ मानो विदुर जी के हस्तिनापुर छोड़कर जाने पर कौरवों के पुण्य भी चले गए।

⇒ विदुर जी जंगल मे पर्णकुटी बनाकर अपनी पत्नी के संग मे रहने लगे।

* एक दिन प्रातःकाल विदुर जी ने देखा कि पूरा हस्तिनापुर दुल्हन की भाँति सजाया जा रहा है। विदुर जी ने एक सैनिक के पास जाकर के पूछा भइया ये हस्तिनापुर आज इतना सज क्यों रहा है तब सैनिक कहता आपको नही पता आज मेरे द्वारिकाधीश आ रहे हैं। विदुर जी दौड़े दौड़े विदुरानी के पास जाते हैं और जाकर कहते हैं, अरी विदुरानी तुम्हें पता है कि आज हस्तिनापुर इतना क्यों सज रहा है। विदुरानी कहती मुझे क्या पता। विदुर जी कहते अरे आज हमारे कन्हैया हस्तिनापुर आ रहे हैं द्वारका से शांतिदूत बनकर। इसे सुनकर विदुरानी गदगद हो गई। फिर विदुरानी विदुर



Page No. 36

जी ये कहती स्वामी अब आपके पास मन्त्री पद तो है नही। इतनी भीड़ मे हम कन्हैया से मिलेगो कैसे।

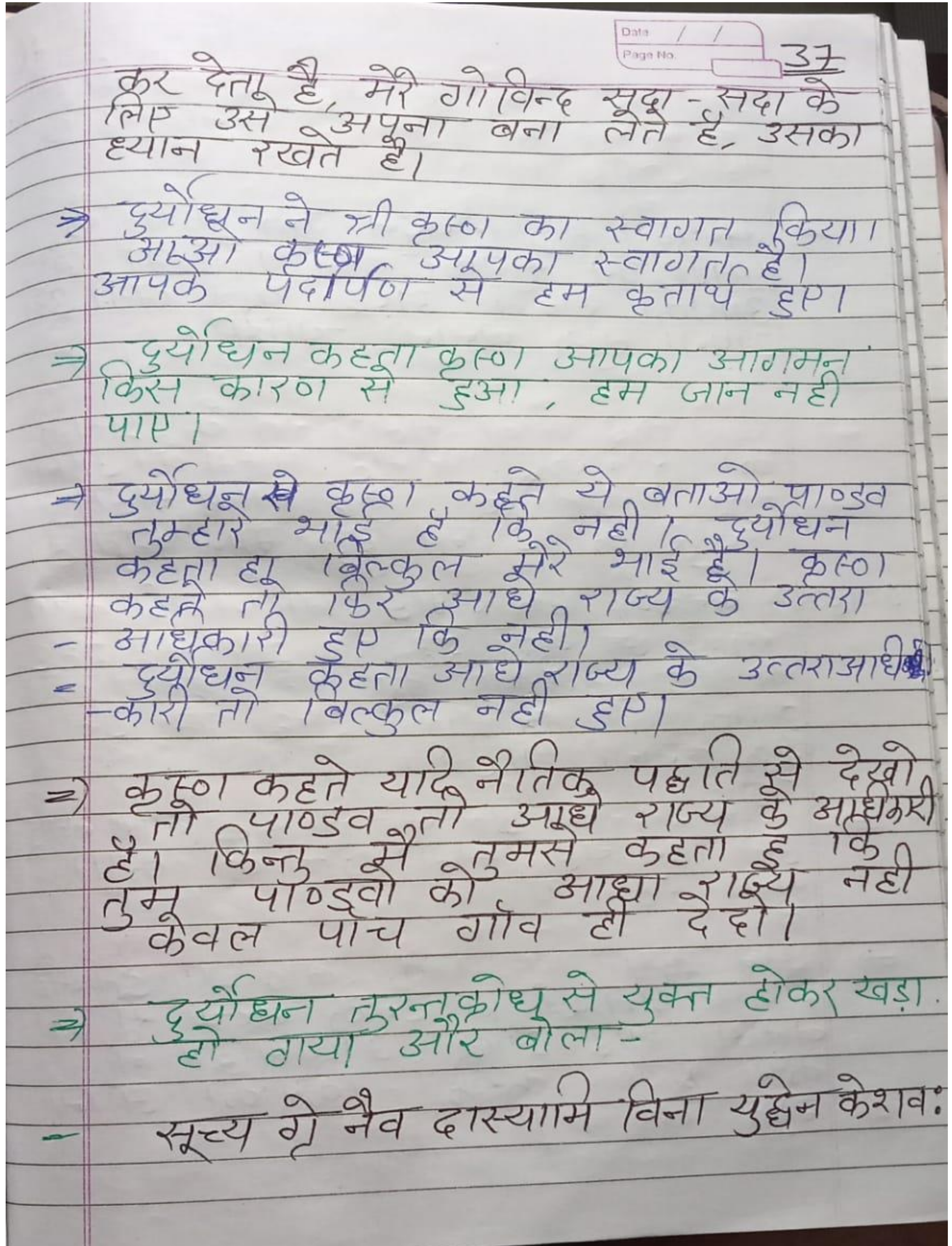
⇒ विदुर जी कहते विदुरानी मन छोटा करत, तो क्या हुआ हम कन्हैया को देख नही सकते, कन्हैया तो हमे देख लेगे अगर उनकी एक नजर भी हमारे ऊपर पड़ गई तो हम समझेगे हमारा जीवन धन्य हो गया।

⇒ दुर्योधन ने भगवान के आगमन के खुशी मे कपटपूर्ण भाव से हस्तिना-पुर को खूब सजाया।

⇒ भगवान का रथ आकर हस्तिनापुर मे रुका हजारो लोग कृष्ण के ऊपर पुष्पो की वर्षा कर रहे है।

⇒ बन्धुओ हजारो की भीड़ मे भी मेरे प्रभु की दृष्टि विदुर जी पर पड़ गई विदुर जी का मन रूपी मयूर नृत्य करने लगा, विदुरानी से विदुर जी कहते देख विदुरानी मैने कहा था न कि हम गोविन्द को भले न देख पाए किन्तु गोविन्द हमे देख ही लेगा।

⇒ बन्धुओ मेरे गोविन्द है ही इतने दयालु कि जो भक्त एक बार अपने आपको उनके चरणो मे समर्पित



37

कर देता है, मेरे गोविन्द सदा-सदा के लिए उसे अपना बना लेते है, उसका ध्यान रखते है।

⇒ दुर्योधन ने श्री कृष्ण का स्वागत किया। आओ कृष्ण आपका स्वागत है। आपके पदार्पण से हम कृतार्थ हुए।

⇒ दुर्योधन कहता कृष्ण आपका आगमन किस कारण से हुआ, हम जान नही पाए।

⇒ दुर्योधन से कृष्ण कहते ये बताओ पाण्डव तुम्हारे भाई है कि नही। दुर्योधन कहता हू बिल्कुल मेरे भाई है। कृष्ण कहते तो फिर आधे राज्य के उत्तरा-धिकारी हुए कि नही।

- दुर्योधन कहता आधे राज्य के उत्तराधिकारी तो बिल्कुल नही हुए।

⇒ कृष्ण कहते यदि नैतिक पद्धति से देखो तो पाण्डव तो आधे राज्य के अधिकारी है। किन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि तुम पाण्डवो को आधा राज्य नही केवल पांच गांव ही दे दो।

⇒ दुर्योधन तुरन्त क्रोध से युक्त होकर खड़ा हो गया और बोला-

- सूच्य ग्रे नैव दास्यामि विना युद्धेन केशवः

Date / /
Page No. 38

कृष्ण क्या बोलते हो आप? सुई की नोक के बराबर भी भूमि मै बिना युद्ध के नही दूगा।

⇒ बन्धुओ एक निवेदन करु कथा के प्रसंग को सुनकर उन पात्रों मे जो आपको सबसे अच्छा पात्र लगे उसे अपना गुरु बनाना चाहिए।

⇒ जैसे कई लोग महाभारत के प्रसंग को सुनकर पितामह भीष्म को अपना गुरु मान लेते है। कुछ लोग महाराज विदुर को अपना गुरु मान लेते है।

उदाहरण ⇒ बन्धुओ एक जगह भगवान की कथा व्यास जी सुना रहे थे। और कह रहे थे कि बन्धुओ कथा को श्रवण करके आपको जो पात्र सबसे अच्छा लगे उसे गुरु बनाना चाहिए।

⇒ जिस दिन पण्डित जी ने यह बात बताई उस दिन वह महाभारत की कथा सुना रहे थे।

⇒ अब कथा विराम के बाद पण्डित जी ने परीक्षित जी व उनके बच्चो से पूछा बताओ भाई आज आपलोगो ने कथा श्रवण करके किसको अपना गुरु बनाया।

Date / /
Page No. 39

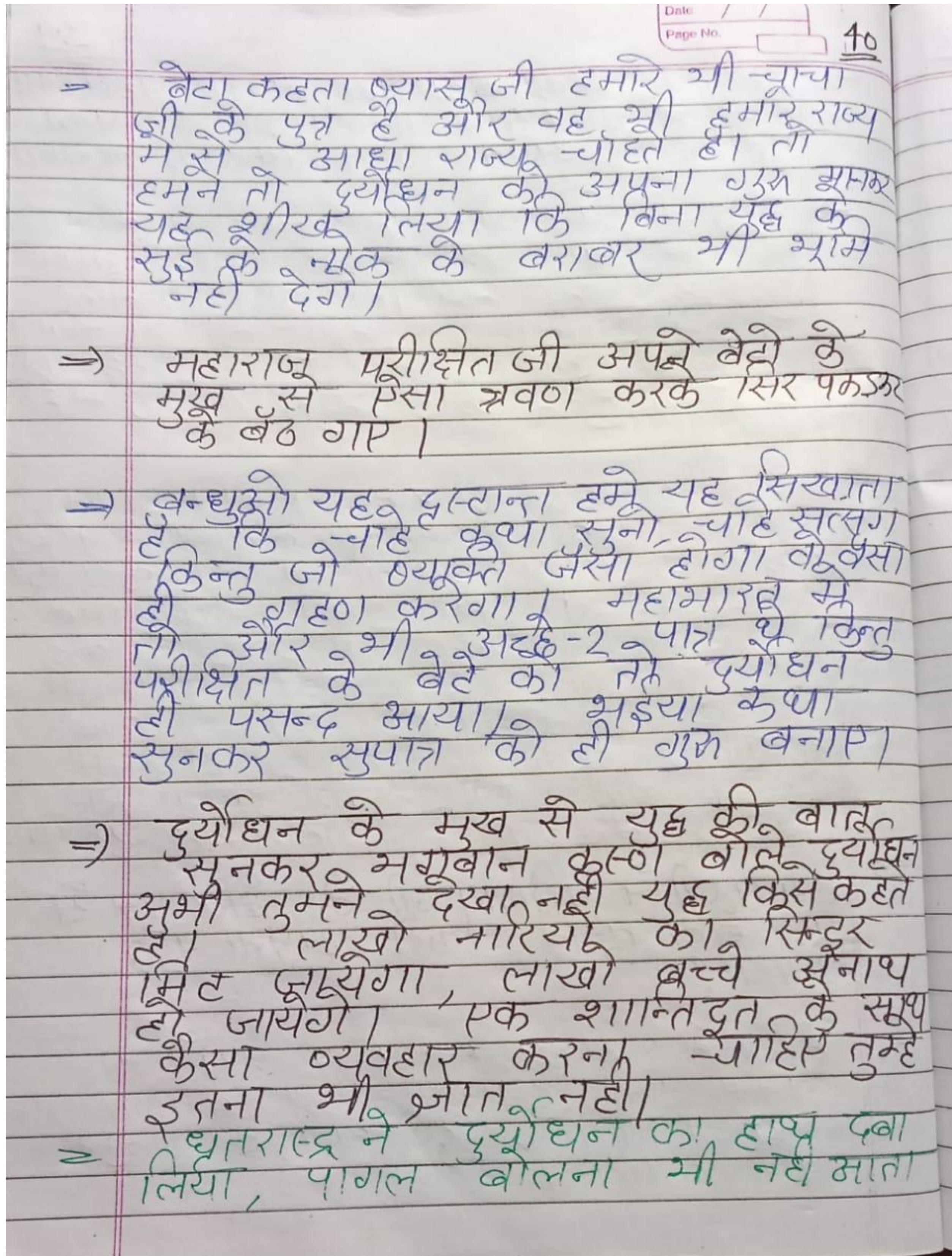
=> परीक्षित जी का बड़ा बेटा सबसे पहले खड़ा होकर बोला पिता जी, गुरु जी आपको पता हमने अपना गुरु किसको बनाया

=> गुरु जी और पिता जी दोनो बोले बेटा किसे बनाया। बेटा कहता हमने अपना गुरु कंस को बनाया। गुरु जी बोले तुमने अपना गुरु कंस को ही क्यो बनाया, और भी तो इतने अच्छे पात्र थे उनमे तुम्हे कोई गुरु लायक नही मिला।

=> परीक्षित जी का पुत्र कहता मैने अपना गुरु कंस को इसलिए बनाया क्योंकि कंस के पिता अपनी गद्दी कंस को दे नही रहे थे। तो उसने अपने पिता को बलपूर्वक हटाकर गद्दी प्राप्त कर ली। इसी प्रकार हमारे भी पिता जी हमे अपनी गद्दी दे नही रहे अतः बलपूर्वक इनको हटाकर गद्दी लेनी पड़ेगी। परीक्षित जी बिचारे अपना सिर पकड़कर बैठ गए, हे भगवान यही गुरु मिले

=> ब्यास जी ने परीक्षित जी के छोटे पुत्र से पूछा बेटा तुमने किसे अपना गुरु बनाया?

=> छोटा बेटा कहता ब्यास जी हमने तो अपना गुरु दुर्योधन को बनाया ब्यास जी बोले, दुर्योधन को गुरु क्यो बनाया?



40

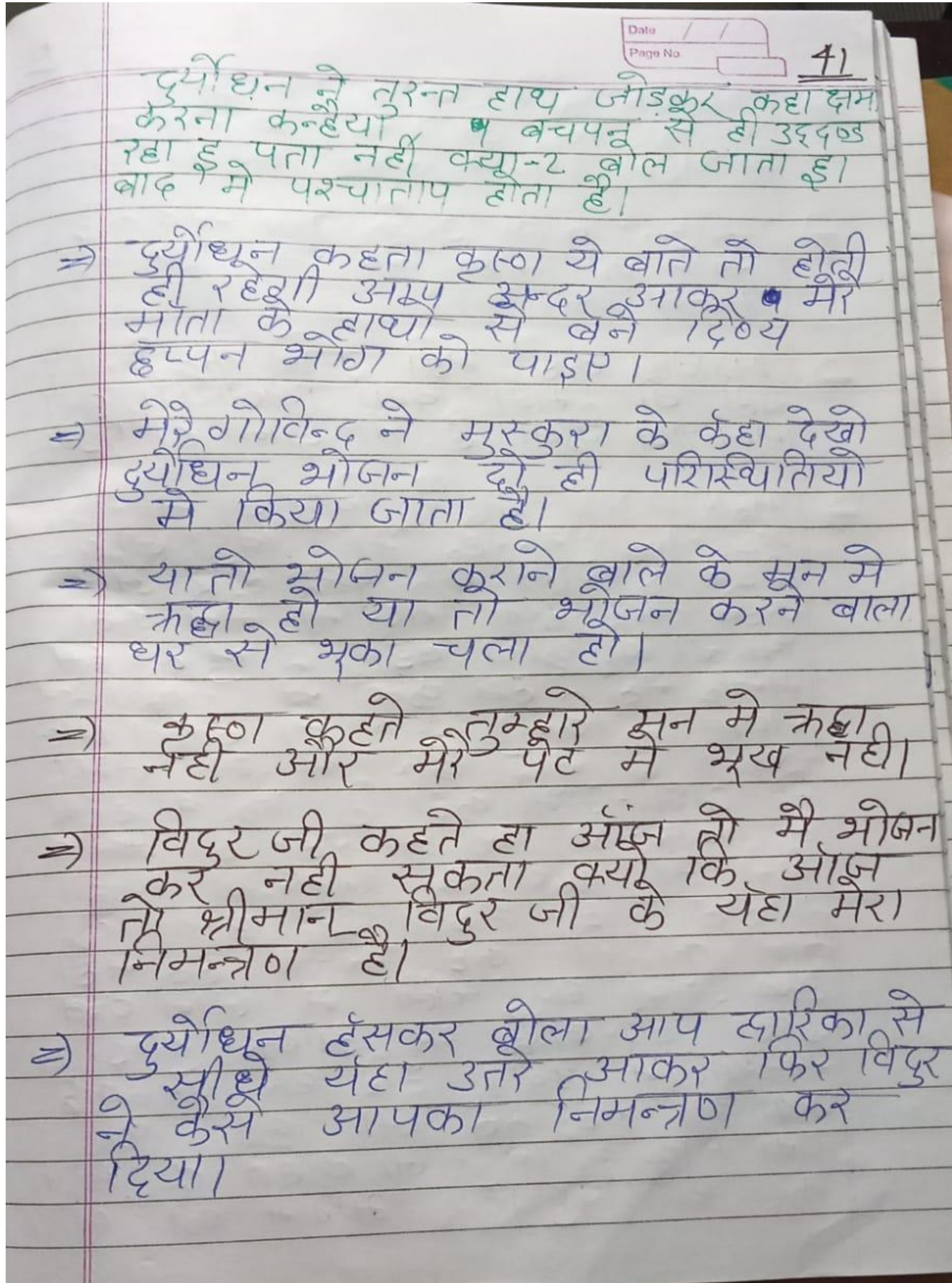
⇒ बेटा कहता व्यास जी हमारे भी चाचा जी के पुत्र है और वह भी हमारे राज्य मे से आधा राज्य चाहते थे तो हमने तो दुर्योधन को अपना गुरु मानकर यह सीख लिया कि बिना युद्ध के सुई के नोक के बराबर भी भूमि नही देगे।

⇒ महाराज परीक्षित जी अपने बेटे के मुख से ऐसा श्रवण करके सिर पकड़कर के बैठ गए।

⇒ बन्धुओ यह दृष्टान्त हमे यह सिखाता है कि चाहे कथा सुनो चाहे सत्संग किन्तु जो व्यक्ति जैसा होगा वह वैसा ही ग्रहण करेगा। महाभारत मे तो और भी अच्छे-2 पात्र थे किन्तु परीक्षित के बेटे को तो दुर्योधन ही पसन्द आया। भइया कथा सुनकर सुपात्र को ही गुरु बनाए।

⇒ दुर्योधन के मुख से युद्ध की बात सुनकर भगवान कृष्ण बोले दुर्योधन अभी तुमने देखा नही युद्ध किसे कहते है। लाखो नारियो का सिन्दूर मिट जायेगा, लाखो बच्चे अनाथ हो जायेगे। एक शान्तिदूत के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए तुम्हे इतना भी ज्ञात नही।

⇒ धृतराष्ट्र ने दुर्योधन का हाथ दबा लिया, पागल बोलना भी नही आता



41

दुर्योधन ने तुरन्त हाथ जोड़कर कहा क्षमा करना कन्हैया बचपन से ही उद्दण्ड रहा है, पता नहीं क्या-2 बोल जाता है। बाद मे पश्चाताप होता है।

=> दुर्योधन कहता कृष्ण ये बाते तो होती ही रहेगी आप अन्दर आकर मेरे माता के हाथों से बने दिव्य छप्पन भोग को पाइए।

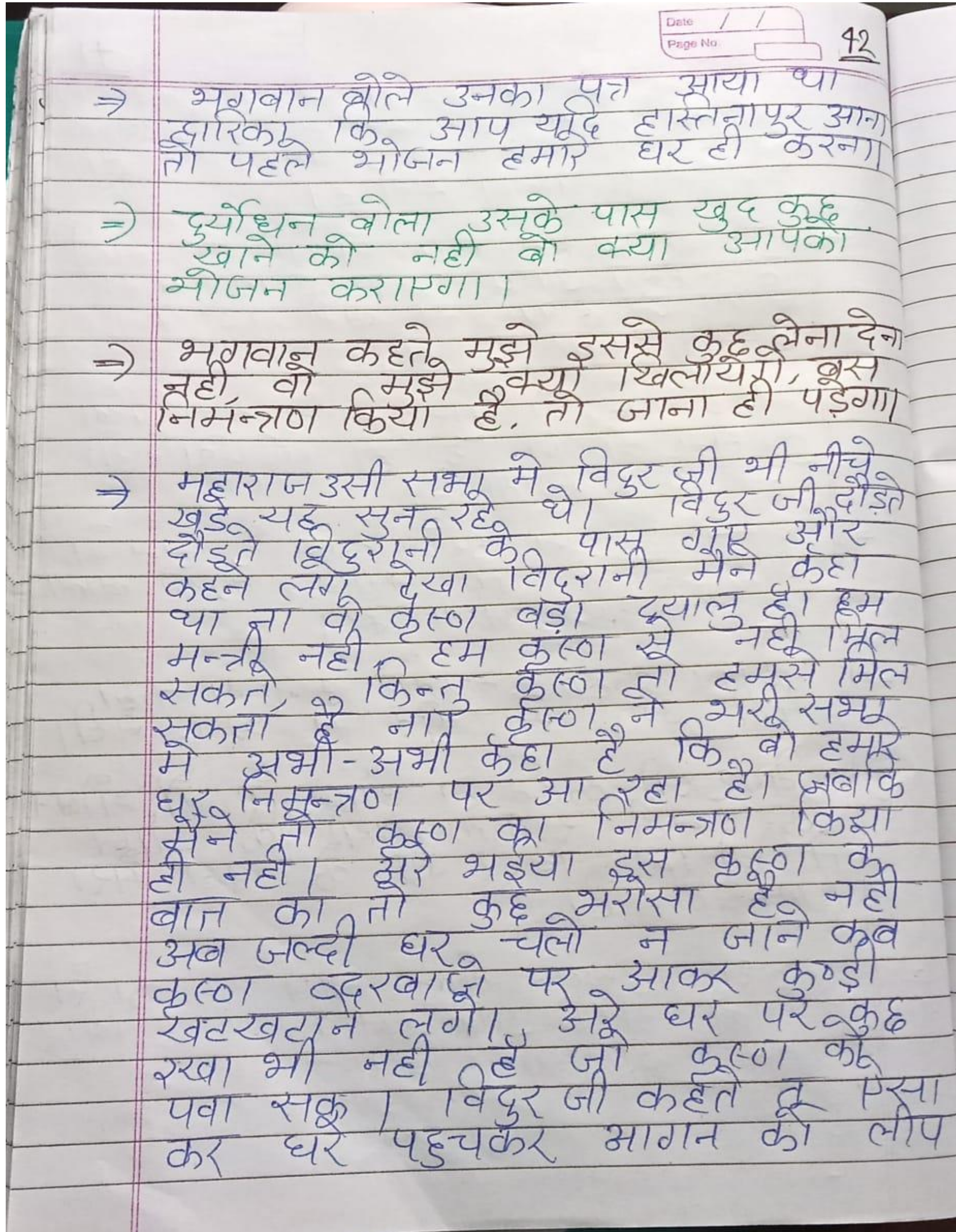
=> मेरे गोविन्द ने मुस्कुरा के कहा देखो दुर्योधन भोजन दो ही परिस्थितियों मे किया जाता है।

=> या तो भोजन कराने वाले के मन मे श्रद्धा हो या तो भोजन करने वाला घर से भूका चला हो।

=> कृष्ण कहते तुम्हारे मन मे श्रद्धा नहीं और मेरे पेट मे भूख नही।

=> विदुर जी कहते हा आज तो मै भोजन कर नही सकता क्यूं कि आज तो श्रीमान विदुर जी के यहा मेरा निमन्त्रण है।

=> दुर्योधन हंसकर बोला आप द्वारिका से सीधे यहा उतरे आकर फिर विदुर ने कैसे आपका निमन्त्रण कर दिया।



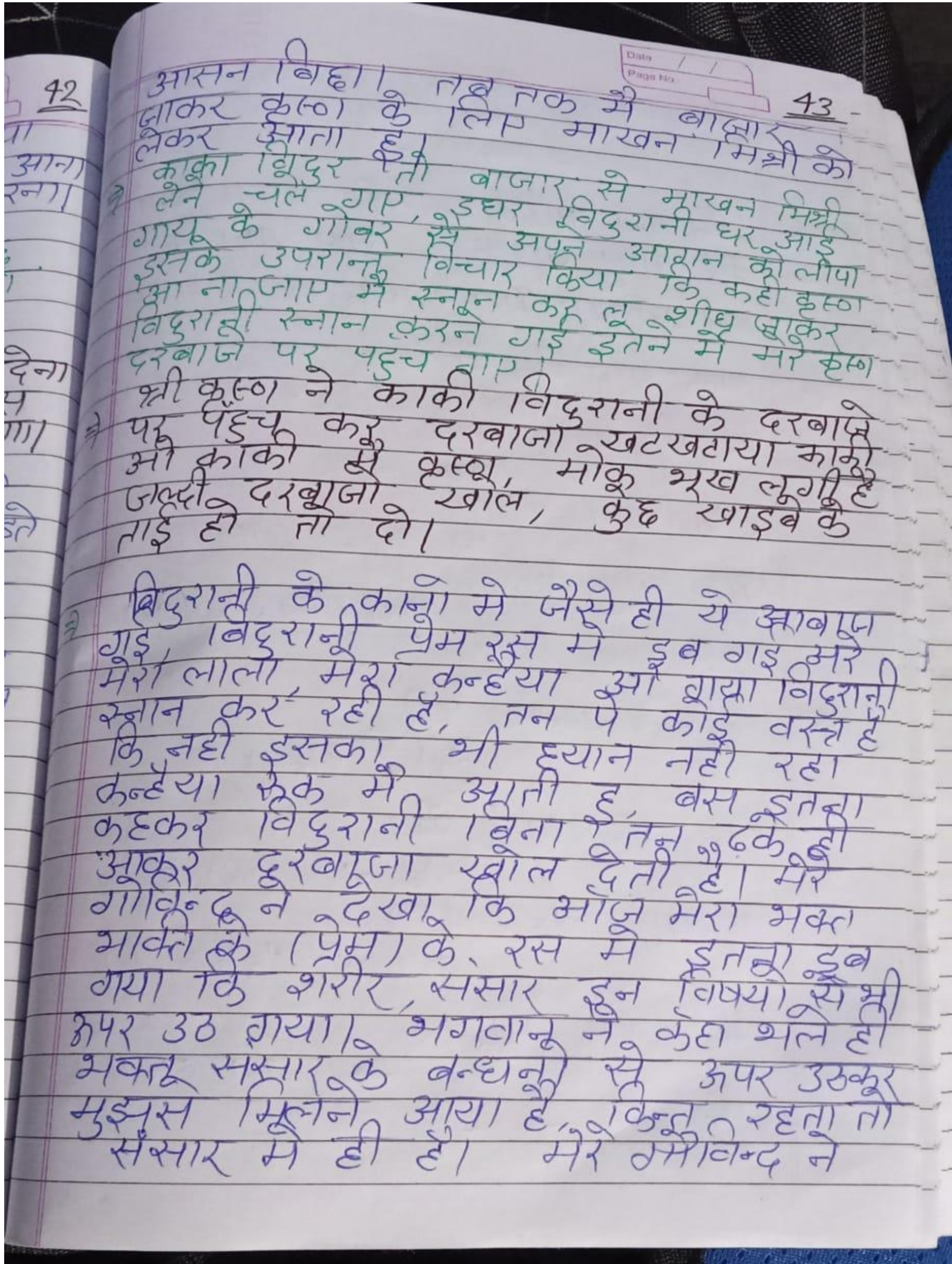
Date / /
Page No. 42

⇒ भगवान बोले उनका पत्र आया था द्वारिका कि आप यदि हस्तिनापुर आना तो पहले भोजन हमारे घर ही करना।

⇒ दुर्योधन बोला उसके पास खुद कुछ खाने को नही वो क्या आपको भोजन कराएगा।

⇒ भगवान कहते मुझे इससे कुछ लेना देना नही, वो मुझे क्या खिलायेगा, इस निमन्त्रण किया है, तो जाना ही पड़ेगा।

⇒ महाराज उसी सभा मे विदुर जी भी नीचे खड़े यह सुन रहे थे। विदुर जी दौड़ते दौड़ते विदुरानी के पास गए और कहने लगे देखा विदुरानी मैंने कहा था ना वो कृष्ण बड़ा दयालु है। हम मन्त्री नही हम कृष्ण से नही मिल सकते, किन्तु कृष्ण तो हमसे मिल सकता है ना। कृष्ण ने भरी सभा मे अभी-अभी कहा है कि वो हमारे घर निमन्त्रण पर आ रहा है। जबकि मैने तो कृष्ण का निमन्त्रण किया ही नही। अरे भइया इस कृष्ण के बात का तो कुछ भरोसा है नही अब जल्दी घर चलो न जाने कब कृष्ण दरवाजे पर आकर कुण्डी खटखटाने लगे। और घर पर कुछ रखा भी नही है जो कृष्ण को पवा सकू। विदुर जी कहते तू ऐसा कर घर पहुचकर आगन को लीप



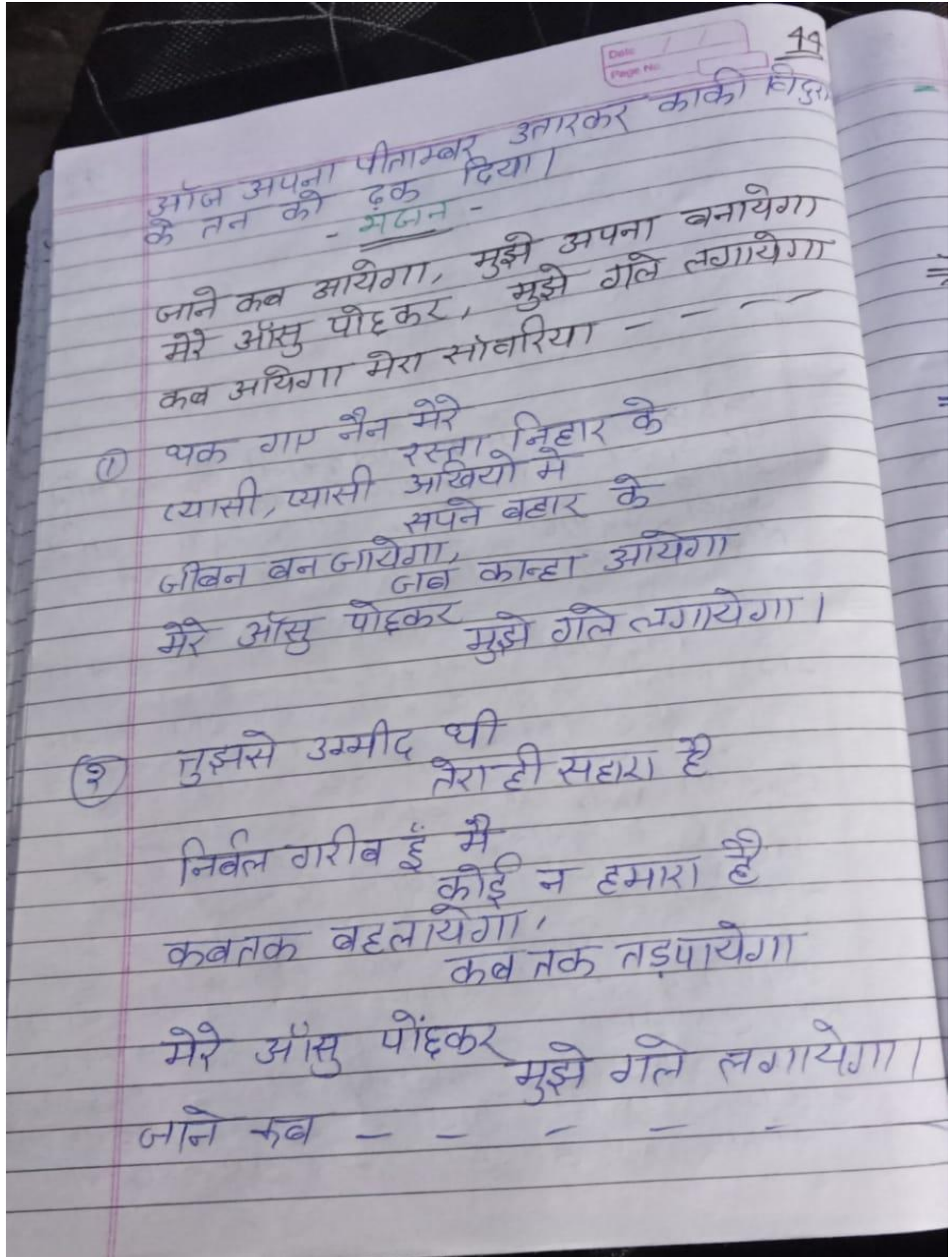
43

आसन बिछा। तब तक मैं बाजार जाकर कृष्ण के लिए माखन मिश्री को लेकर आता हूँ।

काका विदुर तो बाजार से माखन मिश्री लेने चले गए, इधर विदुरानी घर आई गाय के गोबर से अपने आंगन को लीपा इसके उपरान्त विचार किया कि कहीं कृष्ण आ ना जाए मैं स्नान कर लूं शीघ्र जाकर विदुरानी स्नान करने गई इतने में मेरे कृष्ण दरवाजे पर पहुंच गए।

श्री कृष्ण ने काकी विदुरानी के दरवाजे पर पहुंच कर दरवाजा खटखटाया काकी ओ काकी मैं कृष्ण, मोकू भूख लगी है जल्दी दरवाजो खोल, कुछ खाइबे के ताईं हो तो दो।

विदुरानी के कानों मे जैसे ही ये आवाज गई, विदुरानी प्रेम रस मे डूब गई अरे मेरो लालो, मेरो कन्हैया आ गया विदुरानी स्नान कर रही है, तन पे कोई वस्त्र है कि नहीं इसका भी ध्यान नहीं रहा कन्हैया रुक मैं आती हूं, बस इतना कहकर विदुरानी बिना तन ढके ही आकर दरवाजा खोल देती है। मेरे गोविन्द ने देखा कि आज मेरा भक्त भक्ति के (प्रेम) के रस में इतना डूब गया कि शरीर, संसार इन विषयों से भी ऊपर उठ गया। भगवान ने कहा भले ही भक्त संसार के बन्धनों से ऊपर उठकर मुझसे मिलने आया है, किन्तु रहता तो संसार मे ही है। मेरे गोविन्द ने


49

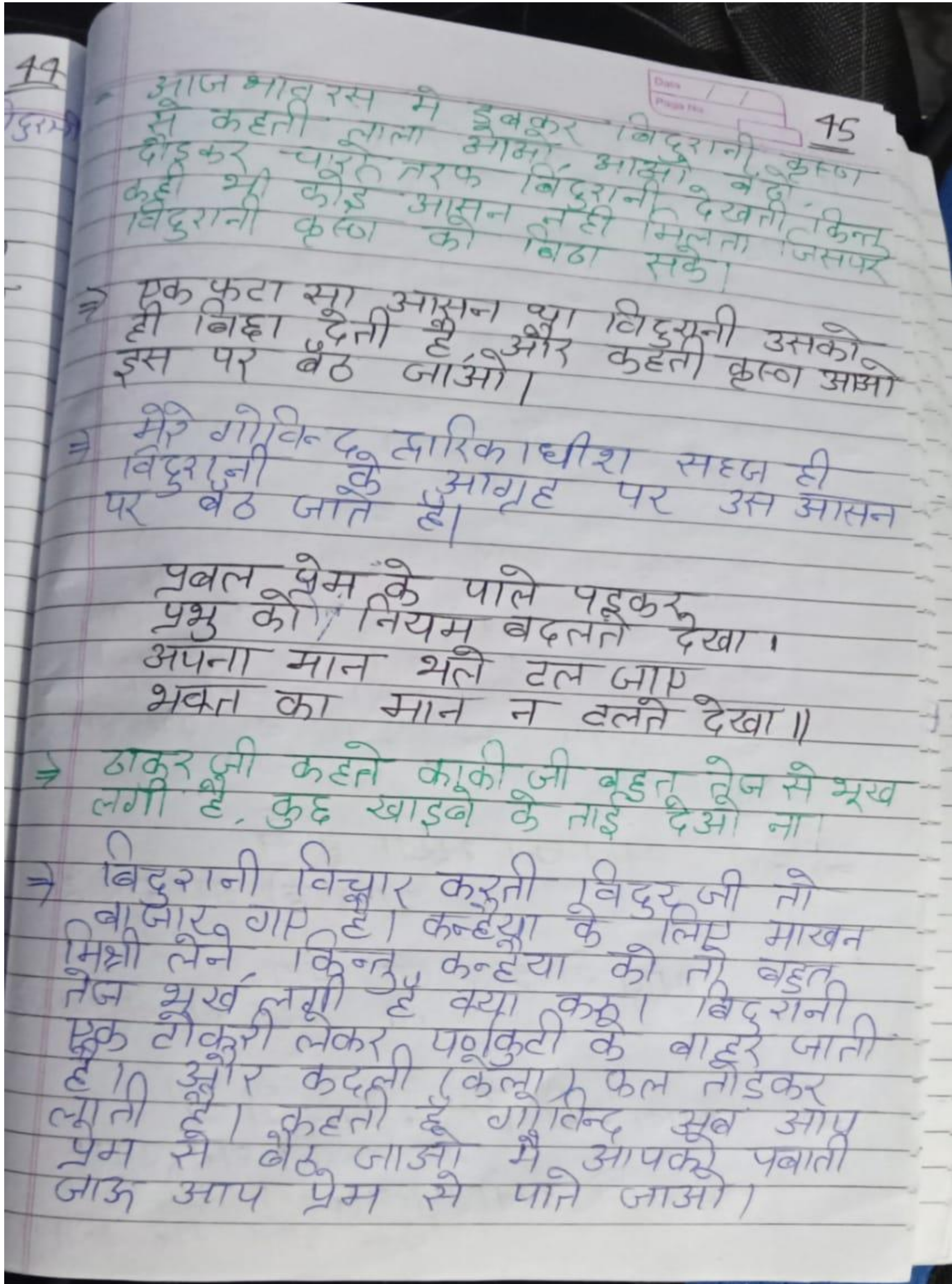
आज अपना पीताम्बर उतारकर काकी विदुर के तन को ढक दिया।

- भजन -

जाने कब आयेगा, मुझे अपना बनायेगा
मेरे आँसु पोंछकर, मुझे गले लगायेगा
कब आयेगा मेरा साँवरिया — — —

(1) थक गए नैन मेरे रस्ता निहार के
प्यासी, प्यासी अखियो मे सपने बहार के
जीवन बन जायेगा, जब कान्हा आयेगा
मेरे आँसु पोंछकर मुझे गले लगायेगा।

(2) तुझसे उम्मीद थी तेरा ही सहारा है
निर्बल गरीब हुँ मैं कोई न हमारा है
कबतक बहलायेगा, कब तक तड़पायेगा
मेरे आँसु पोंछकर मुझे गले लगायेगा।
जाने कब — — — — —



45

⇒ आज भाव रस मे डूबकर बिदुरानी कृष्ण से कहती लाला आओ आओ बैठो। दौड़कर चारो तरफ बिदुरानी देखती किन्तु कहीं भी कोई आसन नही मिलता जिसपर बिदुरानी कृष्ण को बिठा सके।

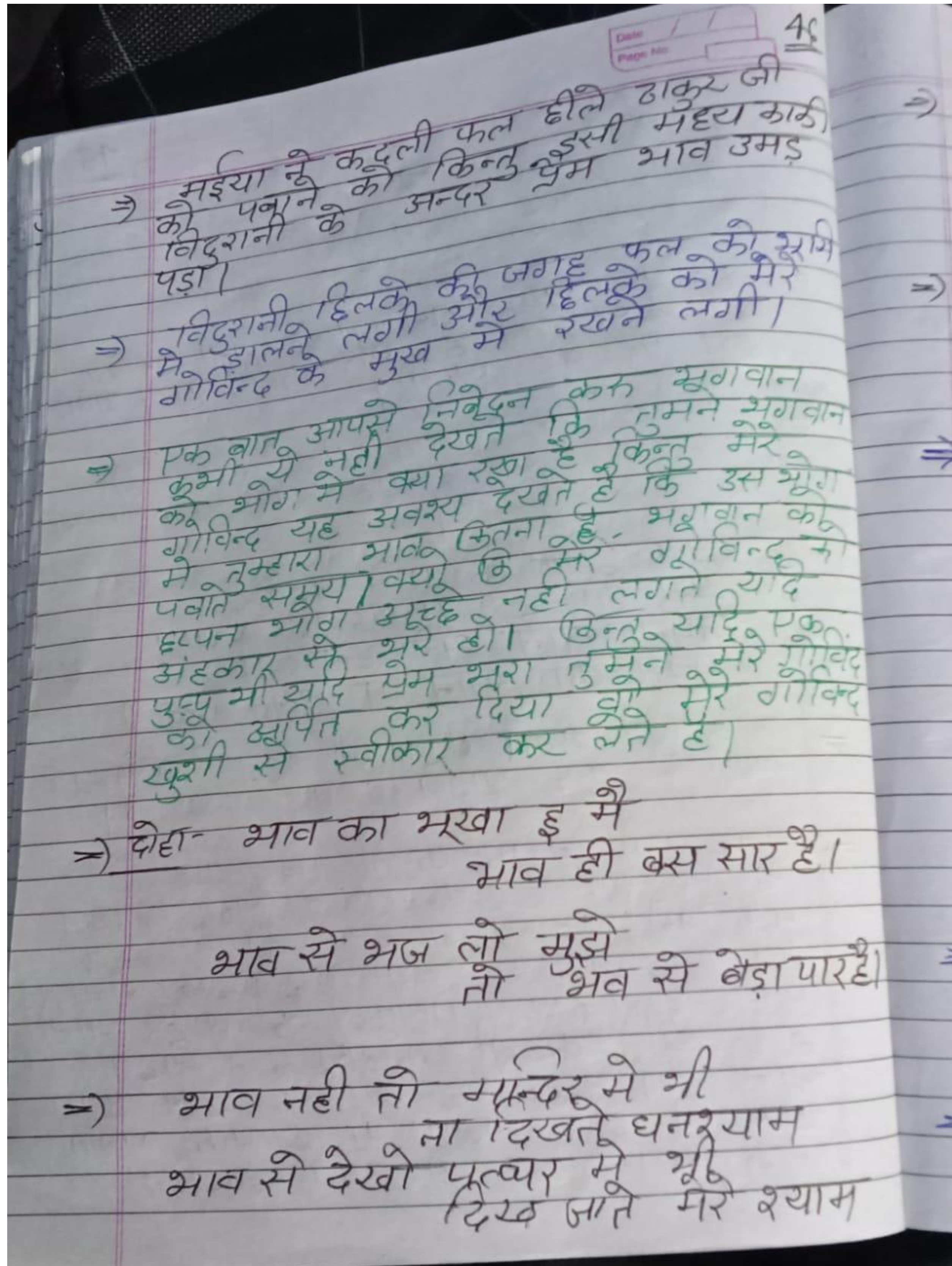
⇒ एक फटा सा आसन था बिदुरानी उसको ही बिछा देती है और कहती कृष्ण आओ इस पर बैठ जाओ।

⇒ मेरे गोविन्द द्वारिकाधीश सहज ही बिदुरानी के आग्रह पर उस आसन पर बैठ जाते है।

प्रबल प्रेम के पाले पड़कर
प्रभु को नियम बदलते देखा।
अपना मान भले टल जाए
भक्त का मान न टलते देखा॥

⇒ ठाकुर जी कहते काकी जी बहुत तेज से भूख लगी है, कुछ खाइबे के ताई देओ ना।

⇒ बिदुरानी विचार करती विदुर जी तो बाजार गए है। कन्हैया के लिए माखन मिश्री लेने किन्तु कन्हैया को तो बहुत तेज भूख लगी है क्या करूँ। बिदुरानी एक टोकरी लेकर पर्णकुटी के बाहर जाती है। और कदली (केला) फल तोड़कर लाती है। कहती है गोविन्द अब आप प्रेम से बैठ जाओ मै आपको पवाती जाऊ आप प्रेम से पाते जाओ।



45

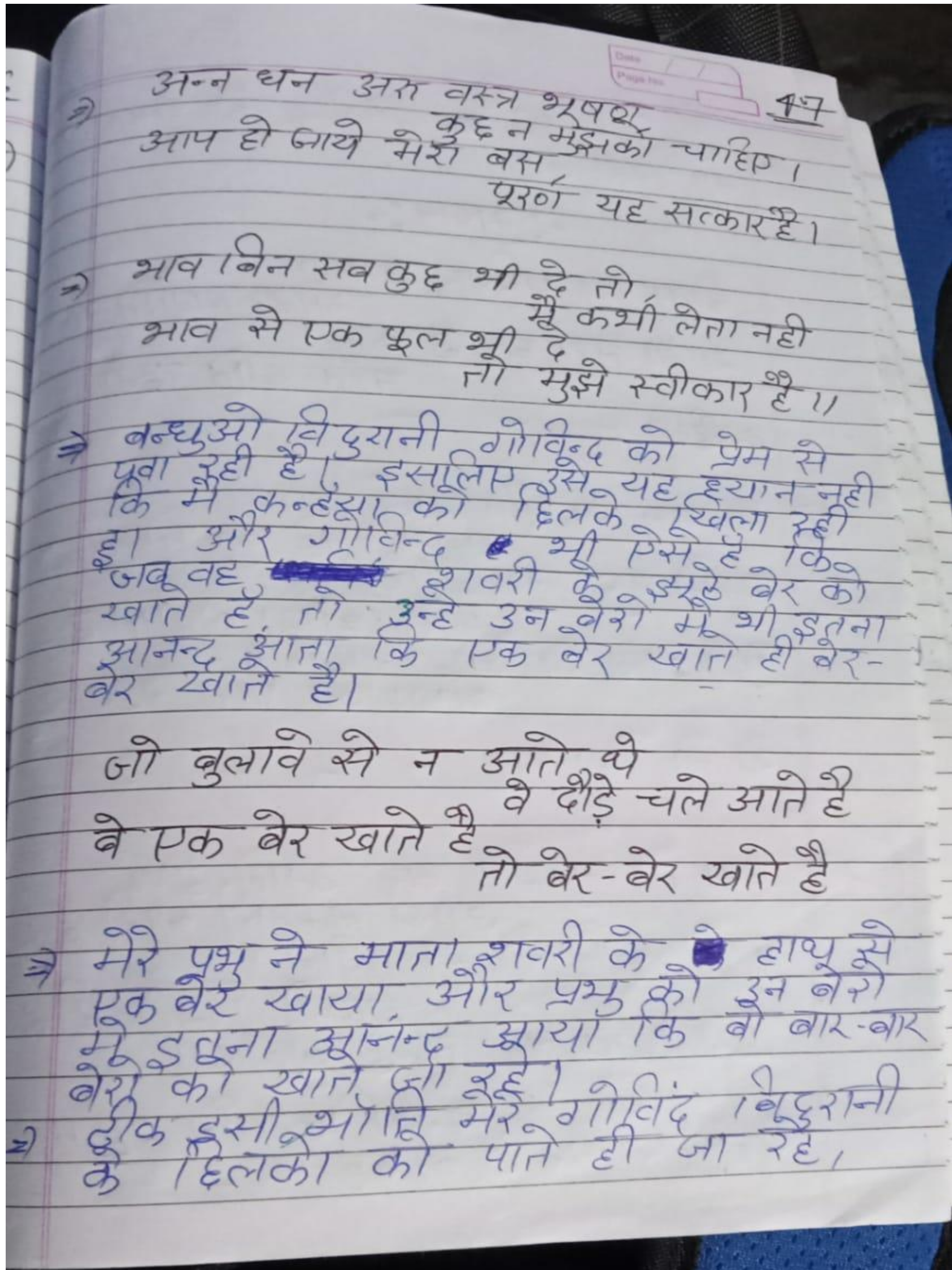
⇒ मईया ने कदली फल छीले ठाकुर जी को पवाने को किन्तु इसी मईया काकी विदुरानी के अन्दर प्रेम भाव उमड़ पड़ा।

⇒ विदुरानी छिलके की जगह फल को भूमि मे डालने लगी और छिलके को मेरे गोविन्द के मुख मे रखने लगी।

⇒ एक बात आपसे निवेदन करूं भगवान कभी ये नही देखते कि तुमने भगवान को भोग मे क्या रखा है किन्तु मेरे गोविन्द यह अवश्य देखते है कि उस भोग मे तुम्हारा भाव कितना है। भगवान को मेरे गोविन्द को पवाते समय। क्यूं कि मेरे गोविन्द को छप्पन भोग अच्छे नही लगते यदि अंहकार से भरे हो। किन्तु यदि एक पुष्प भी यदि प्रेम भरा तुमने मेरे गोविंद को अर्पित कर दिया वो मेरे गोविन्द खुशी से स्वीकार कर लेते है।

⇒ दोहा- भाव का भूखा हूं मै
भाव ही बस सार है।
भाव से भज लो मुझे
तो भव से बेड़ा पार है।

⇒ भाव नही तो मन्दिर मे भी
ना दिखते घनश्याम
भाव से देखो पत्थर मे भी
दिख जाते मेरे श्याम


47

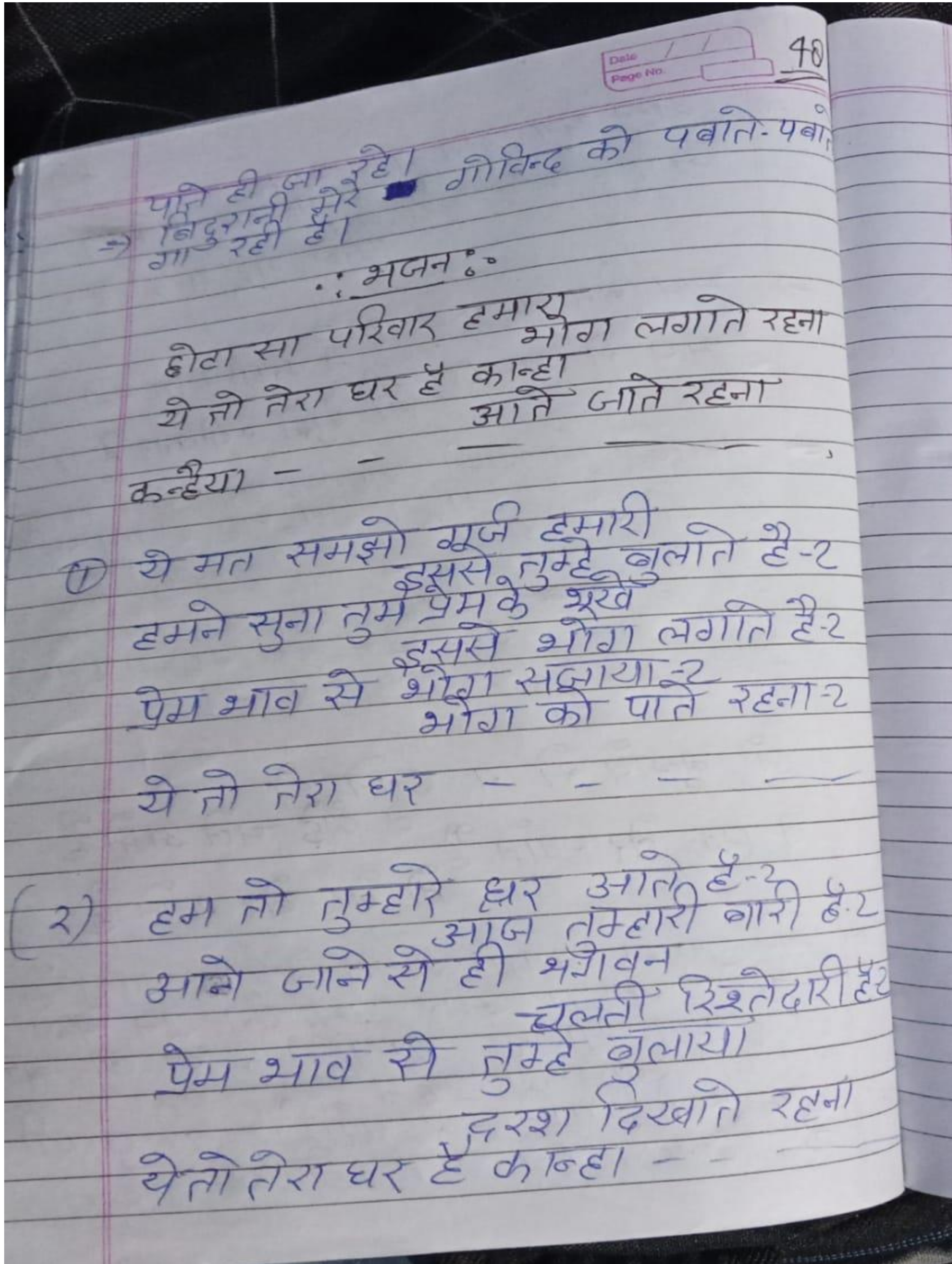
⇒ अन्न धन अरु वस्त्र भूषण
कुछ न मुझको चाहिए।
आप हो जाये मेरा बस
पूर्ण यह सत्कार है।

⇒ भाव बिन सब कुछ भी दे तो
मैं कभी लेता नही
भाव से एक फूल भी दे
तो मुझे स्वीकार है।।

⇒ बन्धुओ विदुरानी गोविन्द को प्रेम से खिला रही है, इसलिए उसे यह ध्यान नही कि मैं कन्हैया को छिलके खिला रही हूं। और गोविन्द भी ऐसे है कि जब वह शबरी के झूठे बेर को खाते है, तो उन्हे उन बेरो मे भी इतना आनन्द आता कि एक बेर खाते ही बेर-बेर खाते है।

जो बुलावे से न आते पै
वे दौड़े चले आते है
वे एक बेर खाते है
तो बेर-बेर खाते है

⇒ मेरे प्रभु ने माता शबरी के हाथ से एक बेर खाया, और प्रभु को उन बेरो मे इतना आनन्द आया कि वो बार-बार बेरो को खाते जा रहे।
⇒ ठीक इसी भांति मेरे गोविंद बिदुरानी के छिलको को पाते ही जा रहे।



40

पते ही जा रहे। गोविन्द को पबाते-पबाते

→ बिदुरानी मेरे गा रही है।

:: भजन ::

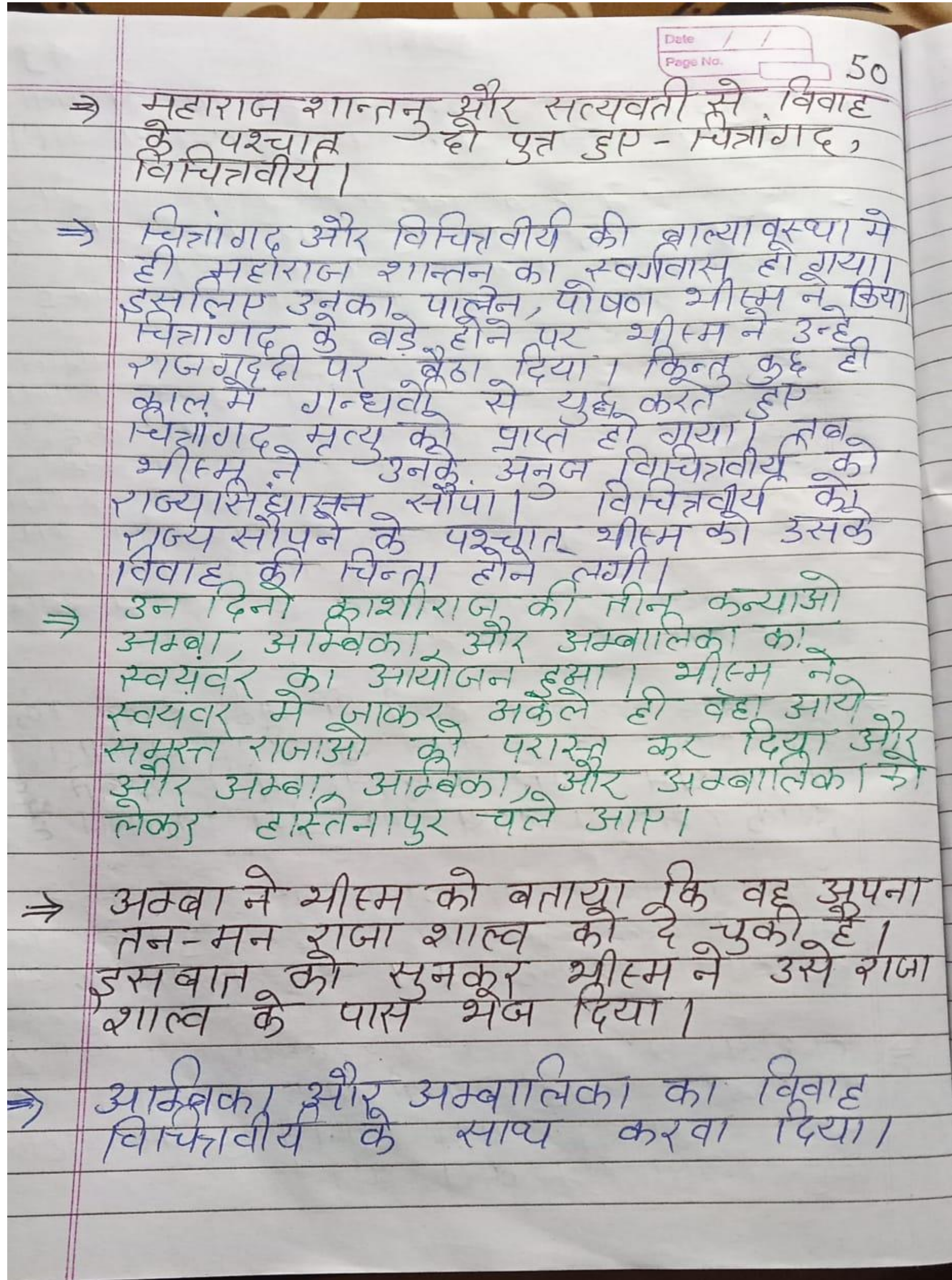
छोटा सा परिवार हमारा भोग लगाते रहना
ये तो तेरा घर है कान्हा आते जाते रहना
कन्हैया — — —

(1) ये मत समझो मर्जी हमारी इससे तुम्हे बुलाते है-2
हमने सुना तुम प्रेम के भूखे इससे भोग लगाते है-2
प्रेम भाव से भोग सजाया-2 भोग को पाते रहना-2
ये तो तेरा घर — — —

(2) हम तो तुम्हारे घर आते है-2 आज तुम्हारी बारी है-2
आने जाने से ही भगवन चलती रिश्तेदारी है-2
प्रेम भाव से तुम्हे बुलाया दरश दिखाते रहना
ये तो तेरा घर है कान्हा — —

Date / /
Page No. 49

- बन्धुओ विदुरानी भगवान को प्रेम से खिला रही थी, तभी काका विदुर वहा आ गए।
- विदुर जी ने देखा विदुरानी गुदा-गुदा तो भूमि पर फेंक रही है और छिलके-छिलके भगवान के मुख मे रख रही है। विदुर जी ने दौड़ कर विदुरानी का हाथ पकड़ लिया।
- विदुर जी कहते विदुरानी तू क्या पागल हो गई जो मेरे लाला को छिलके खिला रही है। ठाकुर जी काका विदुर से कहते आपने बीच से आकर अच्छा नही किया। मुझे जो काकी विदुरानी के हाथो छिलके खाने से आनन्द आ रहा था वो आनन्द तो मुझे अपनी पटरानियो के हाथो भाँति-भाँति के व्यजन खाने मे भी नही आता।
- बन्धुओ भगवान कभी ये नही देखते कि मेरा भक्त किस जाति का है, धनवान है या निर्धन, मेरे प्रभु तो यही देखते है इसके (भक्त) हृदय मे प्रेम कितना है।
- महात्मा विदुर तो दासी पुत्र थे किन्तु मेरे गोविन्द को तो उन दासी पुत्र के पत्नी के हाथो छिलके खाने मे ही आनन्द आया
- बन्धुओ महात्मा विदुर दासी पुत्र थे आप को बात थोड़ी जमी नही होगी। किन्तु यह सत्य है आइए जानते है कि महात्मा विदुर दासी पुत्र कैसे थे।



50

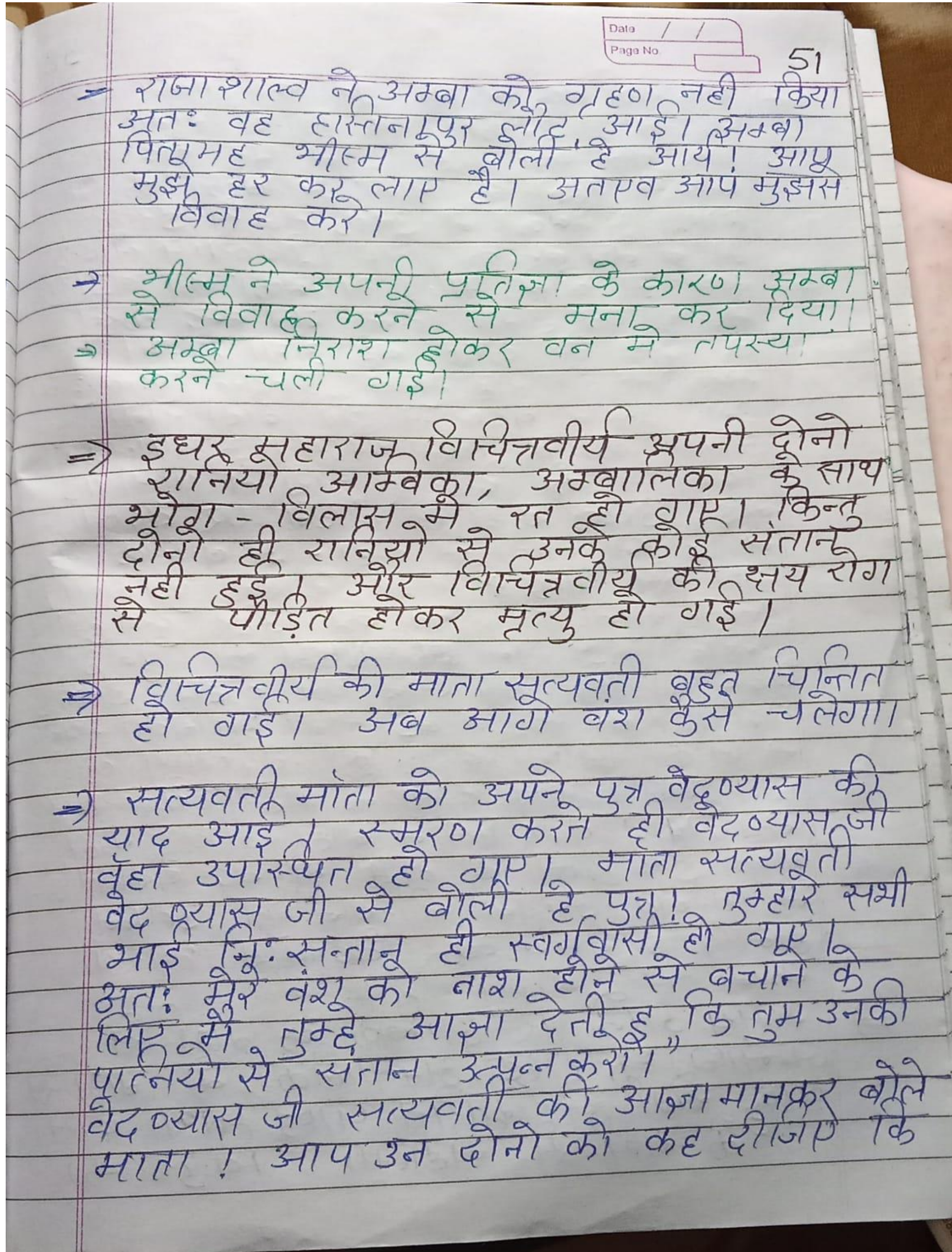
⇒ महाराज शान्तनु और सत्यवती से विवाह के पश्चात दो पुत्र हुए- चित्रांगद, विचित्रवीर्य।

⇒ चित्रांगद और विचित्रवीर्य की बाल्यावस्था मे ही महाराज शान्तन का स्वर्गवास हो गया। इसलिए उनका पालन, पोषण भीष्म ने किया। चित्रांगद के बड़े होने पर भीष्म ने उन्हे राजगद्दी पर बैठा दिया। किन्तु कुछ ही काल मे गन्धर्वो से युद्ध करते हुए चित्रांगद मृत्यु को प्राप्त हो गया। तब भीष्म ने उनके अनुज विचित्रवीर्य को राज्यसिंहासन सौंपा। विचित्रवीर्य को राज्य सौंपने के पश्चात भीष्म को उसके विवाह की चिन्ता होने लगी।

⇒ उन दिनो काशीराज की तीन कन्याओ अम्बा, अम्बिका, और अम्बालिका का स्वयंवर का आयोजन हुआ। भीष्म ने स्वयवर मे जाकर अकेले ही वहां आये समस्त राजाओ को परास्त कर दिया और और अम्बा, अम्बिका, और अम्बालिका को लेकर हस्तिनापुर चले आए।

⇒ अम्बा ने भीष्म को बताया कि वह अपना तन-मन राजा शाल्व को दे चुकी है। इसबात को सुनकर भीष्म ने उसे राजा शाल्व के पास भेज दिया।

⇒ अम्बिका और अम्बालिका का विवाह विचित्रवीर्य के साथ करवा दिया।



51

→ राजा शाल्व ने अम्बा को ग्रहण नही किया अतः वह हस्तिनापुर लौट आई। अम्बा पितामह भीष्म से बोली हे आर्य! आप मुझे हर कर लाए है। अतएव आप मुझसे विवाह करे।

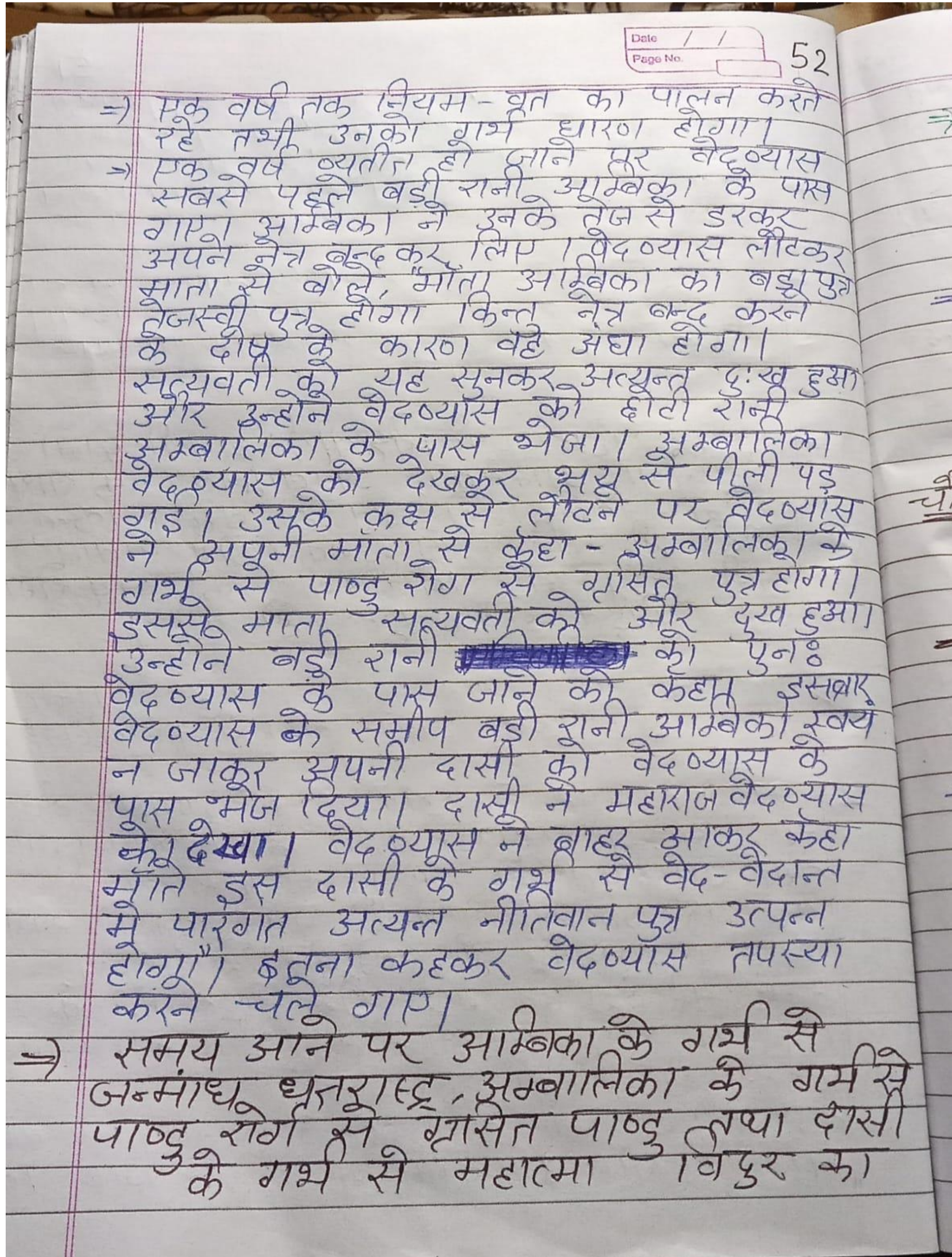
→ भीष्म ने अपनी प्रतिज्ञा के कारण अम्बा से विवाह करने से मना कर दिया।

→ अम्बा निराश होकर वन मे तपस्या करने चली गई।

⇒ इधर महाराज विचित्रवीर्य अपनी दोनो रानियो अम्बिका, अम्बालिका के साथ भोग - विलास मे रत हो गए। किन्तु दोनो ही रानियो से उनके कोई संतान नही हुई। और विचित्रवीर्य की क्षय रोग से पीड़ित होकर मृत्यु हो गई।

⇒ विचित्रवीर्य की माता सत्यवती बहुत चिन्तित हो गई। अब आगे वंश कैसे चलेगा।

⇒ सत्यवती माता को अपने पुत्र वेदव्यास की याद आई। स्मरण करते ही वेदव्यास जी वहा उपस्थित हो गए। माता सत्यवती वेद व्यास जी से बोली हे पुत्र! तुम्हारे सभी भाई निःसन्तान ही स्वर्गवासी हो गए। अतः मेरे वंश को नाश होने से बचाने के लिए मै तुम्हे आज्ञा देती हु, कि तुम उनकी पत्नियो से संतान उत्पन्न करो।" वेदव्यास जी सत्यवती की आज्ञा मानकर बोले माता ! आप उन दोनो को कह दीजिए कि

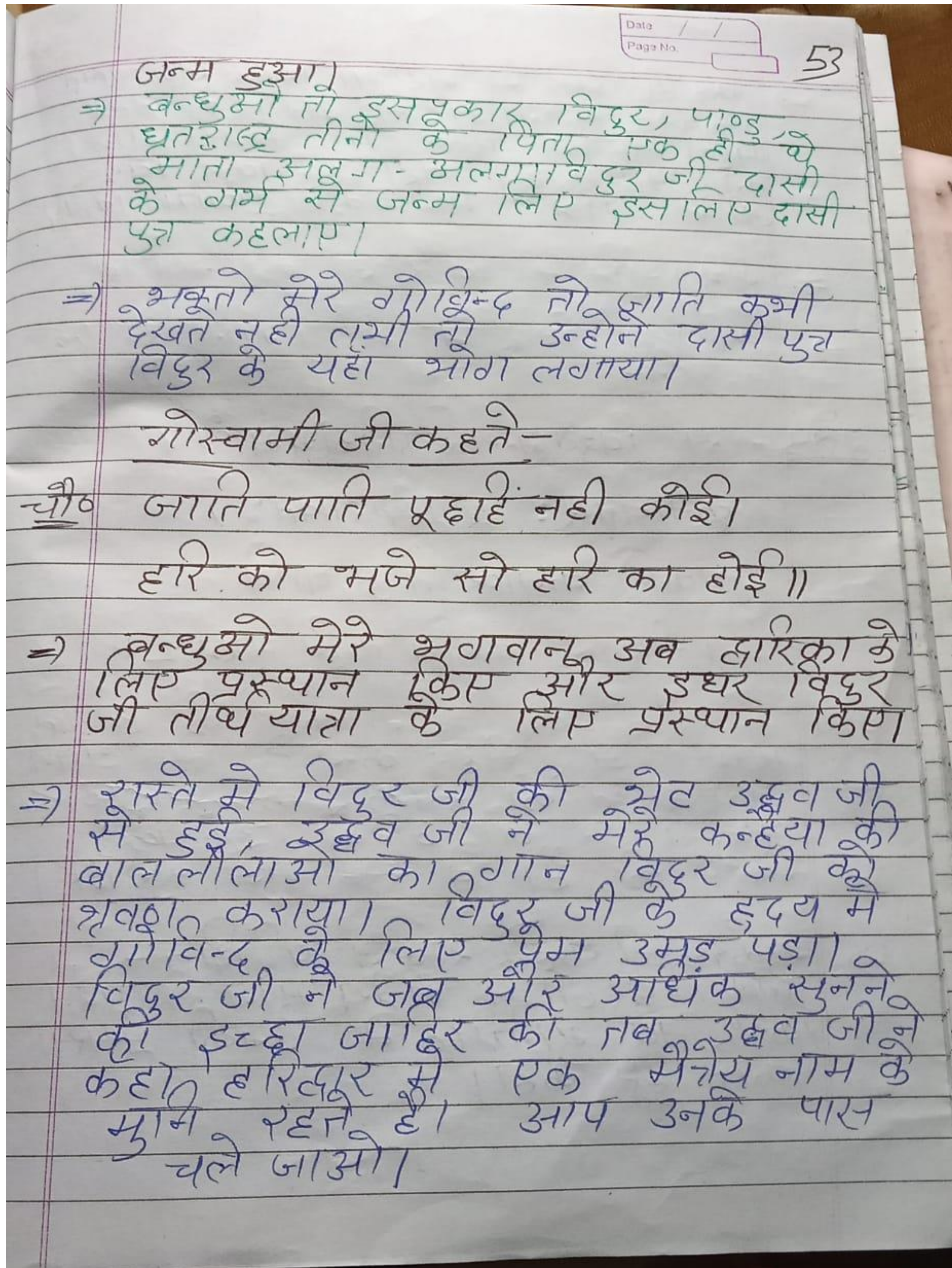


Date / /
Page No. 52

⇒ एक वर्ष तक नियम-व्रत का पालन करते रहे तभी उनको गर्भ धारण होगा।

⇒ एक वर्ष व्यतीत हो जाने पर वेदव्यास सबसे पहले बड़ी रानी आम्बिका के पास गए। आम्बिका ने उनके तेज से डरकर अपने नेत्र बन्द कर लिए। वेदव्यास लौटकर माता से बोले, "माता आम्बिका का बड़ा पुत्र तेजस्वी पुत्र होगा किन्तु नेत्र बन्द करने के दोष के कारण वह अंधा होगा। सत्यवती को यह सुनकर अत्यन्त दुःख हुआ और उन्होंने वेदव्यास को छोटी रानी अम्बालिका के पास भेजा। अम्बालिका वेदव्यास को देखकर भय से पीली पड़ गई। उसके कक्ष से लौटने पर वेदव्यास ने अपनी माता से कहा - अम्बालिका के गर्भ से पाण्डु रोग से ग्रसित पुत्र होगा। इससे माता सत्यवती को और दुःख हुआ। उन्होंने बड़ी रानी को पुनः वेदव्यास के पास जाने को कहा। इसबार वेदव्यास के समीप बड़ी रानी आम्बिका स्वयं न जाकर अपनी दासी को वेदव्यास के पास भेज दिया। दासी ने महाराज वेदव्यास को देखा। वेदव्यास ने बाहर आकर कहा "माते इस दासी के गर्भ से वेद-वेदान्त मे पारंगत अत्यन्त नीतिवान पुत्र उत्पन्न होगा"। इतना कहकर वेदव्यास तपस्या करने चले गए।

⇒ समय आने पर आम्बिका के गर्भ से जन्मांध धृतराष्ट्र, अम्बालिका के गर्भ से पाण्डु रोग से ग्रसित पाण्डु तथा दासी के गर्भ से महात्मा विदुर का



53

जन्म हुआ।
=> बन्धुओ तो इसप्रकार विदुर, पाण्डु, धृतराष्ट्र तीनो के पिता एक ही थे माता अलग-अलग। विदुर जी दासी के गर्भ से जन्म लिए इसलिए दासी पुत्र कहलाए।

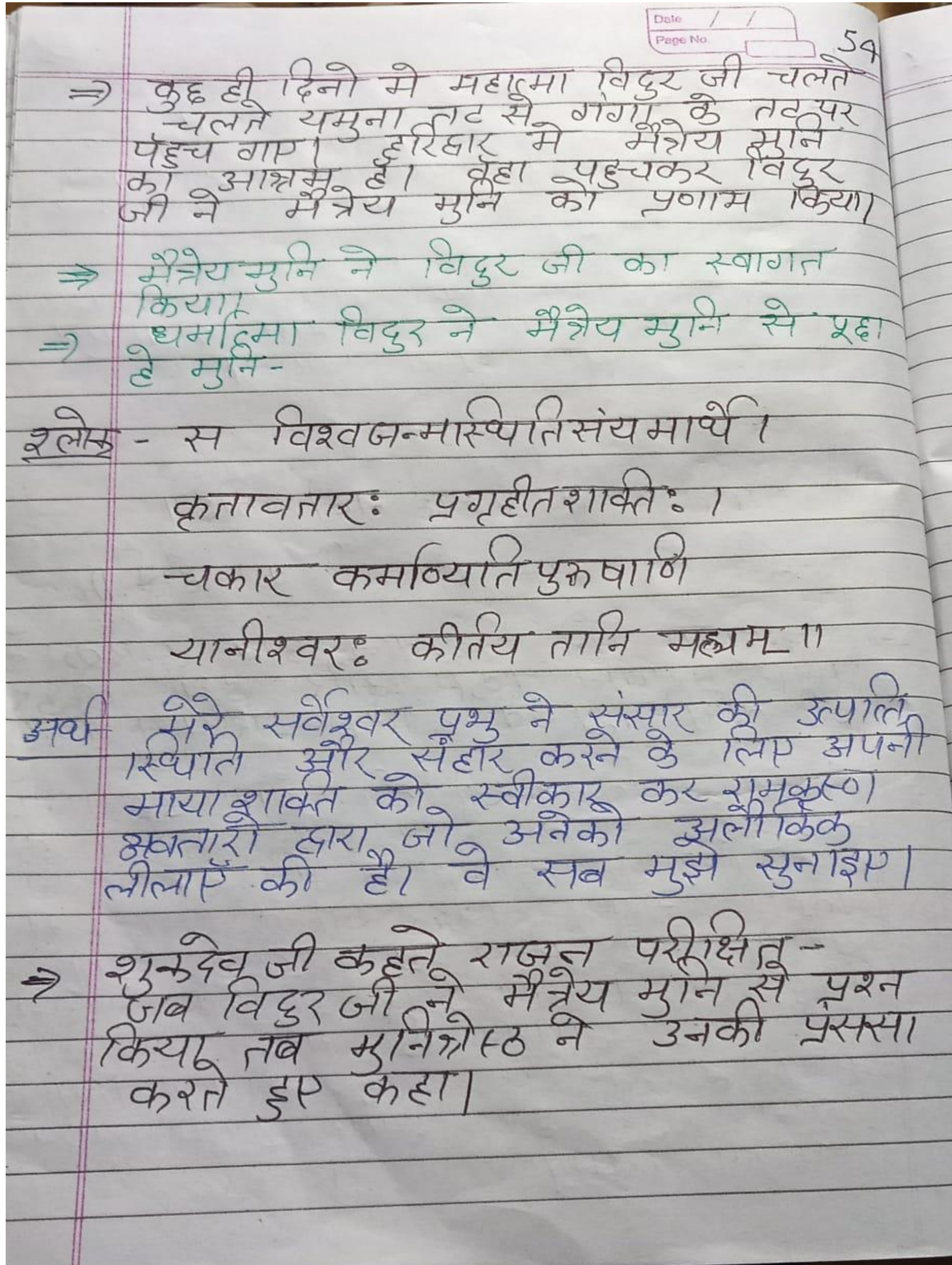
=> भक्तो मेरे गोविन्द तो जाति कभी देखते नही तभी तो उन्होने दासी पुत्र विदुर के यहा भोग लगाया।

गोस्वामी जी कहते—

चौ० जाति पाति पूछहि नही कोई।
हरि को भजे सो हरि का होई॥

=> बन्धुओ मेरे भगवान् अब द्वारिका के लिए प्रस्थान किए और इधर विदुर जी तीर्थ यात्रा के लिए प्रस्थान किए

=> रास्ते मे विदुर जी की भेट उद्धव जी से हुई, उद्धव जी ने मेरे कन्हैया की बाल लीलाओ का गान विदुर जी को श्रवण कराया। विदुर जी के हृदय मे गोविन्द के लिए प्रेम उमड़ पड़ा। विदुर जी ने जब और अधिक सुनने की इच्छा जाहिर की तब उद्धव जी ने कहा हरिद्वार मे एक मैत्रेय नाम के मुनि रहते है। आप उनके पास चले जाओ।



Date / /
Page No. 54

⇒ कुछ ही दिनो मे महात्मा विदुर जी चलते चलते यमुना तट से गंगा के तट पर पहुच गए। हरिद्वार मे मैत्रेय मुनि का आश्रम है। वहा पहुचकर विदुर जी ने मैत्रेय मुनि को प्रणाम किया।

⇒ मैत्रेय मुनि ने विदुर जी का स्वागत किया।

⇒ धर्मात्मा विदुर ने मैत्रेय मुनि से पूछा हे मुनि-

श्लोक - स विश्वजन्मस्थितिसंयमार्थे ।

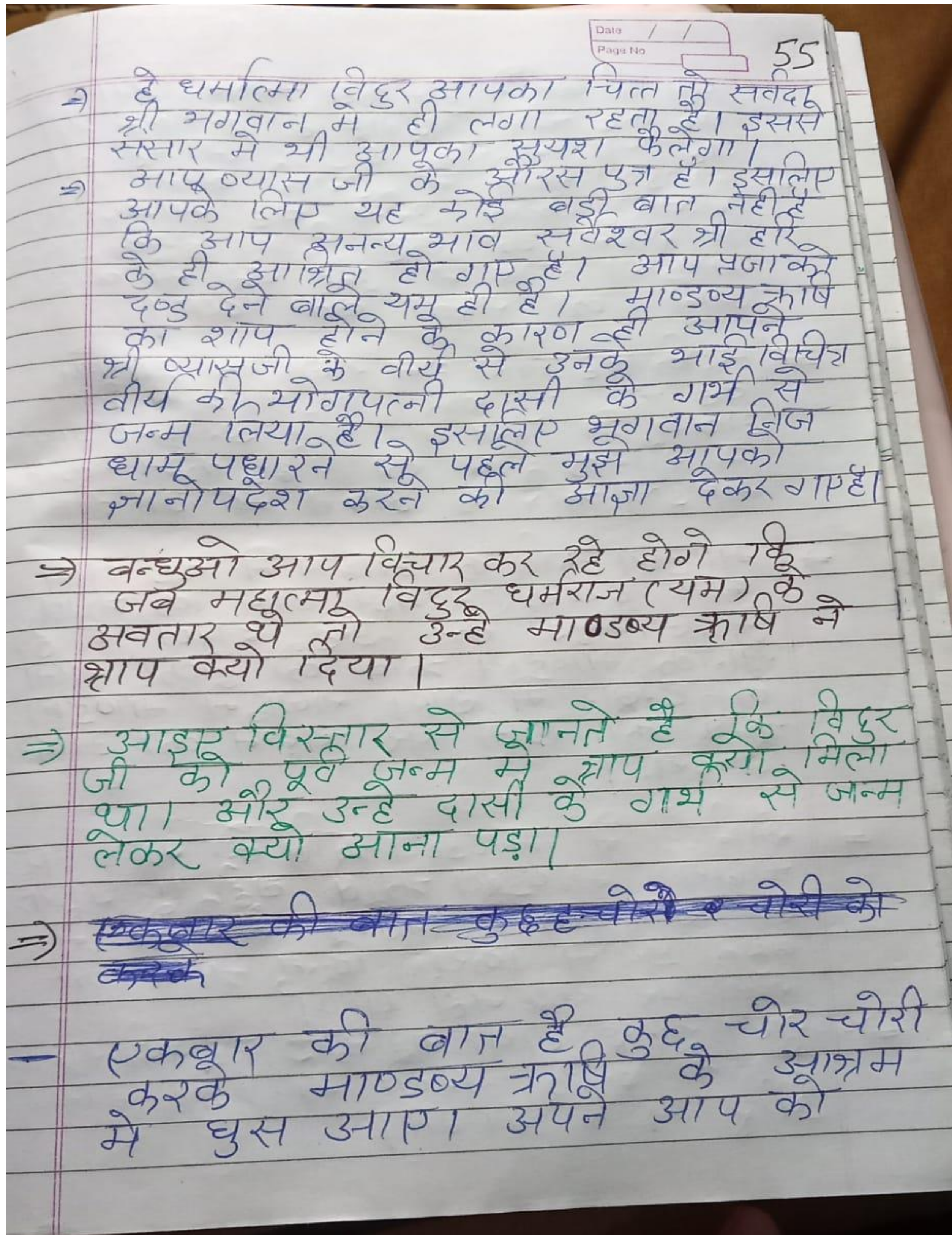
कृतावतारः प्रगृहीतशक्तिः ।

चकार कर्माण्यति पुरुषाणि

यानीश्वरः कीर्तय तानि मह्यम ॥

अर्थ - जैसे सर्वेश्वर प्रभु ने संसार की उत्पत्ति, स्थिति और संहार करने के लिए अपनी माया शक्ति को स्वीकार कर रामकृष्ण अवतारो द्वारा जो अनेको अलौकिक लीलाएँ की है। वे सब मुझे सुनाइए।

⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित - जब विदुर जी ने मैत्रेय मुनि से प्रश्न किया तब मुनिश्रेष्ठ ने उनकी प्रसंसा करते हुए कहा।



Date / /
Page No 55

⇒ हे धर्मात्मा विदुर आपका चित्त तो सर्वदा श्री भगवान मे ही लगा रहता है। इससे संसार मे भी आपका सुयश फैलेगा।

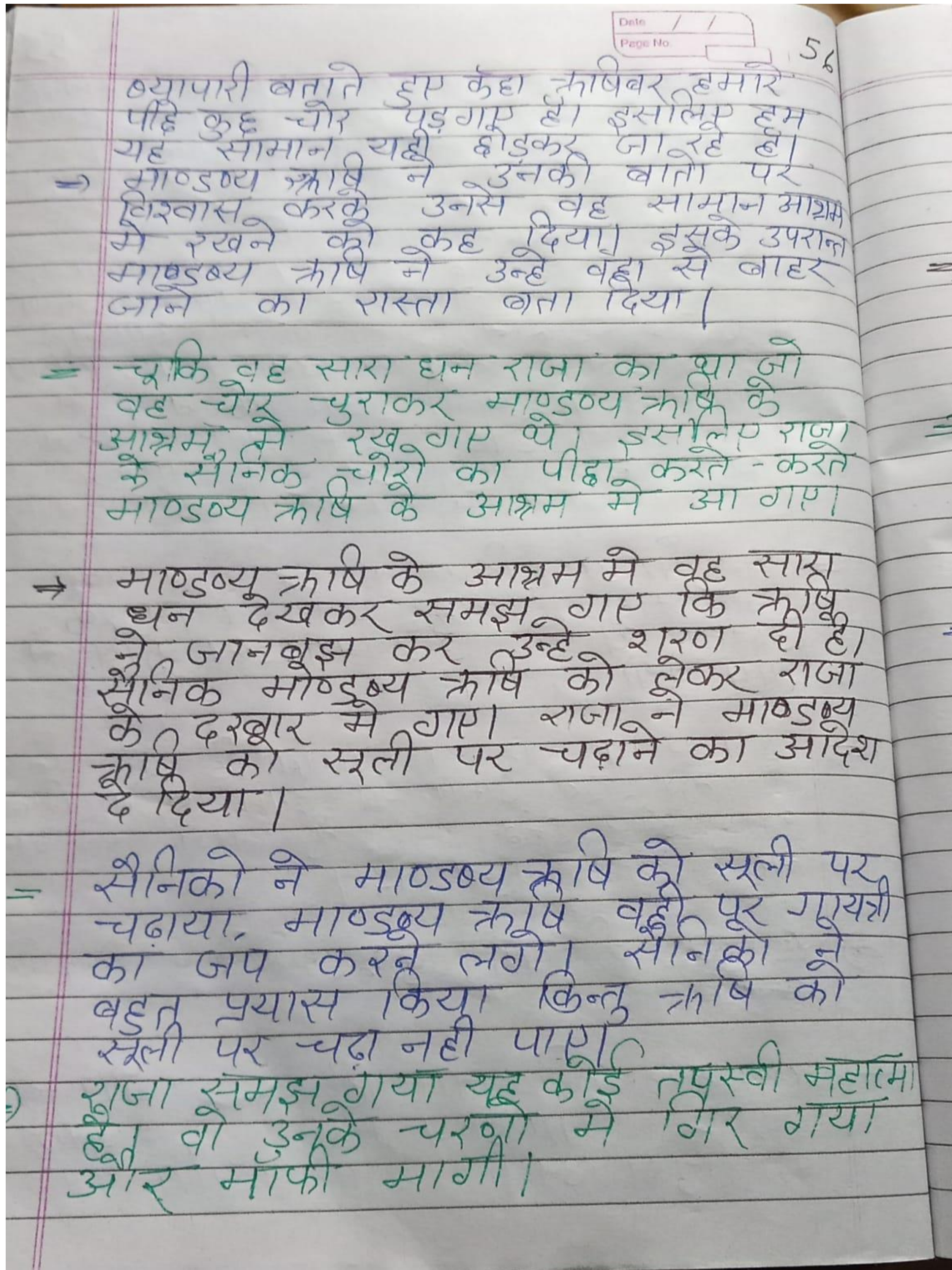
⇒ आप व्यास जी के औरस पुत्र है। इसलिए आपके लिए यह कोई बड़ी बात नहीं है कि आप अनन्य भाव सर्वेश्वर श्री हरि के ही आश्रित हो गए है। आप प्रजा को दण्ड देने वाले यम ही है। माण्डव्य ऋषि का शाप होने के कारण ही आपने श्री व्यासजी के वीर्य से उनके भाई विचित्र वीर्य की भोगपत्नी दासी के गर्भ से जन्म लिया है। इसलिए भगवान निज धाम पधारने से पहले मुझे आपको ज्ञानोपदेश करने की आज्ञा देकर गए है।

⇒ बन्धुओ आप विचार कर रहे होगे कि जब महात्मा विदुर धर्मराज (यम) के अवतार थे तो उन्हे माण्डव्य ऋषि ने श्राप क्यो दिया।

⇒ आइए विस्तार से जानते है कि विदुर जी को पूर्व जन्म मे श्राप क्यो मिला था। और उन्हे दासी के गर्भ से जन्म लेकर क्यो आना पड़ा।

⇒ ~~एकबार की बात कुछ चोरो ने चोरी को करके~~

— एकबार की बात है कुछ चोर चोरी करके माण्डव्य ऋषि के आश्रम मे घुस आए। अपने आप को



56

ब्यापारी बताते हुए कहा ऋषिवर हमारे पीछे कुछ चोर पड़ गए है इसलिए हम यह सामान यही छोड़कर जा रहे है।

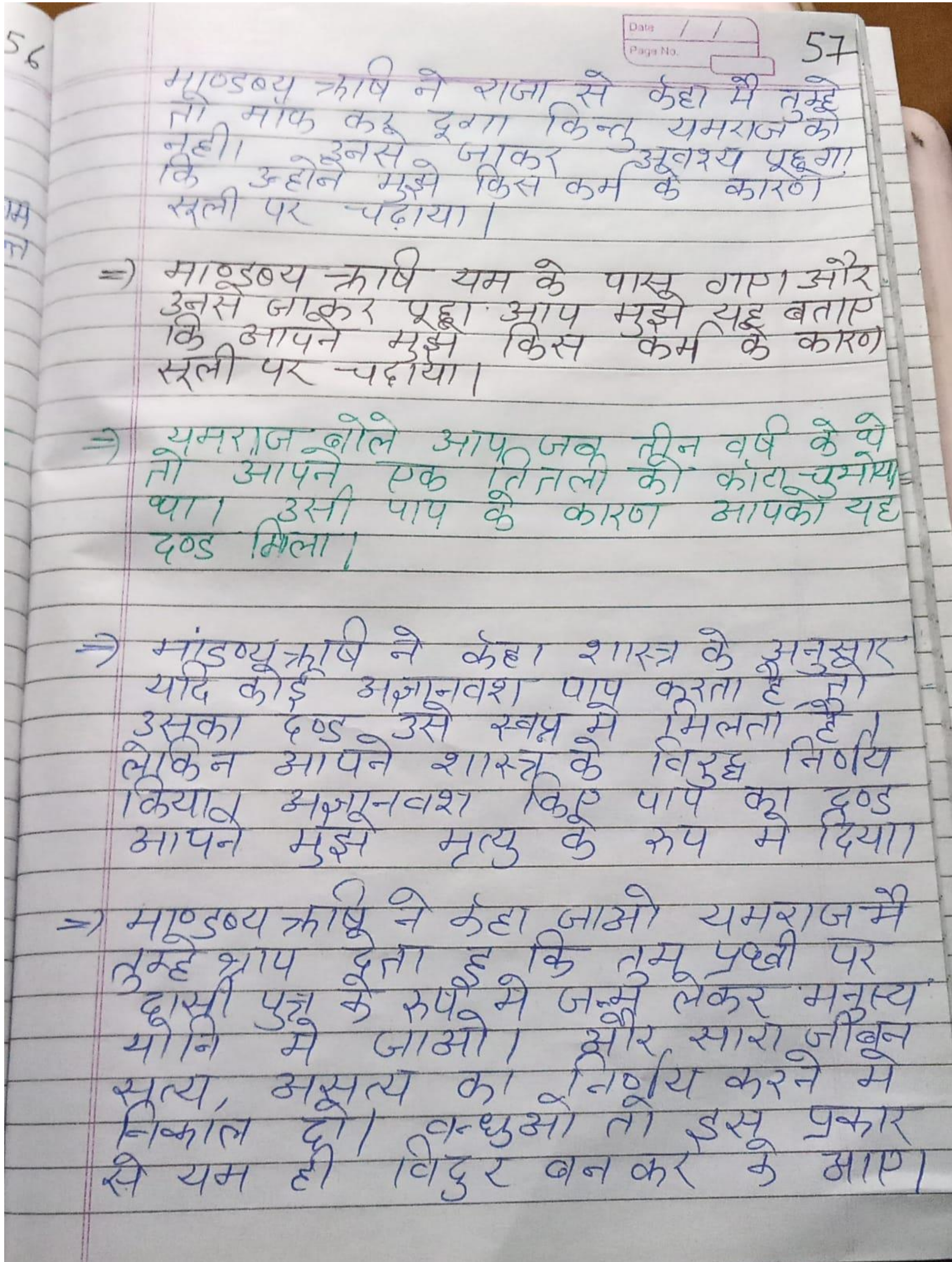
⇒ माण्डव्य ऋषि ने उनकी बातो पर विश्वास करके उनसे वह सामान आश्रम मे रखने को कह दिया। इसके उपरान्त माण्डव्य ऋषि ने उन्हे वहा से बाहर जाने का रास्ता बता दिया।

= चूकि वह सारा धन राजा का था जो वह चोर चुराकर माण्डव्य ऋषि के आश्रम मे रख गए थे। इसलिए राजा के सैनिक चोरो का पीछा करते-करते माण्डव्य ऋषि के आश्रम मे आ गए।

⇒ माण्डव्य ऋषि के आश्रम मे वह सारा धन देखकर समझ गए कि ऋषि ने जानबूझ कर उन्हे शरण दी है। सैनिक माण्डव्य ऋषि को लेकर राजा के दरबार मे गए। राजा ने माण्डव्य ऋषि को सूली पर चढ़ाने का आदेश दे दिया।

= सैनिको ने माण्डव्य ऋषि को सूली पर चढ़ाया, माण्डव्य ऋषि वही पर गायत्री का जप करने लगे। सैनिको ने बहुत प्रयास किया किन्तु ऋषि को सूली पर चढ़ा नही पाए।

⇒ राजा समझ गया यह कोई तपस्वी महात्मा है तो उनके चरणो मे गिर गया और माफी मागी।



57

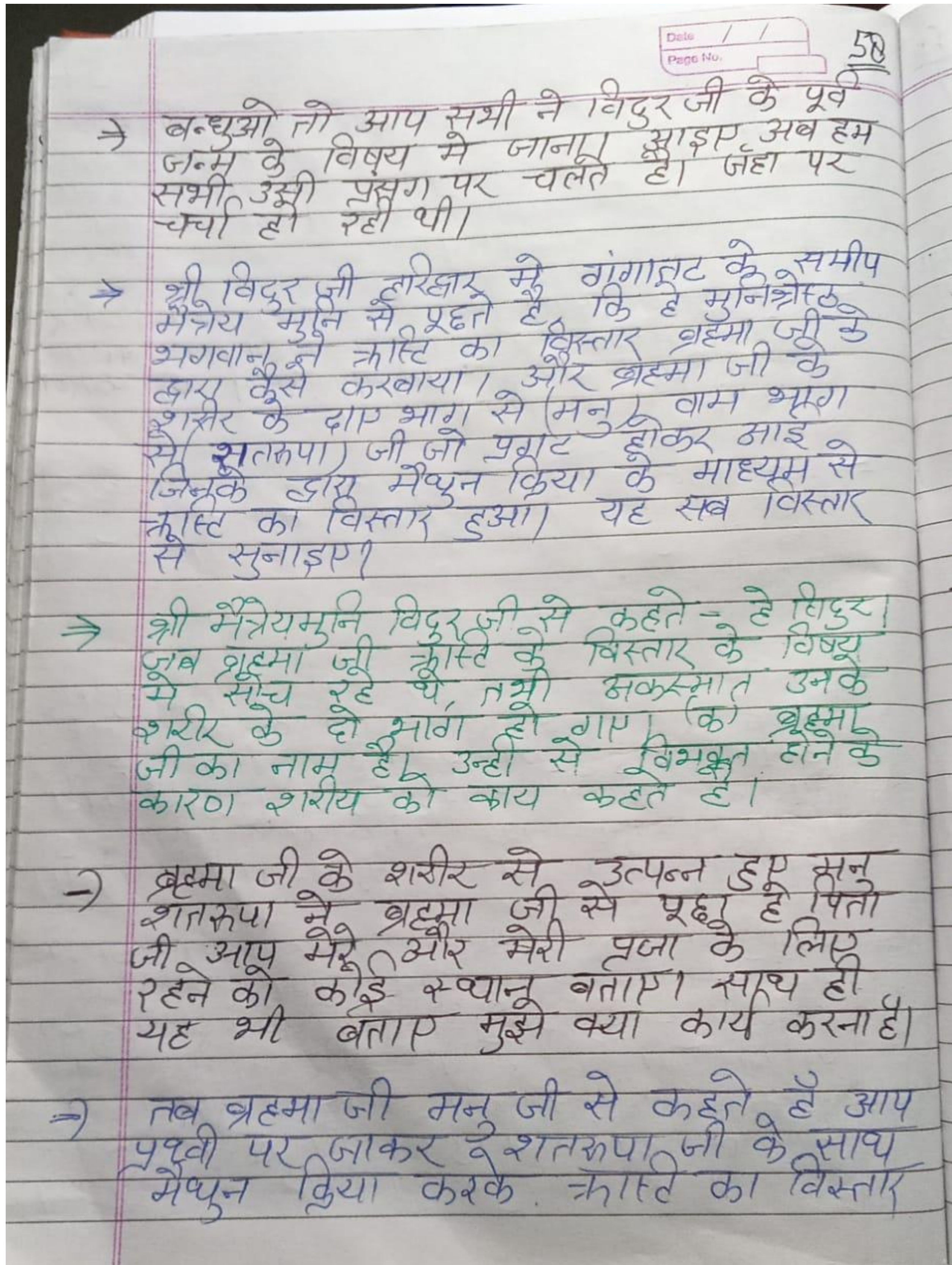
माण्डव्य ऋषि ने राजा से कहा मै तुम्हे तो माफ कर दूंगा किन्तु यमराज को नही। उनसे जाकर अवश्य पूछूंगा कि उन्होने मुझे किस कर्म के कारण सूली पर चढ़ाया।

=> माण्डव्य ऋषि यम के पास गए। और उनसे जाकर पूछा आप मुझे यह बताए कि आपने मुझे किस कर्म के कारण सूली पर चढ़ाया।

=> यमराज बोले आप जब तीन वर्ष के थे तो आपने एक तितली को कांटा चुभोया था। उसी पाप के कारण आपको यह दण्ड मिला।

=> मांडव्य ऋषि ने कहा शास्त्र के अनुसार यदि कोई अज्ञानवश पाप करता है तो उसका दण्ड उसे स्वप्न मे मिलता है। लेकिन आपने शास्त्र के विरुद्ध निर्णय किया। अज्ञानवश किए पाप का दण्ड आपने मुझे मृत्यु के रूप मे दिया।

=> माण्डव्य ऋषि ने कहा जाओ यमराज मै तुम्हे श्राप देता हूं कि तुम पृथ्वी पर दासी पुत्र के रूप मे जन्म लेकर मनुष्य योनि मे जाओ। और सारा जीवन सत्य, असत्य का निर्णय करने मे निकाल दो। बन्धुओ तो इस प्रकार से यम ही विदुर बन कर के आए।


58

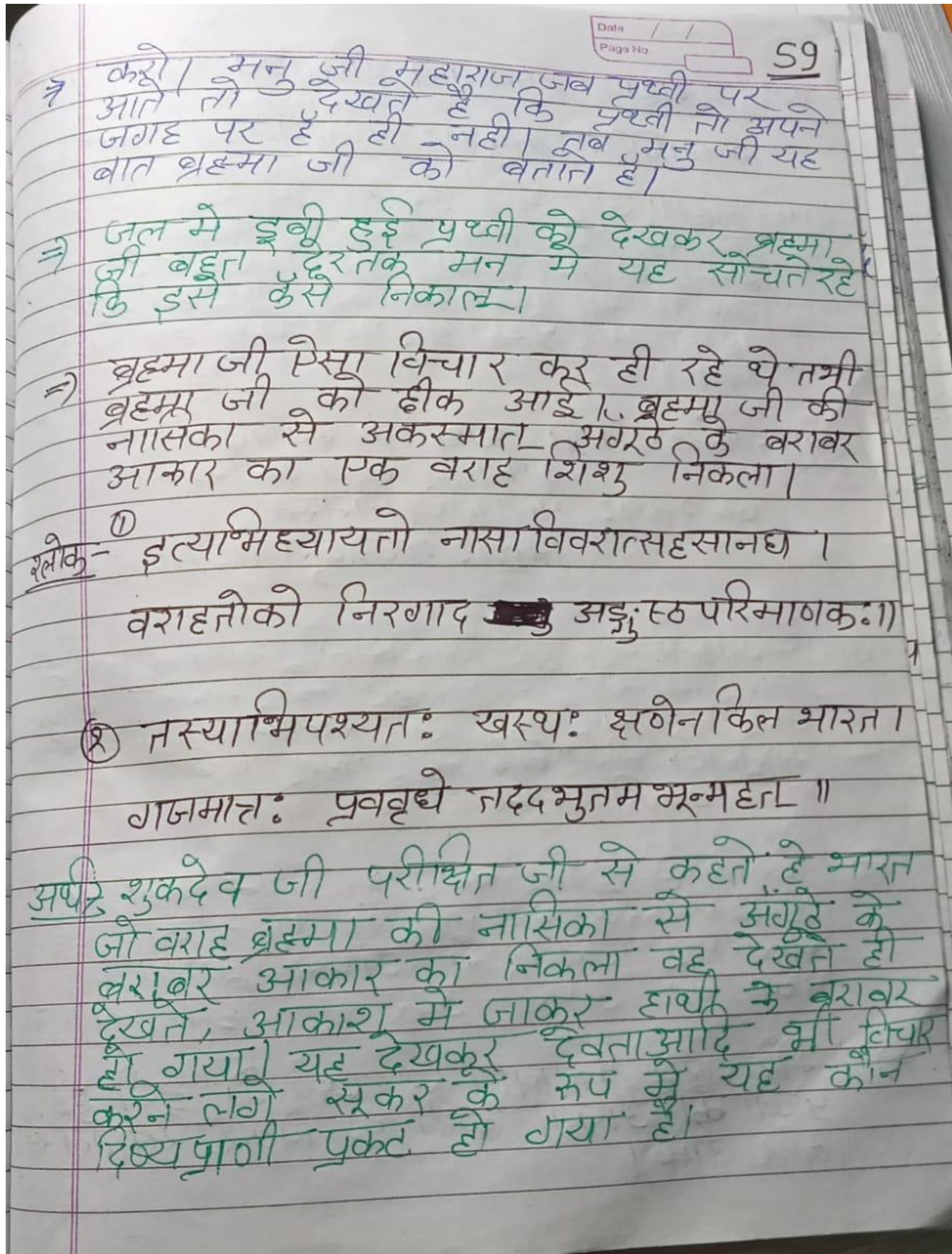
→ बन्धुओ तो आप सभी ने विदुर जी के पूर्व जन्म के विषय मे जाना। आइए अब हम सभी उसी प्रसंग पर चलते है। जहा पर चर्चा हो रही थी।

→ श्री विदुर जी हरिद्वार मे गंगातट के समीप मैत्रेय मुनि से पूछते है कि हे मुनिश्रेष्ठ भगवान ने श्रष्टि का विस्तार ब्रह्मा जी के द्वारा कैसे करवाया। और ब्रह्मा जी के शरीर के दाए भाग से (मनु) वाम भाग से (शतरूपा) जी जो प्रगट होकर आई जिनके द्वारा मैथुन क्रिया के माध्यम से श्रष्टि का विस्तार हुआ। यह सब विस्तार से सुनाइए।

→ श्री मैत्रेयमुनि विदुर जी से कहते - हे विदुर! जब ब्रह्मा जी श्रष्टि के विस्तार के विषय मे सोच रहे थे, तभी अकस्मात उनके शरीर के दो भाग हो गए। (क) ब्रह्मा जी का नाम है, उन्ही से विभक्त होने के कारण शरीर को काय कहते है।

→ ब्रह्मा जी के शरीर से उत्पन्न हुए मनु शतरूपा ने ब्रह्मा जी से पूछा हे पिता जी आप मेरे और मेरी प्रजा के लिए रहने को कोई स्थान बताए। साथ ही यह भी बताए मुझे क्या कार्य करना है।

→ तब ब्रह्मा जी मनु जी से कहते है आप पृथ्वी पर जाकर शतरूपा जी के साथ मैथुन क्रिया करके श्रष्टि का विस्तार



59

⇒ करो। मनु जी महाराज जब पृथ्वी पर आते तो देखते है कि पृथ्वी तो अपने जगह पर है ही नही। तब मनु जी यह बात ब्रह्मा जी को बताते है।

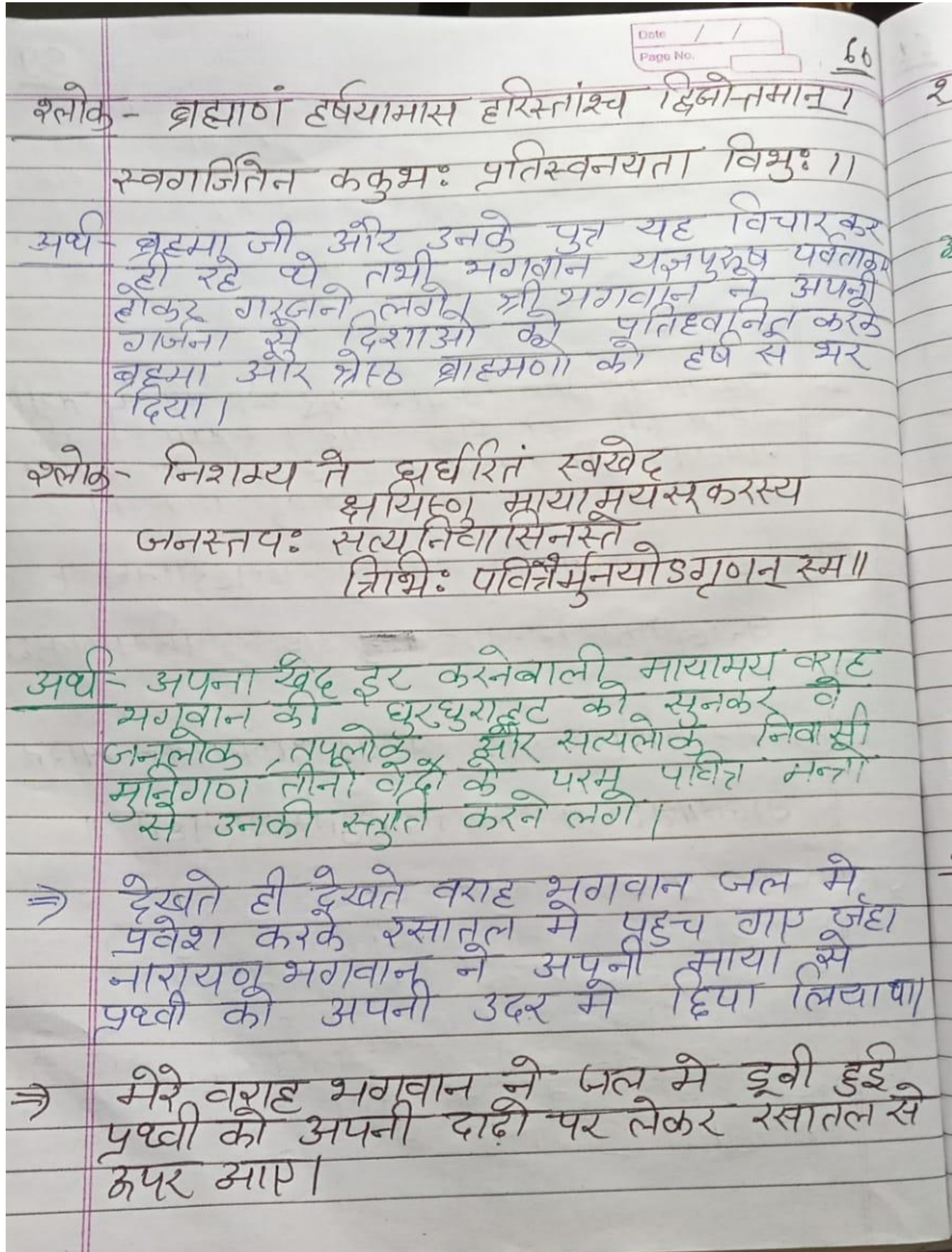
⇒ जल मे डूबी हुई पृथ्वी को देखकर ब्रह्मा जी बहुत देर तक मन मे यह सोचते रहे कि इसे कैसे निकालू।

⇒ ब्रह्मा जी ऐसा विचार कर ही रहे थे तभी ब्रह्मा जी को छीक आई। ब्रह्मा जी की नासिका से अकस्मात अंगूठे के बराबर आकार का एक वराह शिशु निकला।

श्लोक- ① इत्यभिध्यायतो नासाविवरात्सहसानघ ।
वराहतोको निरगाद अङ्गुष्ठपरिमाणकः॥

② तस्याभिपश्यतः खस्थः क्षणेन किल भारत।
गजमात्रः प्रववृधे तदद्भुतमभून्महत् ॥

अर्थ- शुकदेव जी परीक्षित जी से कहते है भारत जो वराह ब्रह्मा की नासिका से अंगूठे के बराबर आकार का निकला वह देखते ही देखते, आकाश मे जाकर हाथी के बराबर हो गया। यह देखकर देवता आदि भी विचार करने लगे सूकर के रूप मे यह कौन दिव्य प्राणी प्रकट हो गया है।



Date / /
Page No. 60

श्लोक- ब्राह्मणं हर्षयामास हरिस्तांश्च द्विजोत्तमान् ।
स्वगर्जितेन ककुभः प्रतिस्वनयता विभुः ॥

अर्थ- ब्रह्मा जी और उनके पुत्र यह विचार कर ही रहे थे तभी भगवान यज्ञपुरुष पर्वताकार होकर गरजने लगे। श्री भगवान ने अपनी गर्जना से दिशाओं को प्रतिध्वनित करके ब्रह्मा और श्रेष्ठ ब्राह्मणों को हर्ष से भर दिया।

श्लोक- निशम्य ते घर्घरितं स्वखेद
क्षयिष्णु मायामयसूकरस्य
जनस्तपः सत्यनिवासिनस्ते
त्रिभिः पवित्रैर्मुनयोऽगृणन् स्म ॥

अर्थ- अपना खेद दूर करनेवाली मायामय वराह भगवान की घुरघुराहट को सुनकर वे जनलोक, तपलोक और सत्यलोक निवासी मुनिगण तीनों वेदों के परम पवित्र मन्त्रों से उनकी स्तुति करने लगे।

⇒ देखते ही देखते वराह भगवान जल मे प्रवेश करके रसातल मे पहुंच गए जहां नारायण भगवान ने अपनी माया से पृथ्वी को अपनी उदर मे छिपा लिया था।

⇒ और वराह भगवान ने जल मे डूबी हुई पृथ्वी को अपनी दाढ़ी पर लेकर रसातल से ऊपर आए।

श्लोक - स्वद्रंस्ट्रयोदृधृत्य महीं निमग्नां
स उत्थितः संरुरुचे रसायाः।
तत्रापि दैत्यं गदयाऽऽपतन्तं
सुनाभसन्दीपिततीव्रमन्युः ॥

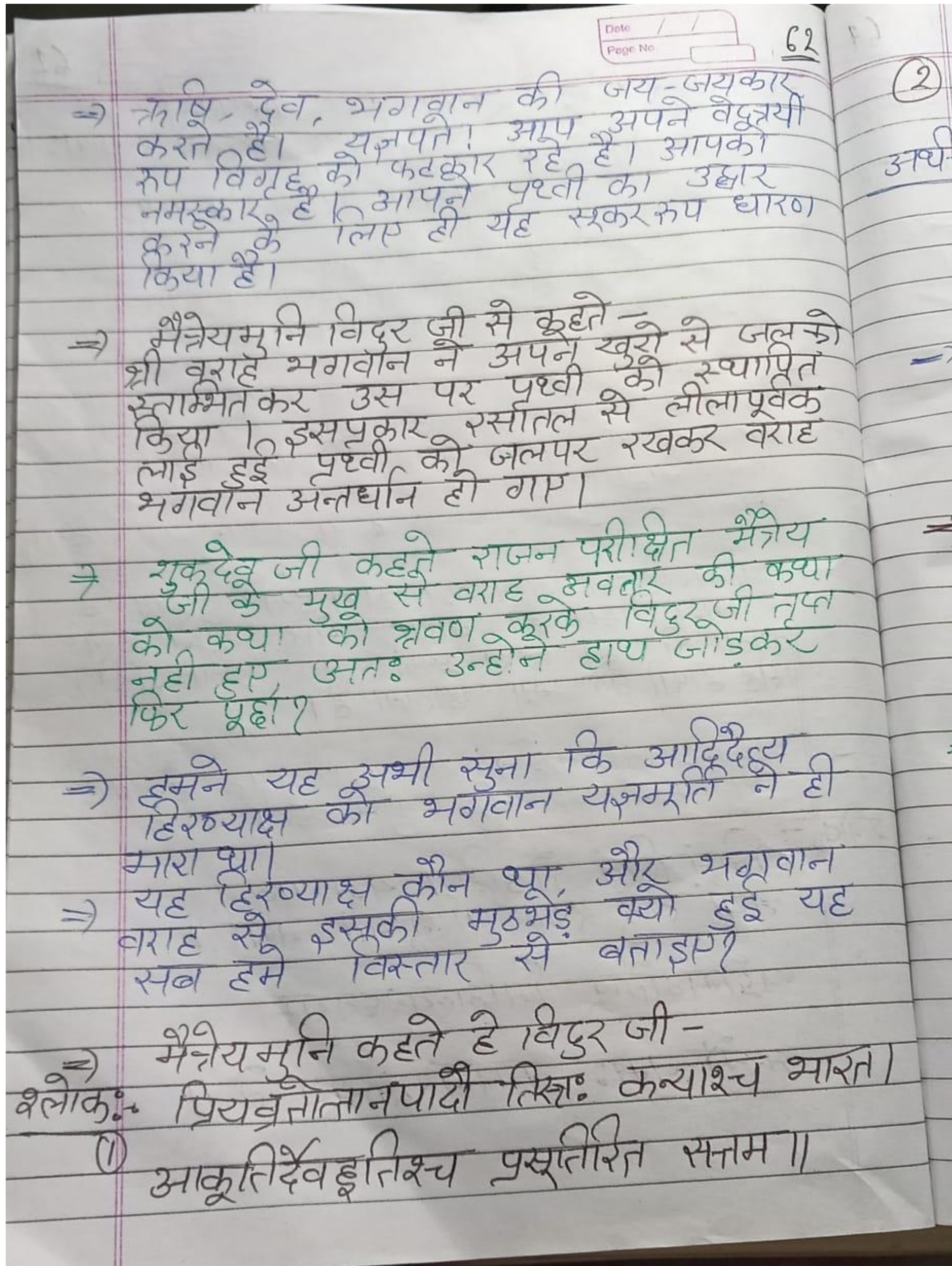
अर्थ - जिस समय वराह भगवान अपनी दाढ़ी पर पृथ्वी को लेकर रसातल से बाहर आए उस समय उनकी बड़ी शोभा हो रही थी।

=> बन्धुओ शुकदेव जी राजन परीक्षित से कहते जब भगवान पृथ्वी को जल से बाहर ला रहे थे तभी मार्ग मे विघ्न डालने के लिए महापराक्रमी हिरण्याक्ष ने जल के भीतर ही उनपर गदा से प्रहार कर दिया।

=> श्री वराह भगवान का क्रोध इससे चक्र के समान तीक्ष्ण हो गया, और उन्होने उसे लीला से ही इस प्रकार मार डाला जैसे, सिंह हाथी को मार डालता है।

=> शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित देवताओ ने भगवान की स्तुति की।

श्लोक - जितं जितं तेऽजित यज्ञभावन
त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः।
यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्
तस्मै नमः कारणसूकराय ते ॥


62
2
⇒ ऋषि, देव, भगवान की जय-जयकार करते है। यज्ञपते! आप अपने वेदत्रयी रूप विग्रह को फटकार रहे है। आपको नमस्कार है। आपने पृथ्वी का उद्धार करने के लिए ही यह सूकररूप धारण किया है।
⇒ मैत्रेयमुनि विदुर जी से कहते - श्री वराह भगवान ने अपने खुरो से जल को स्ताम्भित कर उस पर पृथ्वी को स्थापित किया। इसप्रकार रसातल से लीलापूर्वक लाई हुई पृथ्वी को जलपर रखकर वराह भगवान अन्तर्धान हो गए।
⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित मैत्रेय जी के मुख से वराह अवतार की कथा को कथा को श्रवण करके विदुर जी तृप्त नही हुए अतः उन्होने हाथ जोड़कर फिर पूछा?
⇒ हमने यह अभी सुना कि आदिदैत्य हिरण्याक्ष को भगवान यज्ञमूर्ति ने ही मारा था।
⇒ यह हिरण्याक्ष कौन था, और भगवान वराह से इसकी मुठभेड़ क्यो हुई यह सब हमे विस्तार से बताइए?
⇒ मैत्रेयमुनि कहते है विदुर जी -
श्लोकः- प्रियव्रतोत्तानपादौ तिस्रः कन्याश्च भारत।
① आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतीरित सत्तम॥

62 63

(2) आकूतिं रुचये प्रादात्कर्दमाय तु मध्यमाम्।
दक्षायादात्प्रसूतिं च यत आपूरितं जगत्॥

अर्थ- महाराज मनु और शतरूपा के द्वारा तीन कन्याए और दो पुत्र जन्म लेकर आए। दो पुत्र प्रियव्रत और उत्तानपाद थे तथा आकूति, देवहूति, प्रसूति तीन कन्याए थी।

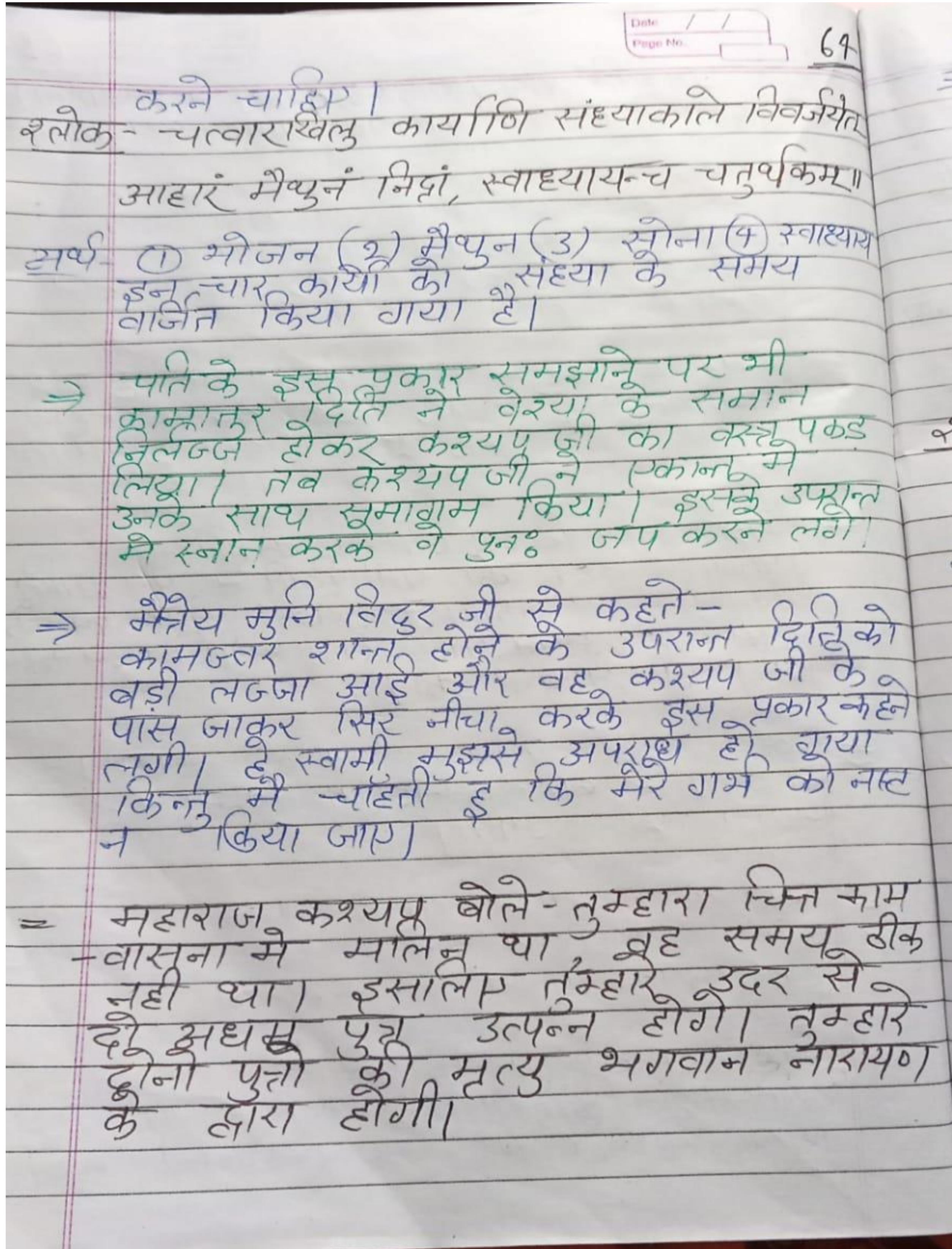
=> महाराज मनु ने आकूति का विवाह रुचि प्रजापति से किया, मझली कन्या देवहूति कर्दम जी को दी, प्रसूति दक्ष प्रजापति को।

=> मैत्रेयमुनि विदुर जी से कहते - एकबार दक्ष की पुत्री दिति ने पुत्र प्राप्ति की इच्छा से कामातुर होकर सायंकाल के समय ही अपने पति से (मरीचिनन्दन कश्यप जी) से प्रार्थना की।

=> कामज्वर से पीड़ित दिति को महाराज कश्यप ने बहुत समझाया किन्तु दिति को समझ नही आया।

=> महाराज कश्यप संध्या वन्दन कर रहे थे और देवी दिति उनसे कामज्वर से पीड़ित होकर रति याचना कर रही थी।

= महाराज कश्यप ने दिति को समझाया देखो दिति संध्या के समय जब दो पहर मिल रहे हो तो चार कार्य नही



64

करने चाहिए।

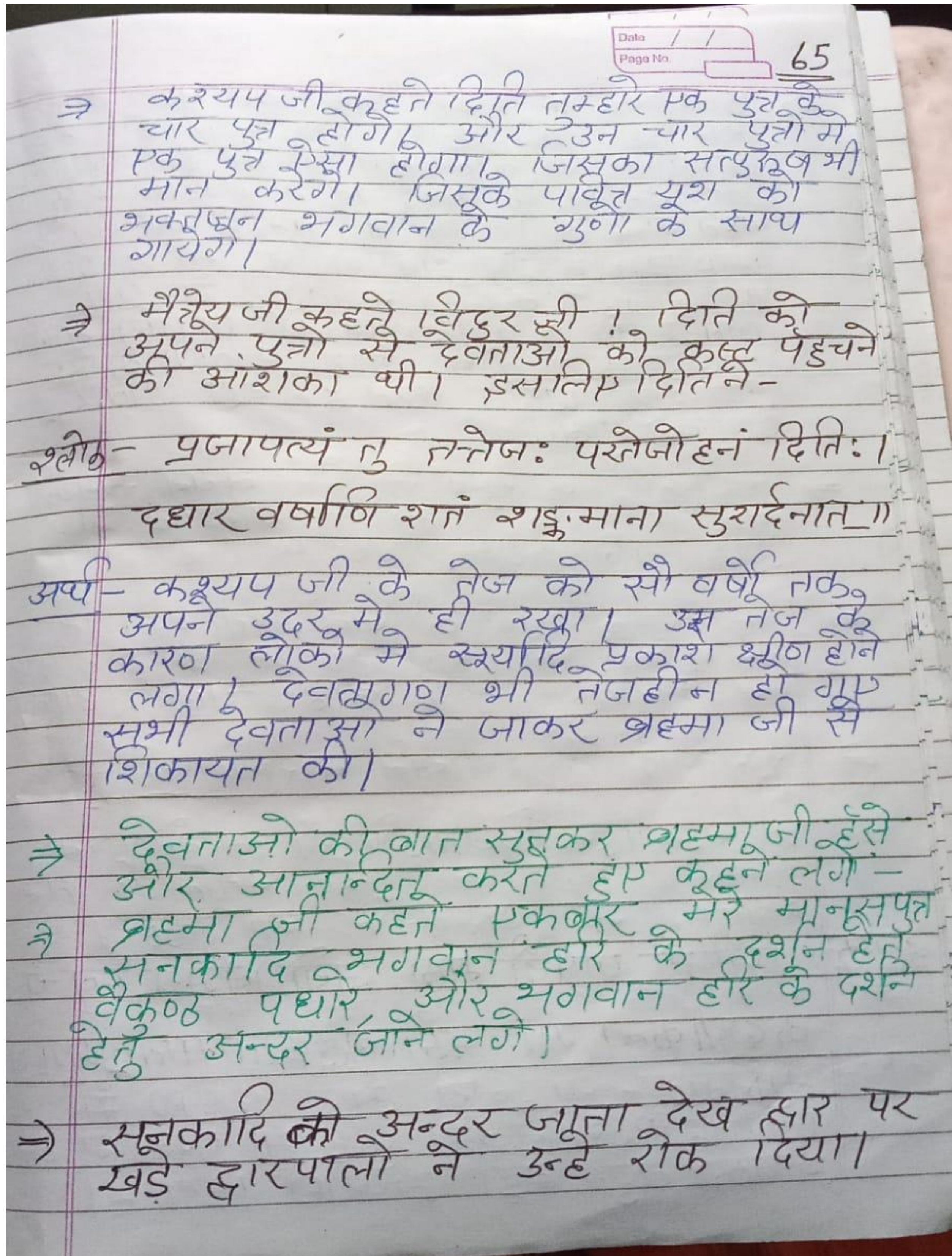
श्लोक- चत्वारि खलु कार्याणि संध्याकाले विवर्जयेत
आहारं मैथुनं निद्रां, स्वाध्यायञ्च चतुर्थकम्॥

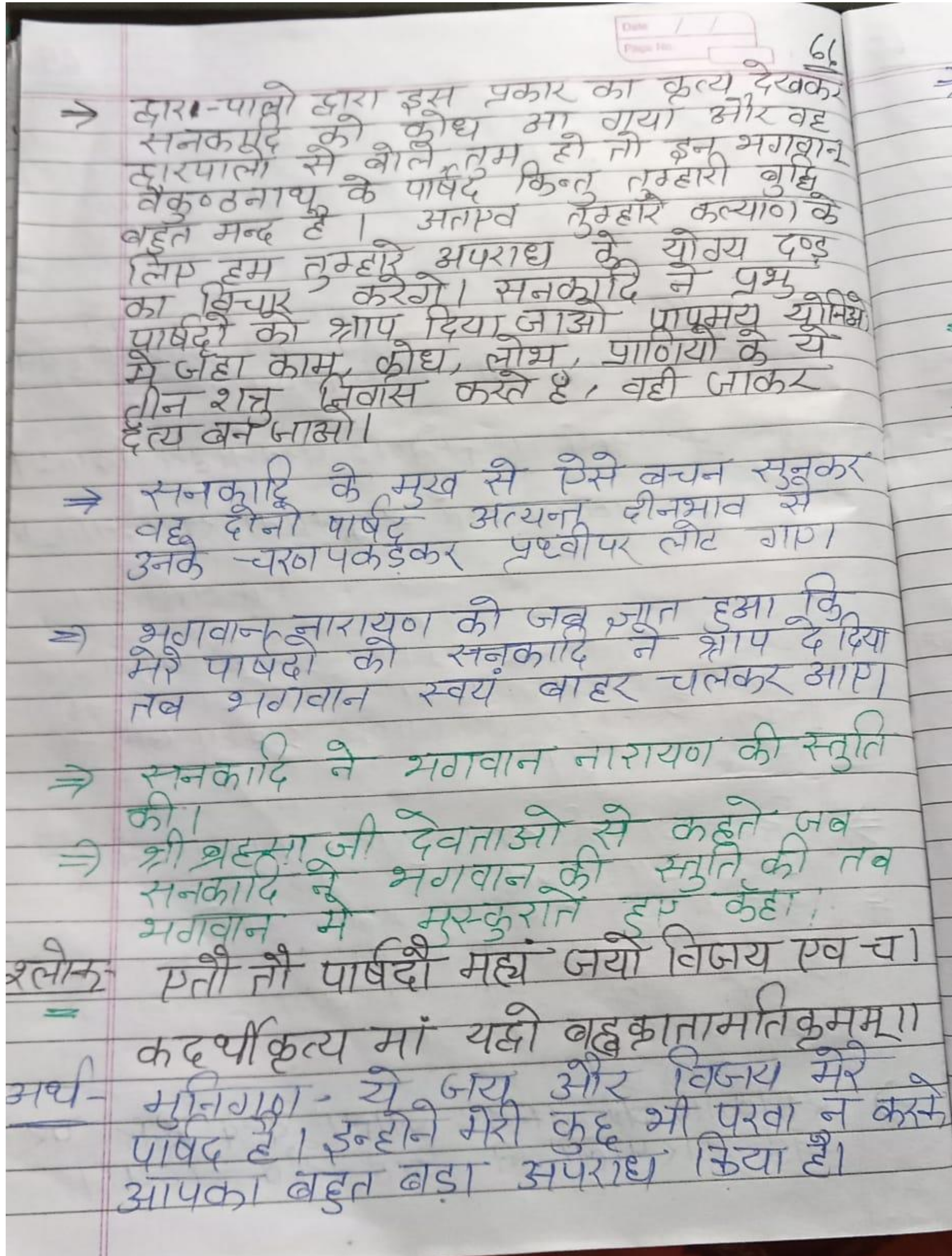
अर्थ- (1) भोजन (2) मैथुन (3) सोना (4) स्वाध्याय इन चार कार्यों को संध्या के समय वर्जित किया गया है।

⇒ पति के इस प्रकार समझाने पर भी कामातुर दिति ने वेश्या के समान निर्लज्ज होकर कश्यप जी का वस्त्र पकड़ लिया। तब कश्यप जी ने एकान्त मे उनके साथ समागम किया। इसके उपरान्त मे स्नान करके वे पुनः जप करने लगे।

⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते- कामज्वर शान्त होने के उपरान्त दिति को बड़ी लज्जा आई और वह कश्यप जी के पास जाकर सिर नीचा करके इस प्रकार कहने लगी। हे स्वामी मुझसे अपराध हो गया किन्तु मै चाहती हूं कि मेरे गर्भ को नष्ट न किया जाए।

= महाराज कश्यप बोले- तुम्हारा चित्त काम-वासना मे मलिन था, वह समय ठीक नही था। इसलिए तुम्हारे उदर से दो अधम पुत्र उत्पन्न होगे। तुम्हारे दोनो पुत्रो की मृत्यु भगवान नारायण के द्वारा होगी।





66

→ द्वार-पालों द्वारा इस प्रकार का कृत्य देखकर सनकादि को क्रोध आ गया और वह द्वारपालों से बोले तुम हो तो इन भगवान वैकुण्ठनाथ के पार्षद किन्तु तुम्हारी बुद्धि बहुत मन्द है। अतएव तुम्हारे कल्याण के लिए हम तुम्हारे अपराध के योग्य दण्ड का विचार करेंगे। सनकादि ने प्रभु पार्षदों को श्राप दिया जाओ पापमय योनियों में जहां काम, क्रोध, लोभ, प्राणियों के ये तीन शत्रु निवास करते है, वही जाकर दैत्य बन जाओ।

⇒ सनकादि के मुख से ऐसे वचन सुनकर वह दोनो पार्षद अत्यन्त दीनभाव से उनके चरण पकड़कर पृथ्वीपर लोट गए।

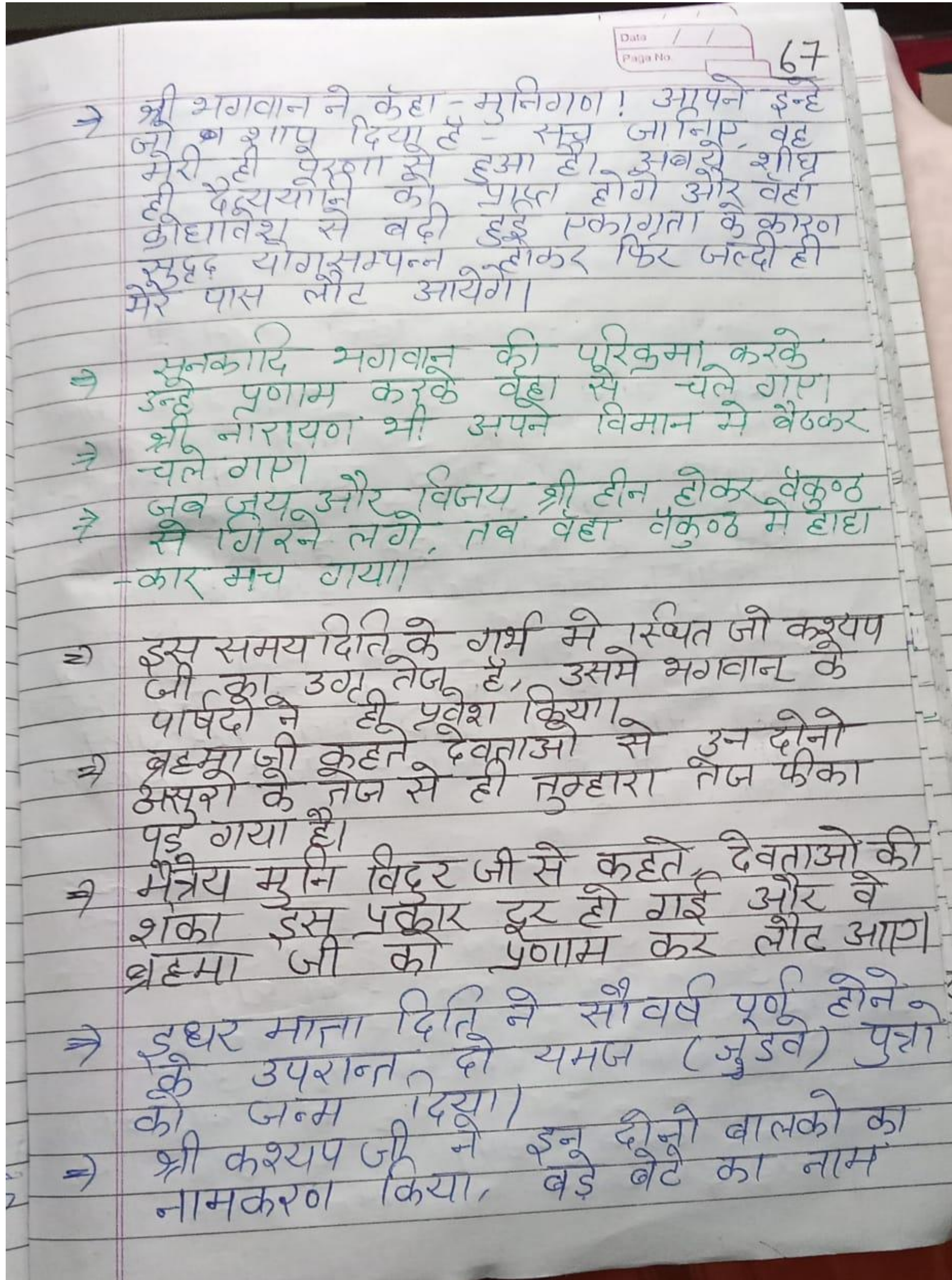
⇒ भगवान नारायण को जब ज्ञात हुआ कि मेरे पार्षदो को सनकादि ने श्राप दे दिया तब भगवान स्वयं बाहर चलकर आए।

⇒ सनकादि ने भगवान नारायण की स्तुति की।

⇒ श्री ब्रह्मा जी देवताओ से कहते जब सनकादि ने भगवान की स्तुति की तब भगवान ने मुस्कुराते हुए कहा।

श्लोक- एतौ तौ पार्षदौ मह्यं जयो विजय एव च।
कदर्थीकृत्य मां यद्वो बह्वक्रातामतिक्रमम्।।

अर्थ- मुनिगण- ये जय और विजय मेरे पार्षद है। इन्होने मेरी कुछ भी परवा न करके आपका बहुत बड़ा अपराध किया है।



67

⇒ श्री भगवान ने कहा - मुनिगण! आपने इन्हें जो शाप दिया है - सच जानिए, वह मेरी ही प्रेरणा से हुआ है। अब ये शीघ्र ही दैत्ययोनि को प्राप्त होंगे और वहाँ क्रोधावेश से बढ़ी हुई एकाग्रता के कारण सुदृढ़ योगसम्पन्न होकर फिर जल्दी ही मेरे पास लौट आयेंगे।

⇒ सनकादि भगवान की परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम करके वहाँ से चले गए।

⇒ श्री नारायण भी अपने विमान मे बैठकर चले गए।

⇒ जब जय और विजय श्री हीन होकर वैकुण्ठ से गिरने लगे, तब वहाँ वैकुण्ठ मे हाहा-कार मच गया।

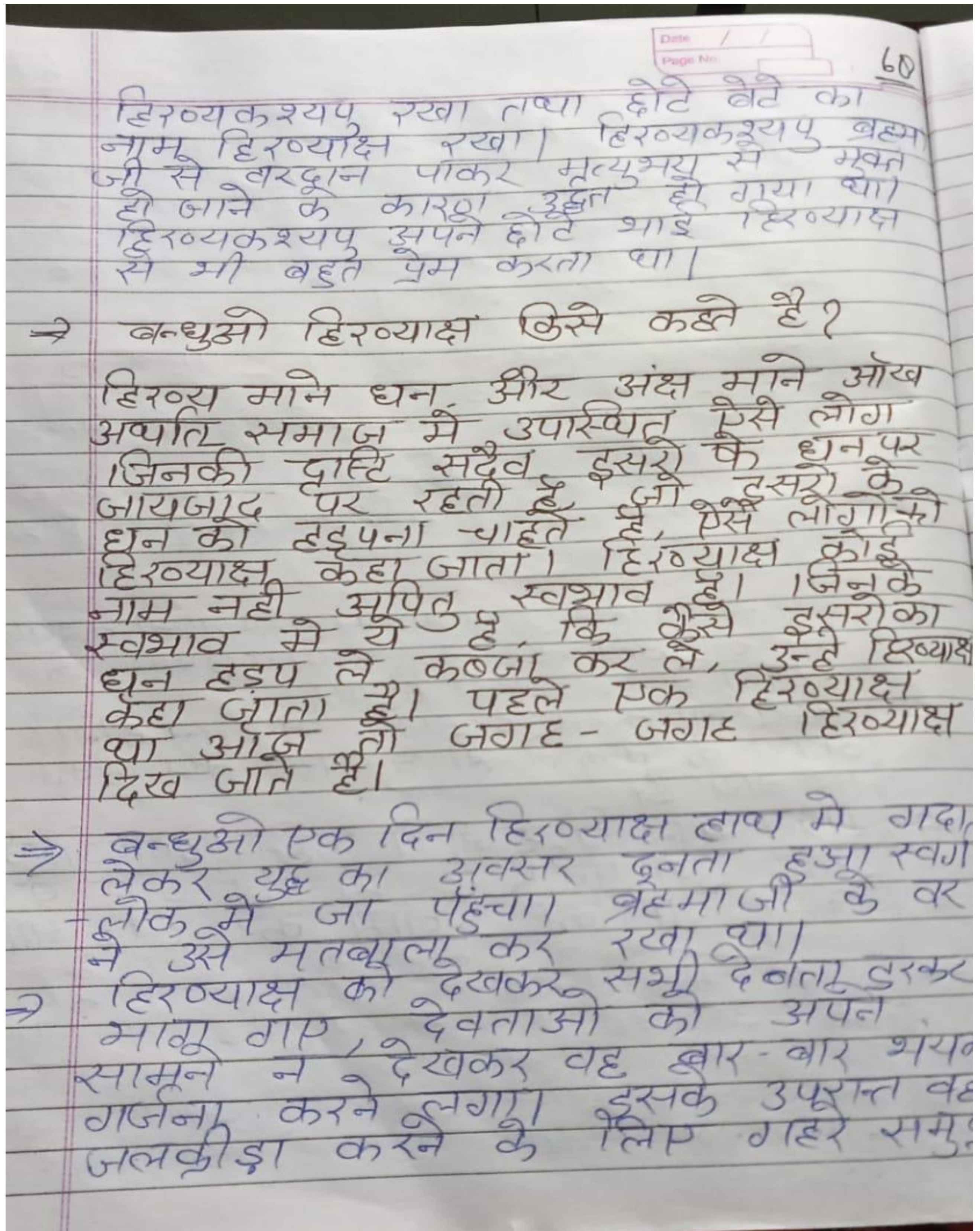
⇒ इस समय दिति के गर्भ मे स्थित जो कश्यप जी का उग्र तेज है, उसमे भगवान के पार्षदो ने ही प्रवेश किया।

⇒ ब्रह्मा जी कहते देवताओ से उन दोनो असुरो के तेज से ही तुम्हारा तेज फीका पड़ गया है।

⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते, देवताओ की शंका इस प्रकार दूर हो गई और वे ब्रह्मा जी को प्रणाम कर लौट आए।

⇒ इधर माता दिति ने सौ वर्ष पूर्ण होने के उपरान्त दो यमज (जुड़वे) पुत्रो को जन्म दिया।

⇒ श्री कश्यप जी ने इन दोनो बालको का नामकरण किया, बड़े बेटे का नाम



60

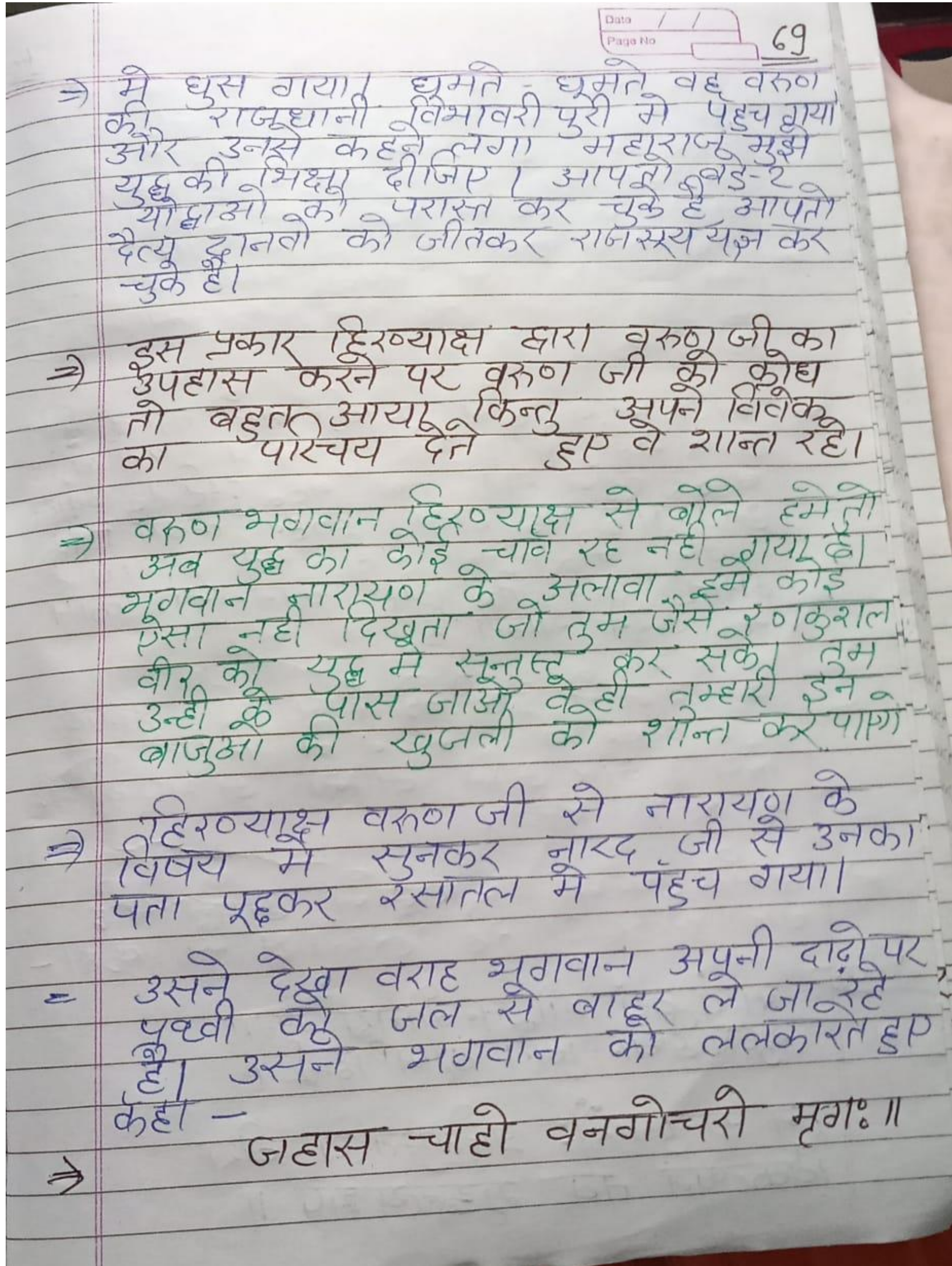
हिरण्यकश्यपु रखा तथा छोटे बेटे का नाम हिरण्याक्ष रखा। हिरण्यकश्यपु ब्रह्मा जी से वरदान पाकर मृत्युभय से मुक्त हो जाने के कारण उद्दत हो गया था। हिरण्यकश्यपु अपने छोटे भाई हिरण्याक्ष से भी बहुत प्रेम करता था।

→ बन्धुओ हिरण्याक्ष किसे कहते है?

हिरण्य माने धन और अक्ष माने आँख अर्थात समाज में उपस्थित ऐसे लोग जिनकी दृष्टि सदैव दूसरो के धन पर जायजाद पर रहती है जो दूसरो के धन को हड़पना चाहते है, ऐसे लोगों को हिरण्याक्ष कहा जाता। हिरण्याक्ष कोई नाम नही अपितु स्वभाव है। जिनके स्वभाव मे ये है कि कैसे दूसरो का धन हड़प ले, कब्जा कर ले, उन्हे हिरण्याक्ष कहा जाता है। पहले एक हिरण्याक्ष था आज तो जगह-जगह हिरण्याक्ष दिख जाते है।

⇒ बन्धुओ एक दिन हिरण्याक्ष हाथ मे गदा लेकर युद्ध का अवसर ढूंढता हुआ स्वर्ग लोक मे जा पहुंचा। ब्रह्मा जी के वर ने उसे मतवाला कर रखा था।

→ हिरण्याक्ष को देखकर सभी देवता डरकर भाग गए, देवताओ को अपने सामने न देखकर वह बार-बार भयंकर गर्जना करने लगा। इसके उपरान्त वह जलक्रीड़ा करने के लिए गहरे समुद्र



Date / /
Page No 69

⇒ मे घुस गया। घूमते - घूमते वह वरुण की राजधानी विभावरी पुरी मे पहुच गया और उनसे कहने लगा महाराज मुझे युद्ध की भिक्षा दीजिए। आपतो बड़े-२ योद्धाओ को परास्त कर चुके है आपतो दैत्य दानवो को जीतकर राजसूय यज्ञ कर चुके है।

⇒ इस प्रकार हिरण्याक्ष द्वारा वरुण जी का उपहास करने पर वरुण जी को क्रोध तो बहुत आया किन्तु अपने विवेक का परिचय देते हुए वे शान्त रहे।

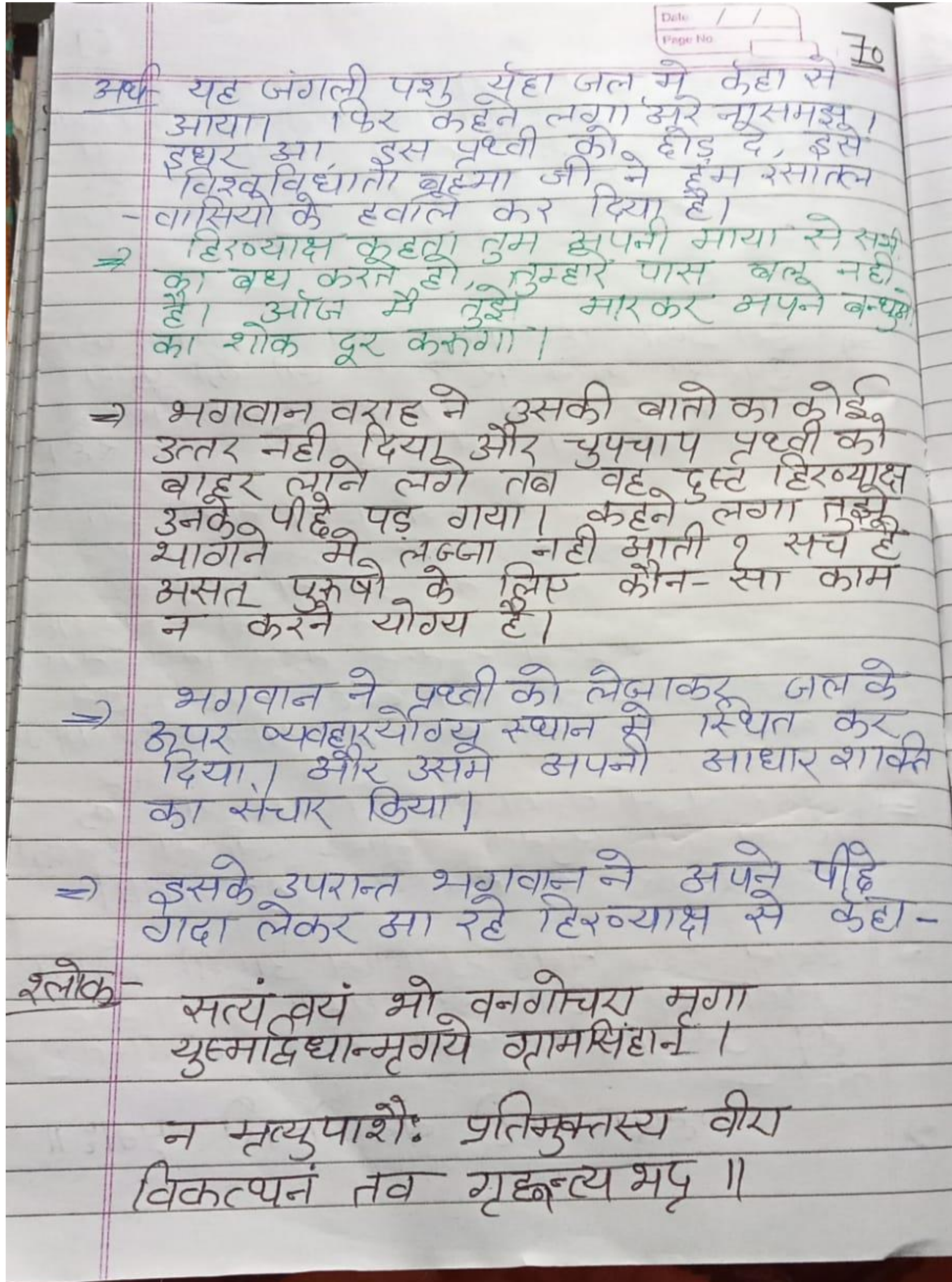
⇒ वरुण भगवान हिरण्याक्ष से बोले हमे तो अब युद्ध का कोई चाव रह नही गया है। भगवान नारायण के अलावा हमे कोई ऐसा नही दिखता जो तुम जैसे रणकुशल वीर को युद्ध मे सन्तुष्ट कर सके। तुम उन्ही के पास जाओ वे ही तुम्हारी इन बाजुओ की खुजली को शान्त कर पाएगे

⇒ हिरण्याक्ष वरुण जी से नारायण के विषय मे सुनकर नारद जी से उनका पता पूछकर रसातल मे पहुंच गया।

- उसने देखा वराह भगवान अपनी दाढ़ पर पृथ्वी को जल से बाहर ले जा रहे है। उसने भगवान को ललकारते हुए कहा -

जहास चाहो वनगोचरी मृगः॥

⇒



Date / /
Page No 70

अर्थ- यह जंगली पशु यहाँ जल में कहाँ से आया। फिर कहने लगा अरे नासमझ! इधर आ, इस पृथ्वी को छोड़ दे, इसे विश्वविधाता ब्रह्मा जी ने हम रसातल वासियों के हवाले कर दिया है।

⇒ हिरण्याक्ष कहता तुम अपनी माया से सबका बध करते हो, तुम्हारे पास बल नहीं है। आज मैं तुझे मारकर अपने बन्धुओं का शोक दूर करूंगा।

⇒ भगवान वराह ने उसकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया और चुपचाप पृथ्वी को बाहर लाने लगे तब वह दुष्ट हिरण्याक्ष उनके पीछे पड़ गया। कहने लगा तुझे भागने में लज्जा नहीं आती? सच है असत पुरुषों के लिए कौन-सा काम न करने योग्य है।

⇒ भगवान ने पृथ्वी को लेजाकर जल के ऊपर व्यवहारयोग्य स्थान में स्थित कर दिया। और उसमें अपनी आधार शक्ति का संचार किया।

⇒ इसके उपरान्त भगवान ने अपने पीछे गदा लेकर आ रहे हिरण्याक्ष से कहा-

श्लोक- सत्यं वयं भो वनगोचरा मृगा
युष्मद्विधान्मृगये ग्रामसिंहान्।

न मृत्युपाशैः प्रतिमुक्तस्य वीरा
विकत्पनं तव गृह्णन्त्य भद्र॥

अर्थ- भगवान कहते अरे! सचमुच ही हम जंगली जीव है जो तुझ जैसे ग्रामसिंहो (कुत्तो) को ढूँढते फिरते हैं।

⇒ भगवान के वचन सुनकर वह दैत्य क्रोधित हो गया और उस दुष्ट दैत्य ने बड़े वेग से लपककर भगवान पर गदा का प्रहार किया, इसके उपरान्त भगवान को अपनी भुजाओं में भर लिया, और उन्हे चूर-चूर करने की इच्छा से दबाने लगा। तब भगवान ने -

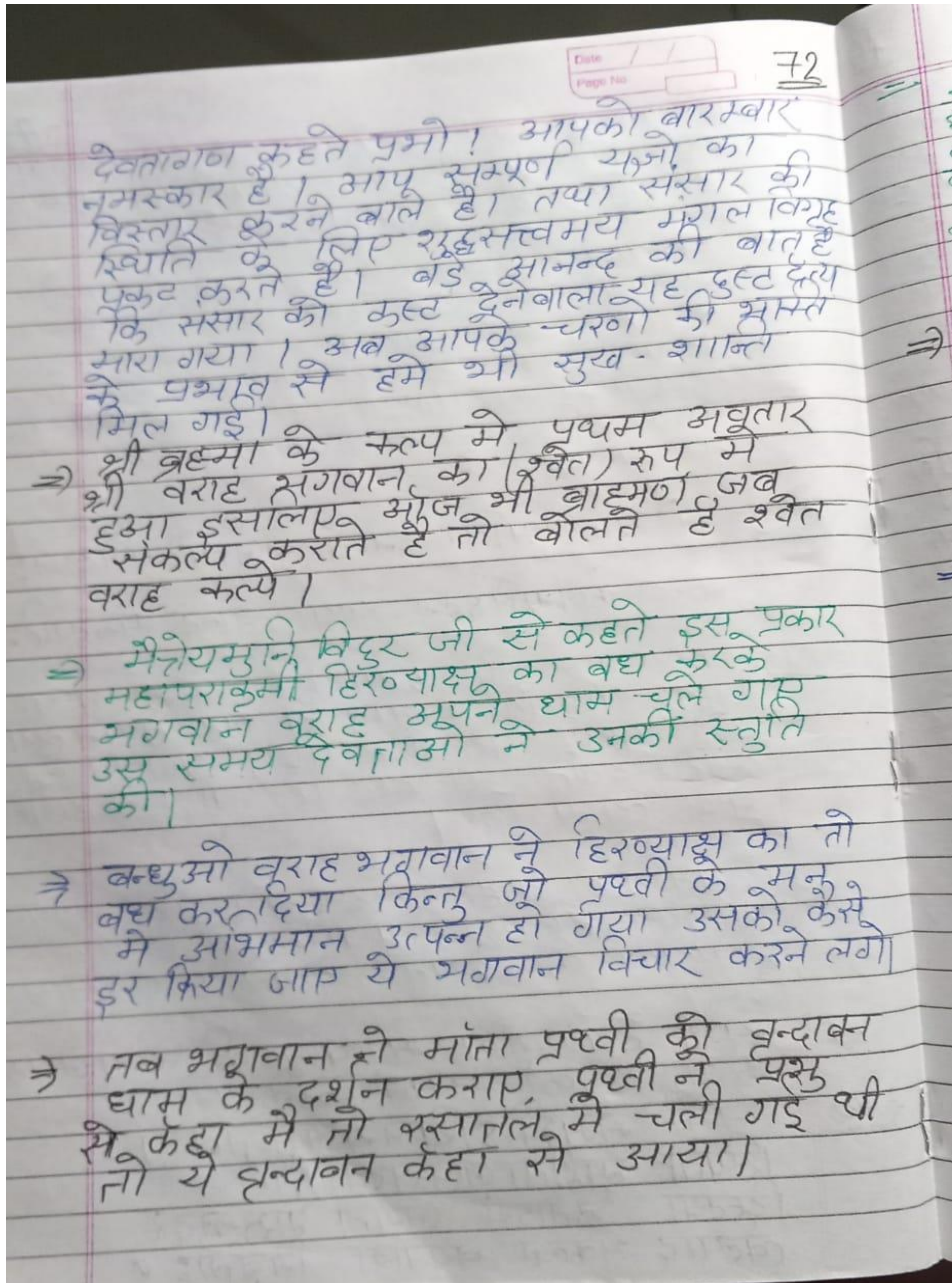
श्लोक- तं मुष्टिभिर्विनिघ्नन्तं वज्रसारैरधोक्षजः
करेण कर्णमूलेऽहन् यथा त्वाष्ट्रं मरुत्पतिः॥

अर्थ- हिरण्याक्ष की कनपटी पर एक तमाचा मारा, जिसके प्रभाव से वह घूमने लगा और पृथ्वी पर गिर पड़ा। भगवान के देखते-देखते उस दुष्ट हिरण्याक्ष ने अपने प्राण त्याग दिए।

⇒ देवतागण कहते अरे इससे अच्छा सौभाग्य किसका होगा, दैत्ययोनि में जन्म लेकर भगवान को देखते-देखते प्राण त्याग दिए।

⇒ सभी देवतागण भगवान की जयजयकार करके उनको नमन करने लगे।

श्लोक- नमो नमस्तेऽखिलयज्ञतन्तवे ।
स्थितौ गृहीतामलसत्त्वमूर्तये
दिष्ट्या हतोऽयं जगतामरुन्तुदस्
त्वत्पादभक्त्या वयमीश निर्वृताः ॥



72

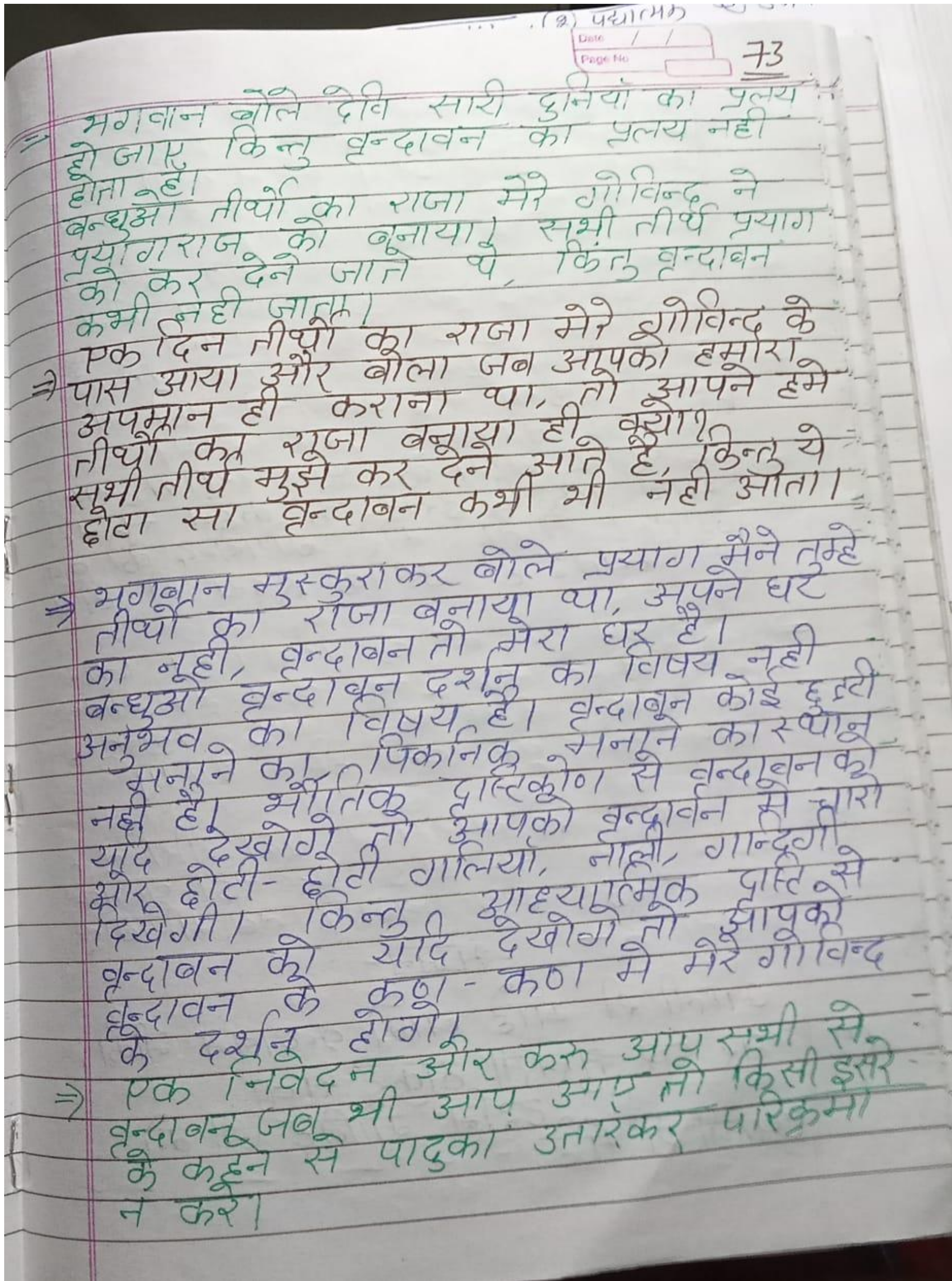
देवतागण कहते प्रभो! आपको बारम्बार नमस्कार है। आप सम्पूर्ण यज्ञो का विस्तार करने वाले है। तथा संसार की स्थिति के लिए शुद्धसत्त्वमय मंगल विग्रह प्रकट करते है। बड़े आनन्द की बात है कि संसार को कष्ट देनेवाला यह दुष्ट दैत्य मारा गया। अब आपके चरणो की भक्ति के प्रभाव से हमे भी सुख-शान्ति मिल गई।

⇒ श्री ब्रह्मा के कल्प मे प्रथम अवतार श्री वराह भगवान का (श्वेत) रूप मे हुआ इसलिए आज भी ब्राह्मण जब संकल्प कराते है तो बोलते है श्वेत वराह कल्पे।

⇒ मैत्रेयमुनि विदुर जी से कहते इस प्रकार महापराक्रमी हिरण्याक्ष का वध करके भगवान वराह अपने धाम चले गए उस समय देवताओ ने उनकी स्तुति की।

⇒ बन्धुओ वराह भगवान ने हिरण्याक्ष का तो वध कर दिया किन्तु जो पृथ्वी के मन मे अभिमान उत्पन्न हो गया उसको कैसे दूर किया जाए ये भगवान विचार करने लगे।

⇒ तब भगवान ने माता पृथ्वी को वृन्दावन धाम के दर्शन कराए, पृथ्वी ने प्रभु से कहा मै तो रसातल मे चली गई थी तो ये वृन्दावन कहा से आया।



73

⇒ भगवान बोले देवि सारी दुनियां का प्रलय हो जाए किन्तु वृन्दावन का प्रलय नही होता है।
बन्धुओ तीर्थों का राजा मेरे गोविन्द ने प्रयागराज को बनाया। सभी तीर्थ प्रयाग को कर देने जाते थे, किंतु वृन्दाबन कभी नही जाता।

⇒ एक दिन तीर्थों का राजा मेरे गोविन्द के पास आया और बोला जब आपको हमारा अपमान ही कराना था, तो आपने हमे तीर्थों का राजा बनाया ही क्यों? किन्तु ये सभी तीर्थ मुझे कर देने आते है, किन्तु ये छोटा सा वृन्दाबन कभी भी नही आता।

⇒ भगवान मुस्कुराकर बोले प्रयाग मैने तुम्हे तीर्थों का राजा बनाया था, अपने घर का नही, वृन्दाबन तो मेरा घर है।
बन्धुओ वृन्दावन दर्शन का विषय नही अनुभव का विषय है। वृन्दाबन कोई छुट्टी मनाने का पिकनिक मनाने का स्थान नही है, भौतिक दृष्टिकोण से वृन्दाबन को यदि देखोगे तो आपको वृन्दावन मे चारो ओर छोटी-छोटी गलियाँ, नाली, गान्दगी दिखेगी। किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से वृन्दाबन को यदि देखोगे तो आपको वृन्दावन के कण-कण मे मेरे गोविन्द के दर्शन होंगे।

⇒ एक निवेदन और करू आप सभी से, वृन्दाबन जब भी आप आए तो किसी दूसरे के कहने से पादुका उतारकर परिक्रमा न करे।

→ क्यो कि हो सकता है आप परिक्रमा कर रहे हो और आपके पैर के नीचे गन्दगी आ जाए और आप कहने लगे कि अरे यहा तो बहुत गन्दगी है, आपका परिक्रमा करना व्यर्थ हो जायेगा।

⇒ जब आप स्वयं से ये भाव करके कि मेरे गोविन्द तो इस बृज मे नंगे पैर खेले खाए, क्रीडा की, अपनी पादुका उतारकर परिक्रमा करेंगे तो आपको बृज परिक्रमा मे गन्दगी नही मेरे गोविन्द के कण- कण मे दर्शन होगे।

⇒ बन्धुओ धाम के प्रति त्याग, समर्पण, भाव किसी दूसरे के कहने से नही आता। ये तो मेरे गोविन्द की कृपा से स्वतः ही आपके हृदय मे आयेगा।

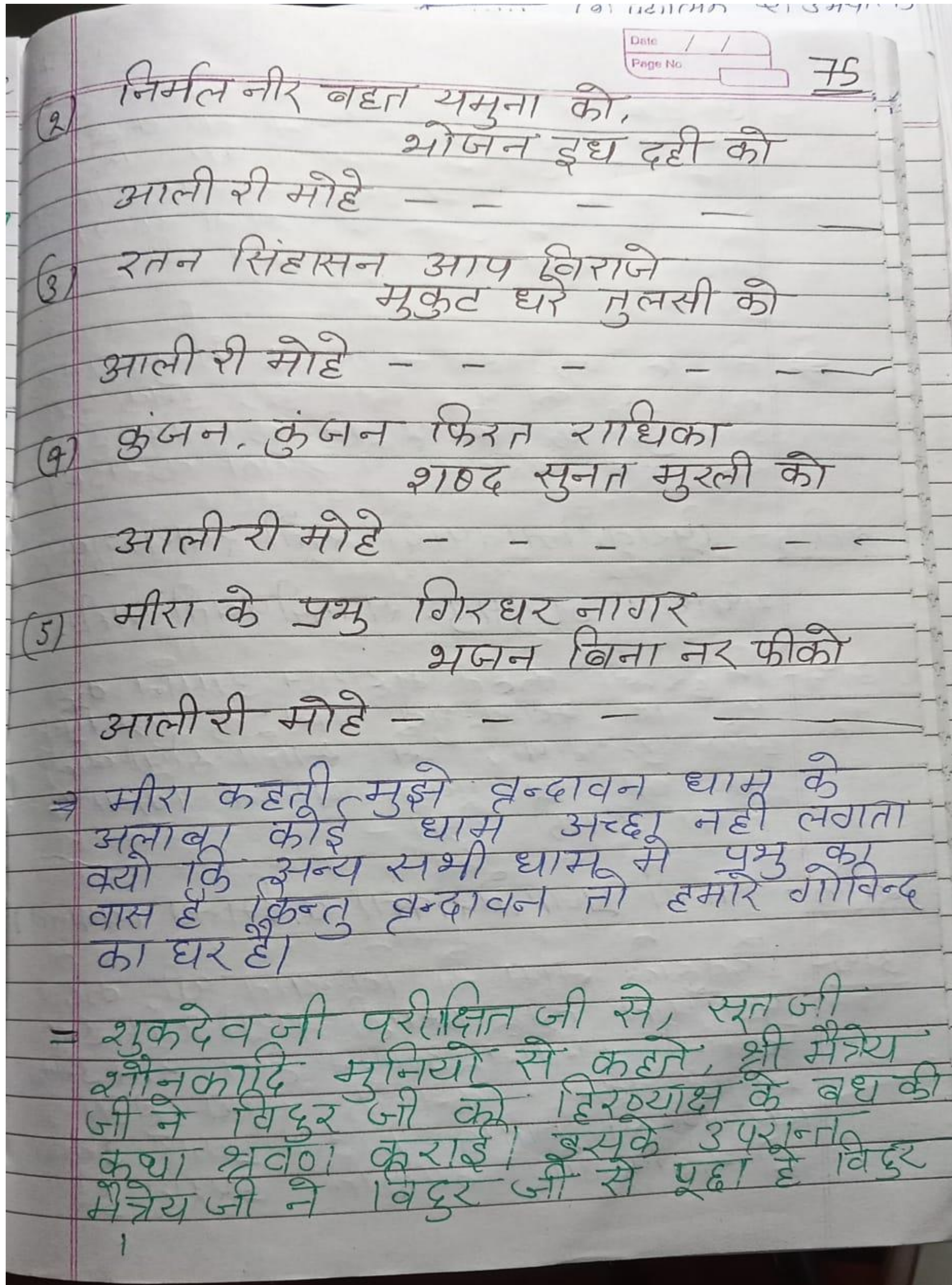
⇒ बन्धुओ वृन्दावन के विषय मे जितना भी कहा जाए उतना कम है। मीराबाई हर जगह घूम कर आई, किन्तु उनके मन को वृन्दावन ही भाया।

⇒ मीराबाई से लोगो ने पूछा मीरा तू हर जगह घूम कर आइ पर तुझे वृन्दावन ही अच्छा क्यो लगा। तब मीराबाई कहती है—

-भजन-

आली री मोहे लागे वृन्दावन नीको,

(1) घर घर तुलसी ठाकुर सेवा
दर्शन गोविंद जी को
आली री मोहे — — — — —



75

(2) निर्मल नीर बहत यमुना को,
भोजन दूध दही को
आली री मोहे — — — —

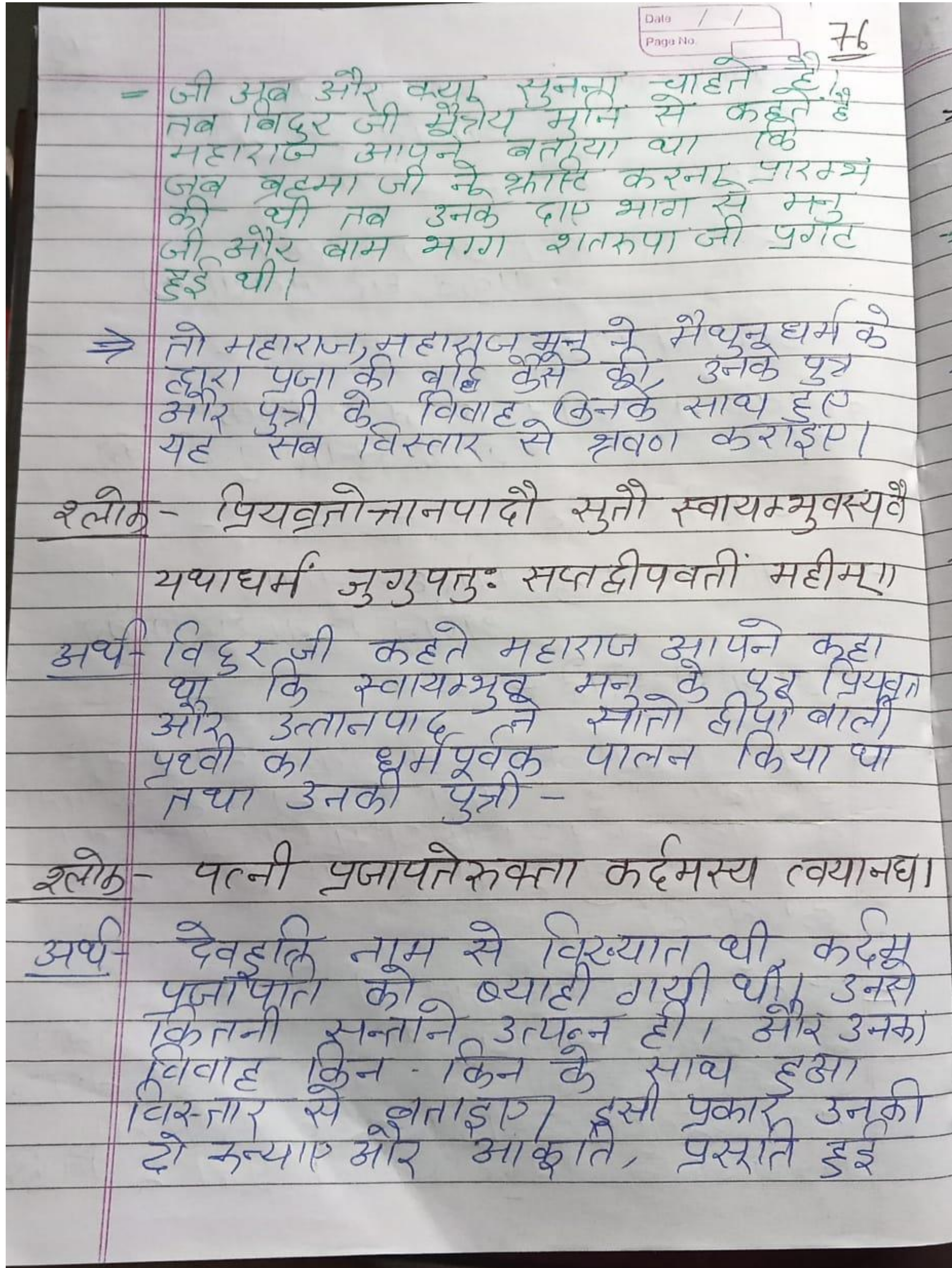
(3) रतन सिंहासन आप विराजे
मुकुट धरे तुलसी को
आली री मोहे — — — — —

(4) कुंजन, कुंजन फिरत राधिका
शब्द सुनत मुरली को
आली री मोहे — — — — — —

(5) मीरा के प्रभु गिरधर नागर
भजन बिना नर फीको
आली री मोहे — — — —

⇒ मीरा कहती मुझे वृन्दावन धाम के अलावा कोई धाम अच्छा नही लगता क्यो कि अन्य सभी धाम मे प्रभु का वास है किन्तु वृन्दावन तो हमारे गोविन्द का घर है।

= शुकदेव जी परीक्षित जी से, सूत जी शौनकादि मुनियो से कहते, श्री मैत्रेय जी ने विदुर जी को हिरण्याक्ष के बध की कथा श्रवण कराई। इसके उपरान्त विदुर मैत्रेय जी ने विदुर जी से पूछा है



Date / /
Page No. 76

- जी अब और क्या सुनना चाहते हैं। तब विदुर जी मैत्रेय मुनि से कहते हैं महाराज आपने बताया था कि जब ब्रह्मा जी ने सृष्टि करना प्रारम्भ की थी तब उनके दाए भाग से मनु जी और बाम भाग शतरुपा जी प्रगट हुई थी।

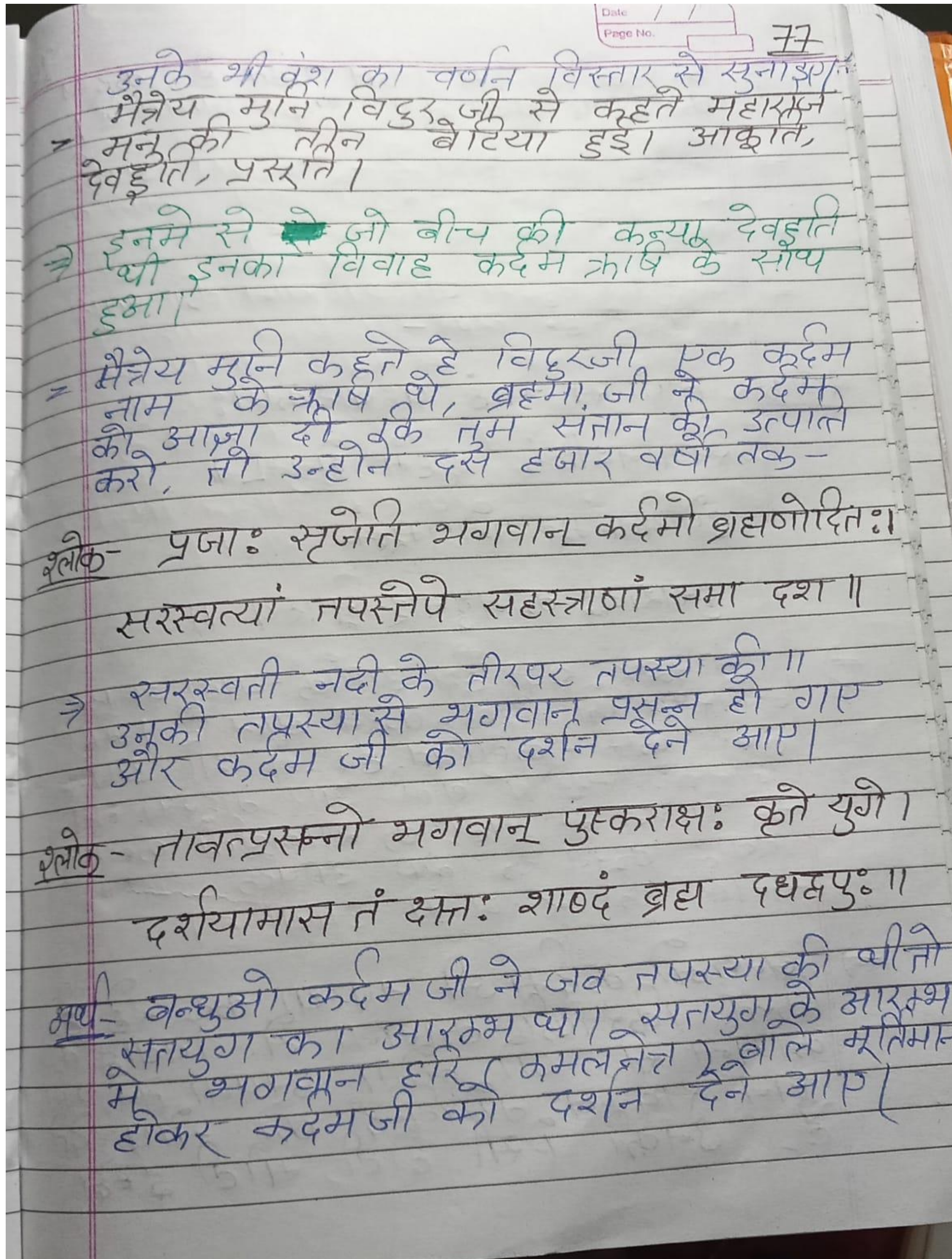
⇒ तो महाराज, महाराज मनु ने मैथुन धर्म के द्वारा प्रजा की वृद्धि कैसे की, उनके पुत्र और पुत्री के विवाह किनके साथ हुए यह सब विस्तार से श्रवण कराइए।

श्लोक- प्रियव्रतोत्तानपादौ सुतौ स्वायम्भुवस्य वै।
यथाधर्मं जुगुपतुः सप्तद्वीपवतीं महीम्॥

अर्थ- विदुर जी कहते महाराज आपने कहा था कि स्वायम्भुव मनु के पुत्र प्रियव्रत और उत्तानपाद ने सातों द्वीपों वाली पृथ्वी का धर्मपूर्वक पालन किया था तथा उनकी पुत्री -

श्लोक- पत्नी प्रजापतेरुक्ता कर्दमस्य त्वयानघ।

अर्थ- देवहूति नाम से विख्यात थी, कर्दम प्रजापति को ब्याही गयी थी। उनसे कितनी सन्ताने उत्पन्न हुई। और उनका विवाह किन-किन के साथ हुआ विस्तार से बताइए। इसी प्रकार उनकी दो कन्याए और आकूति, प्रसूति हुई



Date / /
Page No. 77

उनके श्री वंश का वर्णन विस्तार से सुनाइए।
मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते महाराज
⇒ मनु की तीन बेटियां हुई। आकूति, देवहूति, प्रसूति।

⇒ इनमे से जो बीच की कन्या देवहूति थी इनका विवाह कर्दम ऋषि के साथ हुआ।

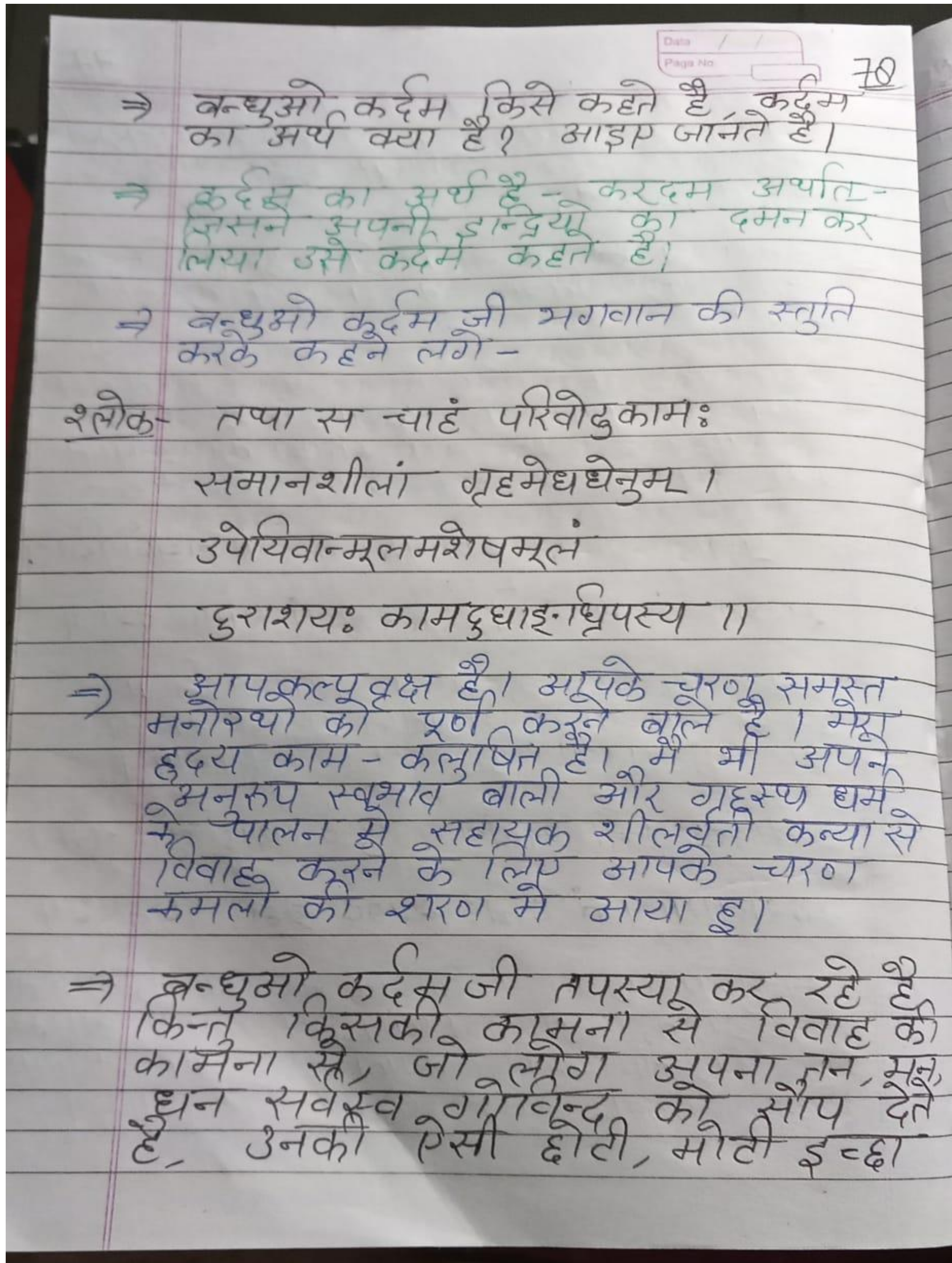
⇒ मैत्रेय मुनि कहते है विदुरजी एक कर्दम नाम के ऋषि थे, ब्रह्मा जी ने कर्दम को आज्ञा दी कि तुम संतान की उत्पत्ति करो, तो उन्होंने दस हजार वर्षों तक-

श्लोक- प्रजाः सृजेति भगवान् कर्दमो ब्रह्मणोदितः।
सरस्वत्यां तपस्तेपे सहस्राणां समा दश॥

⇒ सरस्वती नदी के तीरपर तपस्या की॥ उनकी तपस्या से भगवान् प्रसन्न हो गए और कर्दम जी को दर्शन देने आए।

श्लोक- तावत्प्रसन्नो भगवान् पुष्कराक्षः कृते युगे।
दर्शयामास तं क्षत्तः शाब्दं ब्रह्म दधद्वपुः॥

अर्थ- बन्धुओ कर्दम जी ने जब तपस्या की थी तो सतयुग का आरम्भ था। सतयुग के आरम्भ मे भगवान हरि (कमलनेत्र) वाले मूर्तिमान होकर कर्दम जी को दर्शन देने आए।



78

⇒ बन्धुओ कर्दम किसे कहते है, कर्दम का अर्थ क्या है? आइए जानते है।

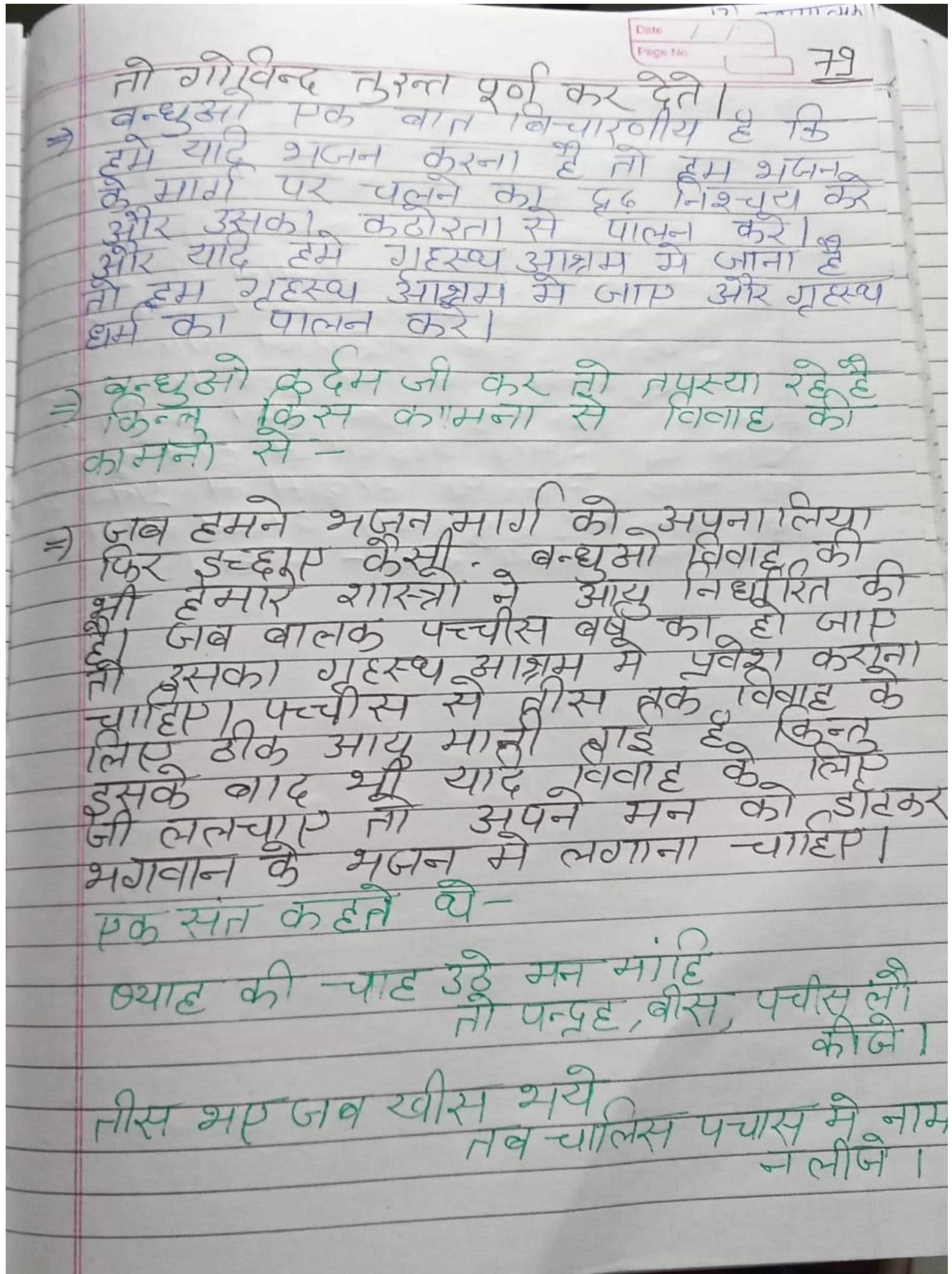
⇒ कर्दम का अर्थ है - करदम अर्थात - जिसने अपनी इन्द्रियो का दमन कर लिया उसे कर्दम कहते है।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी भगवान की स्तुति करके कहने लगे -

श्लोक- तप्या स च्याहं परिवोढुकामः
समानशीलां गृहमेधधेनुम् ।
उपेयिवान्मूलमशेषमूलं
दुराशयः कामदुघाङ्घ्रिपस्य ॥

⇒ आप कल्पवृक्ष है। आपके चरण समस्त मनोरथो को पूर्ण करने वाले है। मेरा हृदय काम - कलुषित है। मैं भी अपने अनुरूप स्वभाव वाली और गृहस्थ धर्म के पालन मे सहायक शीलवती कन्या से विवाह करने के लिए आपके चरण कमलो की शरण मे आया हूँ।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी तपस्या कर रहे है किन्तु किसकी कामना से विवाह की कामना से, जो लोग अपना तन, मन, धन सर्वस्व गोविन्द को सौंप देते है, उनकी ऐसी छोटी, मोटी इच्छा


79

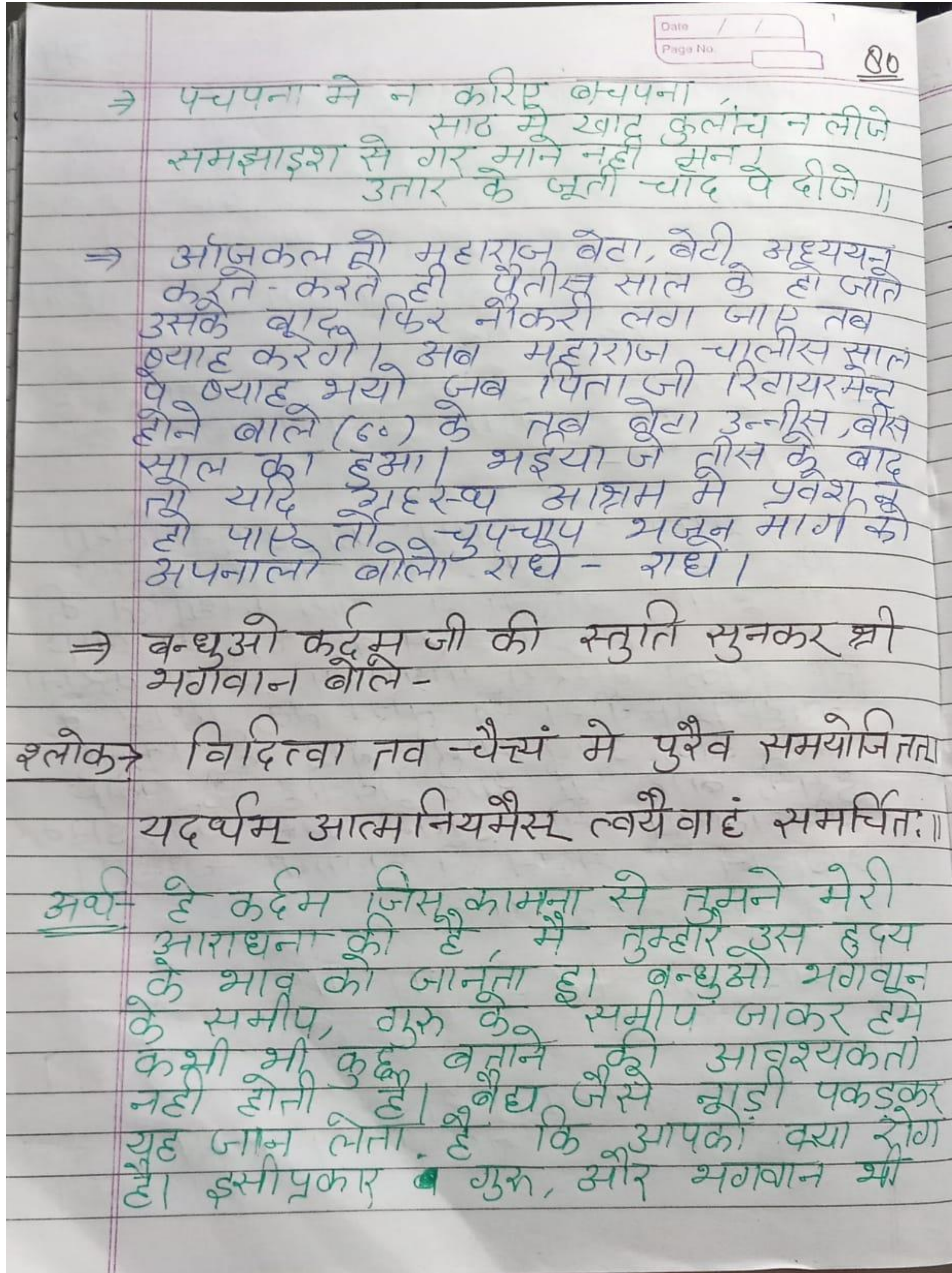
तो गोविन्द तुरन्त पूर्ण कर देते।
⇒ बन्धुओ एक बात विचारणीय है कि हमे यदि भजन करना है तो हम भजन के मार्ग पर चलने का दृढ निश्चय करे और उसका कठोरता से पालन करें। और यदि हमे गृहस्थ आश्रम मे जाना है तो हम गृहस्थ आश्रम मे जाए और गृहस्थ धर्म का पालन करे।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी कर तो तपस्या रहे है किन्तु किस कामना से विवाह की कामना से –

⇒ जब हमने भजन मार्ग को अपना लिया फिर इच्छाए कैसी. बन्धुओ विवाह की भी हमारे शास्त्रो ने आयु निर्धारित की है। जब बालक पच्चीस वर्ष का हो जाए तो इसका गृहस्थ आश्रम मे प्रवेश कराना चाहिए। पच्चीस से तीस तक विवाह के लिए ठीक आयु मानी गई है किन्तु इसके बाद भी यदि विवाह के लिए जी ललचाए तो अपने मन को डांटकर भगवान के भजन मे लगाना चाहिए।
एक संत कहते थे –

ब्याह की चाह उठे मन मांहि
तो पन्द्रह, बीस, पचीस लौ कीजे।

तीस भए जब खीस भये
तब चालिस पचास मे नाम न लीजे।



Date / /
Page No.

80

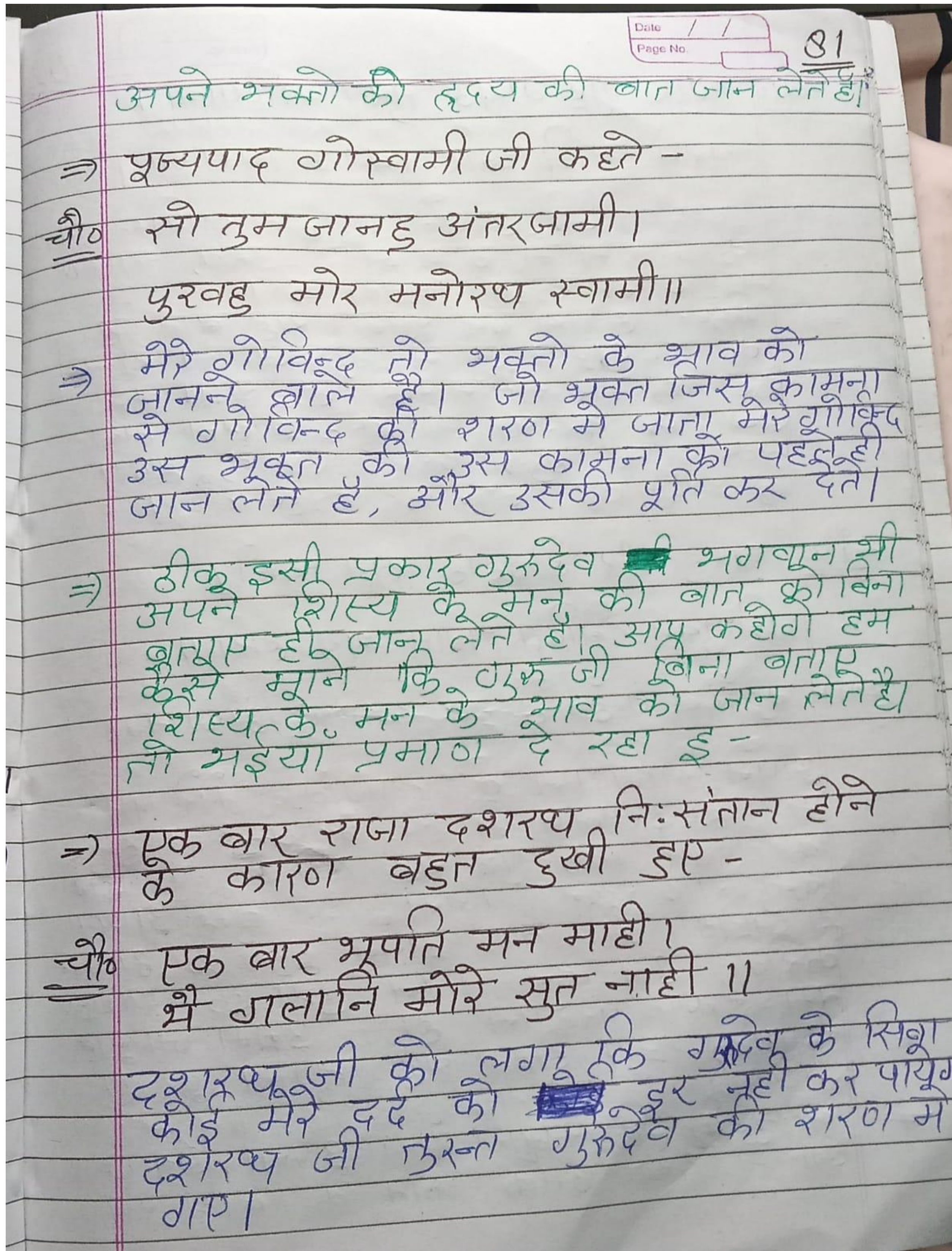
⇒ पचपना मे न करिए बचपना,
साठ मे खाट कुलांच न लीजे
समझाइश से गर माने नहीं सनम,
उतार के जूती चांद पे दीजे ॥

⇒ आजकल तो महाराज बेटा, बेटी अध्ययन करते-करते ही पैंतीस साल के हो जाते उसके बाद फिर नौकरी लग जाए तब ब्याह करेंगे। अब महाराज चालीस साल पे ब्याह भयो जब पिता जी रिटायरमेन्ट होने वाले (60) के तब बेटा उन्नीस, बीस साल का हुआ। भइया जो तीस के बाद तू यदि गृहस्थ आश्रम मे प्रवेश न हो पाए तो चुपचाप भजन मार्ग को अपनालो बोलो राधे - राधे।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी की स्तुति सुनकर श्री भगवान बोले-

श्लोक→ विदित्वा तव चैत्यं मे पुरैव समयोजि तत्।
यदर्थम आत्मनियमैस्त्वयैवाहं समर्चितः॥

अर्थ- हे कर्दम जिस कामना से तुमने मेरी आराधना की है, मैं तुम्हारे उस हृदय के भाव को जानता हूँ। बन्धुओ भगवान के समीप, गुरु के समीप जाकर हमे कभी भी कुछ बताने की आवश्यकता नहीं होती है। वैद्य जैसे नाड़ी पकड़कर यह जान लेता है कि आपको क्या रोग है। इसीप्रकार गुरु, और भगवान भी



81

अपने भक्तो की हृदय की बात जान लेते है।

⇒ पूज्यपाद गोस्वामी जी कहते -

चौ० सो तुम जानहु अंतरजामी।
पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी॥

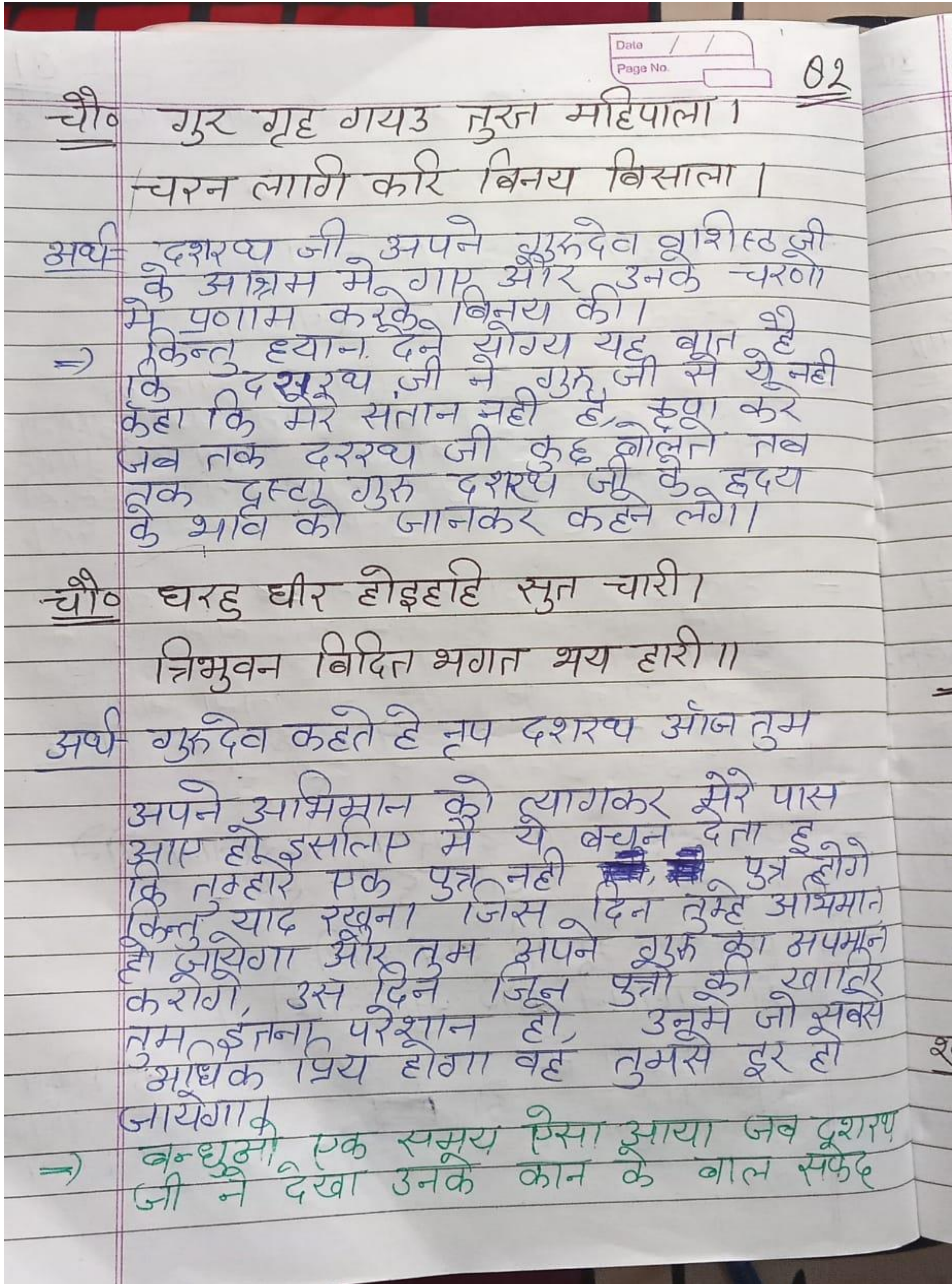
⇒ मेरे गोविन्द तो भक्तो के भाव को जानने वाले है। जो भक्त जिस कामना से गोविन्द की शरण मे जाता मेरे गोविन्द उस भक्त की उस कामना को पहले ही जान लेते है, और उसकी पूर्ति कर देते।

⇒ ठीक इसी प्रकार गुरुदेव भगवान भी अपने शिष्य के मन की बात को बिना बताए ही जान लेते है। आप कहोगे हम कैसे माने कि गुरु जी बिना बताए शिष्य के मन के भाव को जान लेते है। तो भईया प्रमाण दे रहा हू -

⇒ एक बार राजा दशरथ निःसंतान होने के कारण बहुत दुखी हुए -

चौ० एक बार भूपति मन माही।
भै गलानि मोरे सुत नाही॥

दशरथ जी को लगा कि गुरुदेव के सिवा कोई मेरे दर्द को दूर नही कर पायेग दशरथ जी तुरन्त गुरुदेव की शरण मे गए।



Date / /
Page No. 02

चौ० गुर गृह गयउ तुरत महिपाला।
चरन लागि करि बिनय बिसाला।

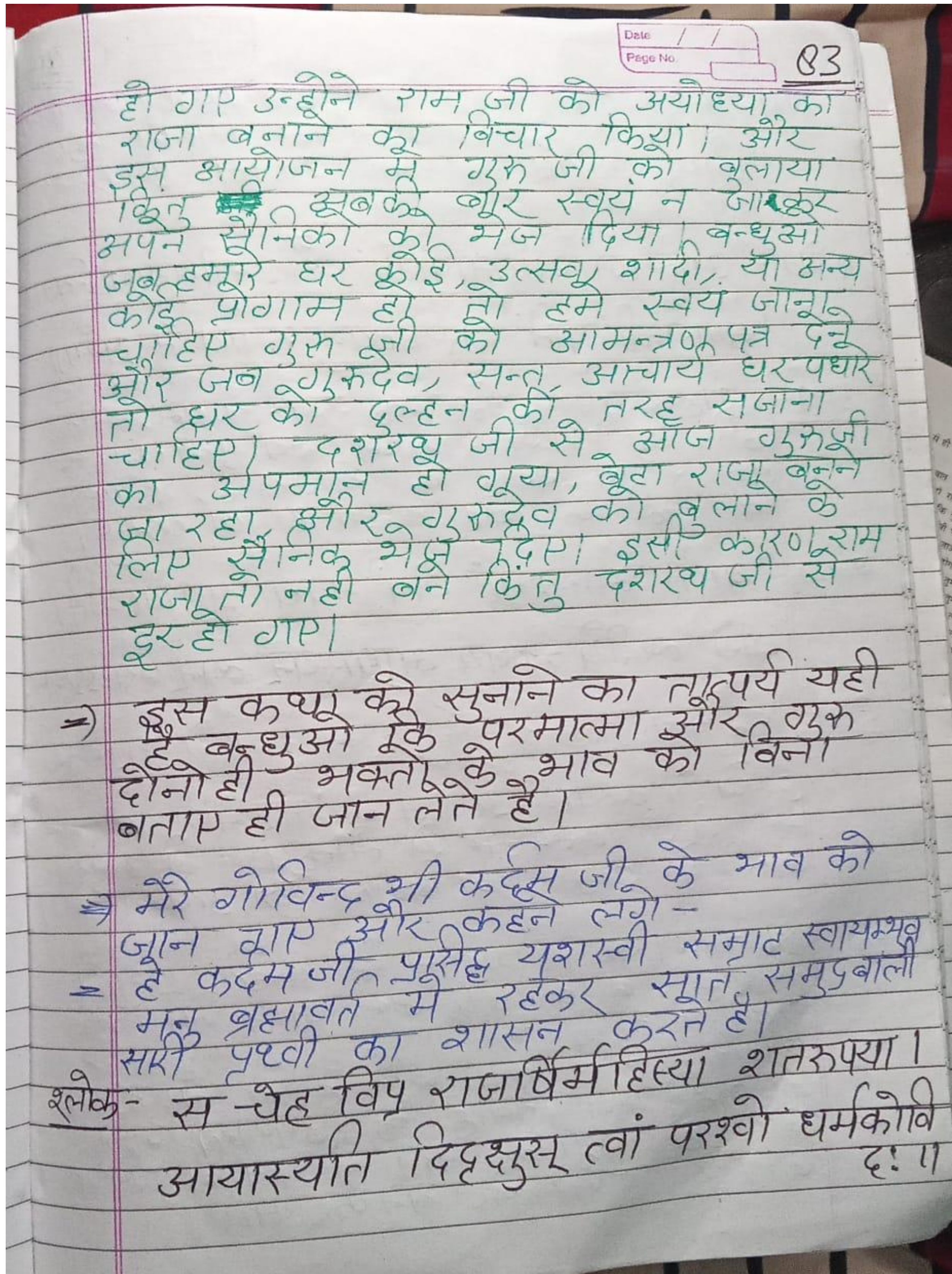
अर्थ- दशरथ जी अपने गुरुदेव वशिष्ठ जी के आश्रम मे गए और उनके चरणों मे प्रणाम करके बिनय की।

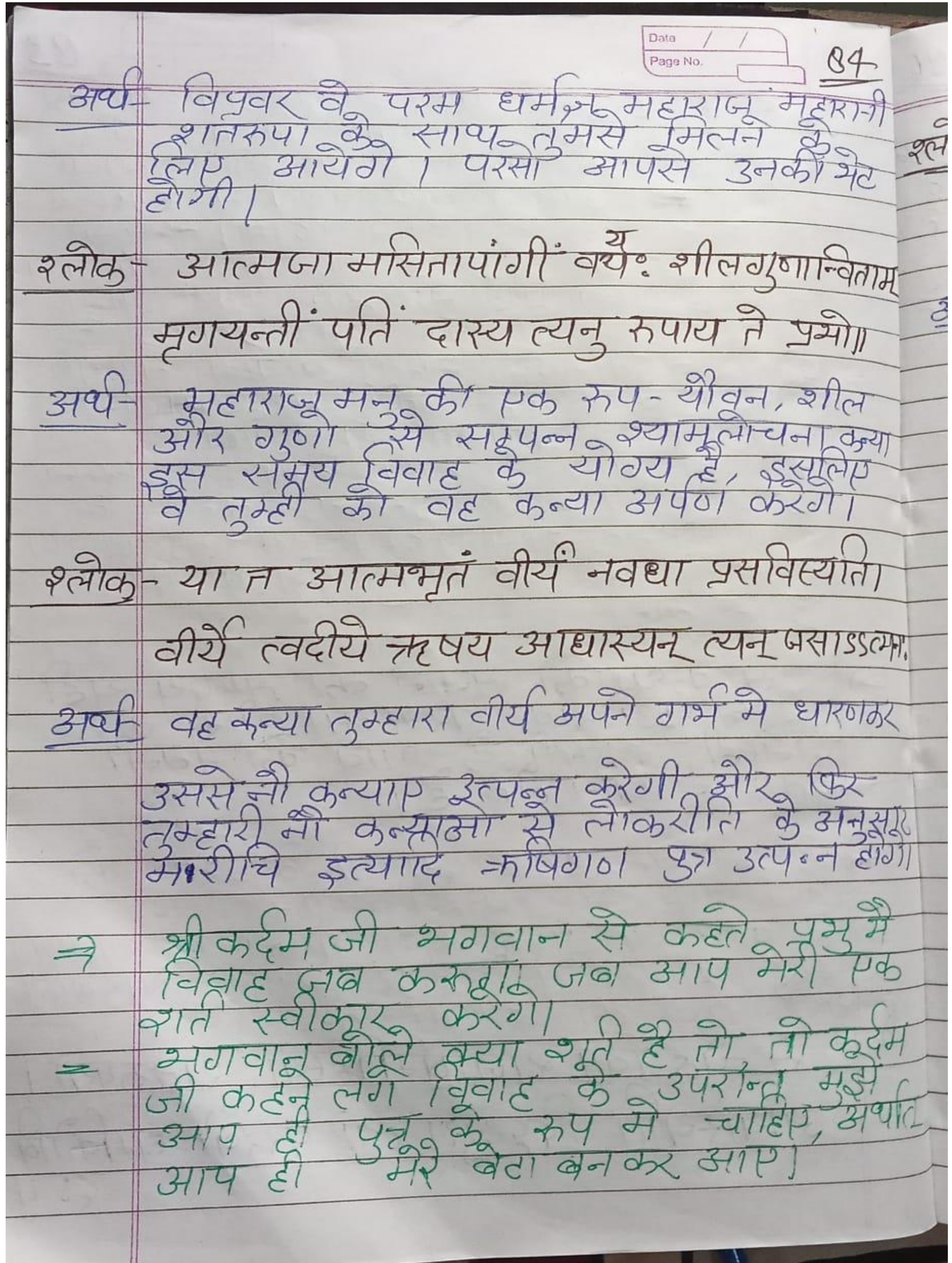
=> किन्तु ध्यान देने योग्य यह बात है कि दशरथ जी ने गुरु जी से ये नही कहा कि मेरे संतान नही है, कृपा करे जब तक दशरथ जी कुछ बोलते तब तक द्रष्टा गुरु दशरथ जी के हृदय के भाव को जानकर कहने लगे।

चौ० धरहु धीर होइहहिं सुत चारी।
त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी।।

अर्थ- गुरुदेव कहते है नृप दशरथ आज तुम अपने अभिमान को त्यागकर मेरे पास आए हो इसलिए मै ये वचन देता हू कि तुम्हारे एक पुत्र नही [illegible], [illegible] पुत्र होंगे किन्तु याद रखना जिस दिन तुम्हे अभिमान हो जायेगा और तुम अपने गुरु का अपमान करोगे, उस दिन जिन पुत्रो की खातिर तुम इतना परेशान हो, उनमे जो सबसे अधिक प्रिय होगा वह तुमसे दूर हो जायेगा।

=> बन्धुओ एक समय ऐसा आया जब दशरथ जी ने देखा उनके कान के बाल सफेद


Date / /
Page No.
83
हो गए उन्होंने राम जी को अयोध्या का राजा बनाने का विचार किया। और इस आयोजन में गुरु जी को बुलाया किन्तु सबको और स्वयं न जाकर अपने सैनिकों को भेज दिया। बन्धुओ जब हमारे घर कोई, उत्सव, शादी, या अन्य कोई प्रोग्राम हो तो हमें स्वयं जाना चाहिए गुरु जी को आमन्त्रण पत्र देने और जब गुरुदेव, सन्त, आचार्य घर पधारे तो घर को दुल्हन की तरह सजाना चाहिए। दशरथ जी से आज गुरुजी का अपमान हो गया, बेटा राजा बनने जा रहा और गुरुदेव को बुलाने के लिए सैनिक भेज दिए। इसी कारण राम राजा तो नही बने किंतु दशरथ जी से दूर हो गए।
=) इस कथा के सुनाने का तात्पर्य यही है बन्धुओ कि परमात्मा और गुरु दोनो ही भक्तो के भाव को बिना बताए ही जान लेते है।
=) मेरे गोविन्द श्री कर्दम जी के भाव को जान गए और कहने लगे-
= हे कर्दम जी, प्रसिद्ध यशस्वी सम्राट स्वायम्भुव मनु ब्रह्मावर्त मे रहकर सात समुद्र वाली सारी पृथ्वी का शासन करते है।
श्लोक- स चेह विप्र राजर्षिर्महिष्या शतरूपया। आयास्यति दिदृक्षुस्त्वां परश्वो धर्मकोविदः॥



84

अर्थ- विप्रवर वे परम धर्मज्ञ महाराज महारानी शतरूपा के साथ तुमसे मिलने के लिए आयेंगे। परसों आपसे उनकी भेंट होगी।

श्लोक- आत्मजामसितापांगीं वयः शीलगुणान्विताम्
मृगयन्तीं पतिं दास्यत्यनुरूपाय ते प्रभो॥

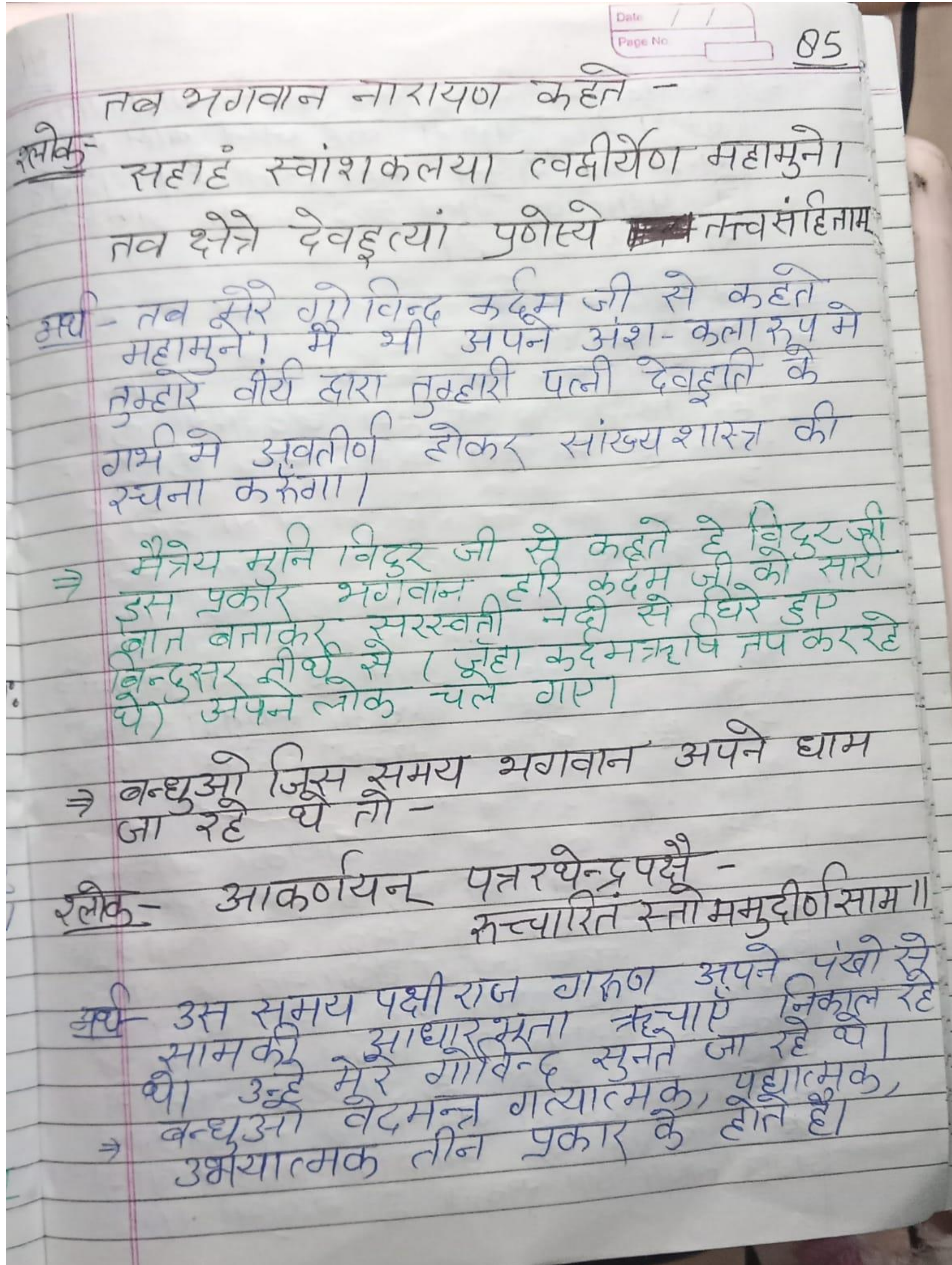
अर्थ- महाराज मनु की एक रूप-यौवन, शील और गुणों से सम्पन्न श्यामलोचना कन्या इस समय विवाह के योग्य है, इसलिए वे तुम्हीं को वह कन्या अर्पण करेंगे।

श्लोक- या त आत्मभृतं वीर्यं नवधा प्रसविष्यति।
वीर्ये त्वदीये ऋषय आधास्यन्त्यञ्जसाऽऽत्मनः॥

अर्थ- वह कन्या तुम्हारा वीर्य अपने गर्भ मे धारणकर उससे नौ कन्याए उत्पन्न करेगी और फिर तुम्हारी नौ कन्याओं से लोकरीति के अनुसार मरीचि इत्यादि ऋषिगण पुत्र उत्पन्न होंगे।

⇒ श्री कर्दम जी भगवान से कहते प्रभु मैं विवाह जब करूंगा जब आप मेरी एक शर्त स्वीकार करेंगे।

= भगवान बोले क्या शर्त है तो, तो कर्दम जी कहने लगे विवाह के उपरान्त मुझे आप ही पुत्र के रूप मे चाहिए, अर्थात आप ही मेरे बेटा बनकर आए।



Date / /
Page No. 85

तब भगवान नारायण कहते -

श्लोक- सहाहं स्वांशकलया त्वद्वीर्येण महामुने।
तव क्षेत्रे देवहूत्यां प्रणेष्ये तत्त्वसंहिताम्

अर्थ- तब मेरे गोविन्द कर्दम जी से कहते महामुने! मैं भी अपने अंश-कलारूप मे तुम्हारे वीर्य द्वारा तुम्हारी पत्नी देवहूति के गर्भ मे अवतीर्ण होकर सांख्यशास्त्र की रचना करूँगा।

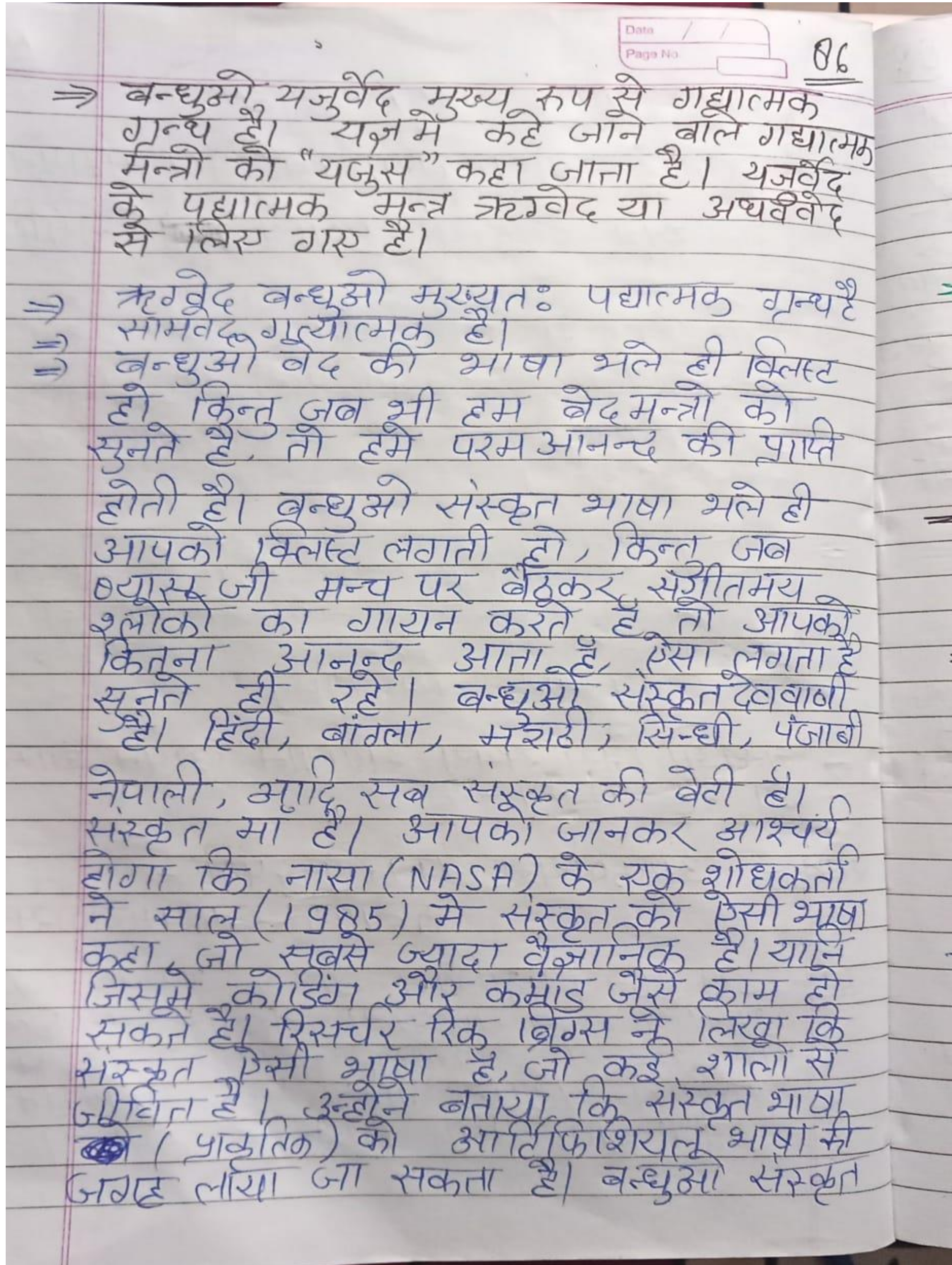
⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते है विदुर जी इस प्रकार भगवान हरि कर्दम जी को सारी बात बताकर सरस्वती नदी से घिरे हुए बिन्दुसर तीर्थ से (जहा कर्दम ऋषि तप कर रहे थे) अपने लोक चले गए।

⇒ बन्धुओ जिस समय भगवान अपने धाम जा रहे थे तो -

श्लोक- आकर्णयन् पत्ररथेन्द्रपक्षै -
रुच्चारितं स्तोममुदीर्णसाम॥

अर्थ- उस समय पक्षीराज गरुण अपने पंखो से सामकी आधारभूता ऋचाएँ निकाल रहे थी उन्हे मेरे गोविन्द सुनते जा रहे थे।

⇒ बन्धुओ वेदमन्त्र गद्यात्मक, पद्यात्मक, उभयात्मक तीन प्रकार के होते है।

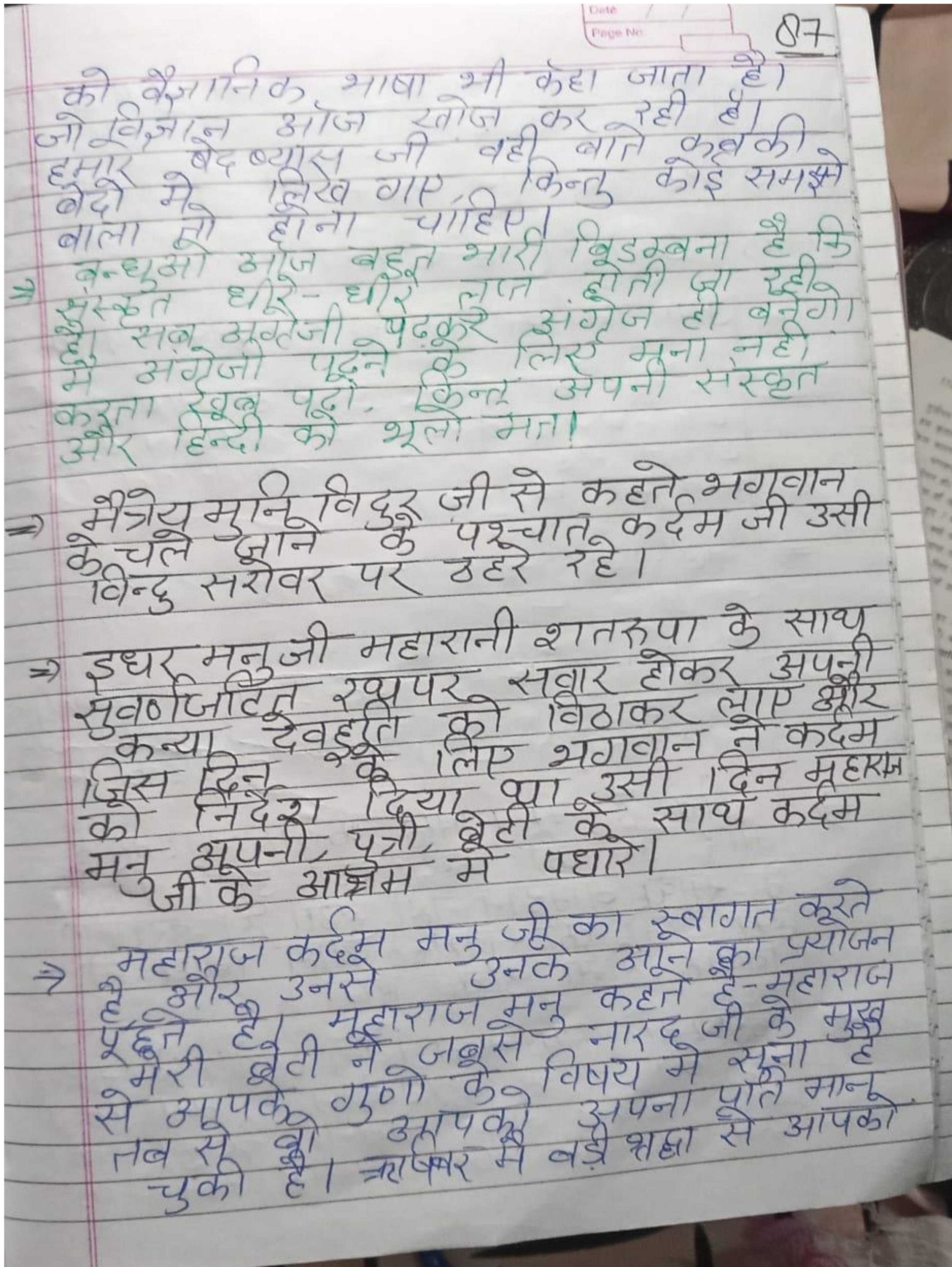


⇒ बन्धुओ यजुर्वेद मुख्य रूप से गद्यात्मक ग्रन्थ है। यजमे कहे जाने वाले गद्यात्मक मन्त्रो को "यजुस" कहा जाता है। यजुर्वेद के पद्यात्मक मन्त्र ऋग्वेद या अथर्ववेद से लिए गए है।

⇒ ऋग्वेद बन्धुओ मुख्यतः पद्यात्मक ग्रन्थ है

⇒ सामवेद गद्यात्मक है।

⇒ बन्धुओ वेद की भाषा भले ही क्लिष्ट हो किन्तु जब भी हम वेदमन्त्रो को सुनते है, तो हमे परम आनन्द की प्राप्ति होती है। बन्धुओ संस्कृत भाषा भले ही आपको क्लिष्ट लगती हो, किन्तु जब व्यास जी मन्च पर बैठकर संगीतमय श्लोको का गायन करते है तो आपको कितना आनन्द आता है, ऐसा लगता है सुनते ही रहे। बन्धुओ संस्कृत देववाणी है। हिंदी, बांग्ला, मराठी, सिन्धी, पंजाबी नेपाली, आदि सब संस्कृत की बेटी है। संस्कृत मा है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि नासा (NASA) के एक शोधकर्ता ने साल (1985) मे संस्कृत को ऐसी भाषा कहा, जो सबसे ज्यादा वैज्ञानिक है। यानि जिसमे कोडिंग और कमांड जैसे काम हो सकते है। रिसर्चर रिक ब्रिग्स ने लिखा कि संस्कृत ऐसी भाषा है, जो कई सालो से जीवित है। उन्होने बताया कि संस्कृत भाषा (प्राकृतिक) को आर्टिफिशियल भाषा की जगह लाया जा सकता है। बन्धुओ संस्कृत



87

को वैज्ञानिक भाषा भी कहा जाता है।
जो विज्ञान आज खोज कर रही है।
हमारे वेदव्यास जी वही बाते कह की
वेदो मे लिख गए, किन्तु कोई समझने
वाला तो होना चाहिए।

=> बन्धुओ आज बहुत भारी विडम्बना है कि
संस्कृत धीरे- धीरे लुप्त होती जा रही
है सब अंग्रेजी पढ़कर अंग्रेज ही बनेंगे।
मैं अंग्रेजी पढ़ने के लिए मना नही
करता खूब पढ़ो, किन्तु अपनी संस्कृत
और हिन्दी को भूलो मत।

=> मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते भगवान
के चले जाने के पश्चात कर्दम जी उसी
विन्दु सरोवर पर ठहरे रहे।

=> इधर मनु जी महारानी शतरूपा के साथ
सुवर्णजटित रथ पर सवार होकर अपनी
कन्या देवहूति को बिठाकर लाए और
जिस दिन के लिए भगवान ने कर्दम
को निर्देश दिया था उसी दिन महाराज
मनु अपनी पत्नी, बेटी के साथ कर्दम
जी के आश्रम मे पधारे।

=> महाराज कर्दम मनु जी का स्वागत करते
है और उनसे उनके आने का प्रयोजन
पूछते है, महाराज मनु कहते है- महाराज
मेरी बेटी ने जब से नारद जी के मुख
से आपके गुणो के विषय मे सुना है
तब से ही आपको अपना पति मान
चुकी है। तत्पश्चात मै बड़ी श्रद्धा से आपको

Date / /
Page No. 88

यह कन्या समर्पित कर रहा हूँ। इसको स्वीकार कीजिए।

⇒ महाराज मनु कर्दम जी से कहते है-

श्लोक- उद्यतस्य हि कामस्य प्रतिवादो न शस्यते।
अपि निर्मुक्तसंगस्य कामरक्तस्य किं पुनः॥

अर्थ- जो भोग स्वतः प्राप्त हो जाए उसकी अवहेलना करना विरक्त पुरुष को भी उचित नही है। फिर विषयासक्त की तो बात ही क्या है।

⇒ महाराज मनु की बात सुनकर कर्दम जी कहते -

श्लोक- बाढम् उदवोढु कामोऽहमप्रत्ता च तवात्मजा।
आवयोरनुरूपोऽसा वाद्यो वैवाहिको विधिः

⇒ ठीक है मैं विवाह करना चाहता हूँ और आपकी कन्या का अभी किसी के साथ वाग्दान नही हुआ है। इसलिए हम दोनो का सर्वश्रेष्ठ ब्राह्म विधि से विवाह होना उचित होगा।

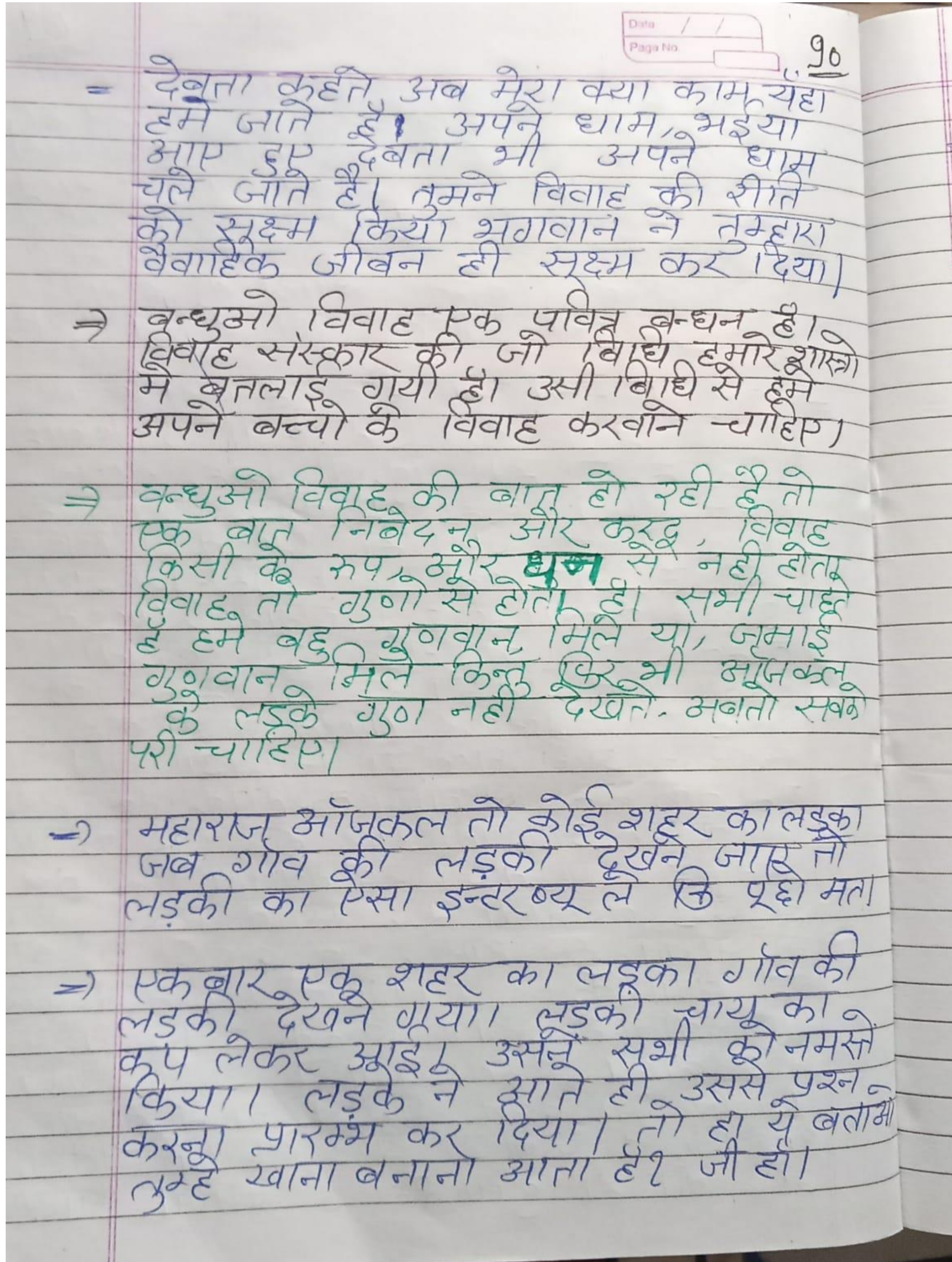
⇒ बन्धुओ एक बात विचारणीय है कर्दम जी का विवाह भगवान ने तय किया और कर्दम जी ने बिना देवहूति को देखे भगवान को विवाह करने का

Date / /
Page No

89

वचन भी दे दिया। और जब कर्दम जी का विवाह देवहूति के साथ सम्पन्न हो गया तो उनका विवाह कभी टूटा नही (तलाक) नही हुआ उनका। किन्तु आज कल तो लड़का लड़की को देखे, लडकी लडके को देखे, एक साल फोन पर बात करते किन्तु शादी के 6 महीने बाद ही पत्नी कहती मुझे आपसे तलाक चाहिए।

=> बन्धुओ ऐसा क्यो होता है जरा विचार करिए, हमारे यहा जब किसी का विवाह होता है, तो हम किसी जगह, नाचने जश्न, पार्टी, कही भी कोई कमी नही करते किन्तु जैसे ही पण्डित जी विवाह पढते है, तो दूल्हा पूछता महाराज अभी और कितना टाइम लगेगा!!, पण्डितजी कहते अभी दो घण्टे और लगेगे। दूल्हा तुरन्त जेब मे से दो हजार का नोट निकालकर पण्डित जी से कहता महाराज आधे घण्टे मे निपटाओ ना। यहा तक महाराज लोग करते कि जब दरवाजे पर बारात आ जाती और द्वार-चार का समय होता है, पण्डित जी स्वास्तिवाचन पढते तब भी बैण्ड बजवाना बन्द नही करते, रास्ते भर तो नाचते हुए आए, अब दरवाजे पर भी रही, बची कसर निकालते, एक तरफ पण्डित जी "स्वास्ति न इन्द्रो॥ कहते दूसरी तरफ बैण्ड वाला कहता, आजा, आजा, आजा, जितने भी देवता पण्डित जी ने बुलाए वे सभी ने देखा ये बैण्ड वाला तो किसी और को ही बुला रहा है, आजा, आजा



90

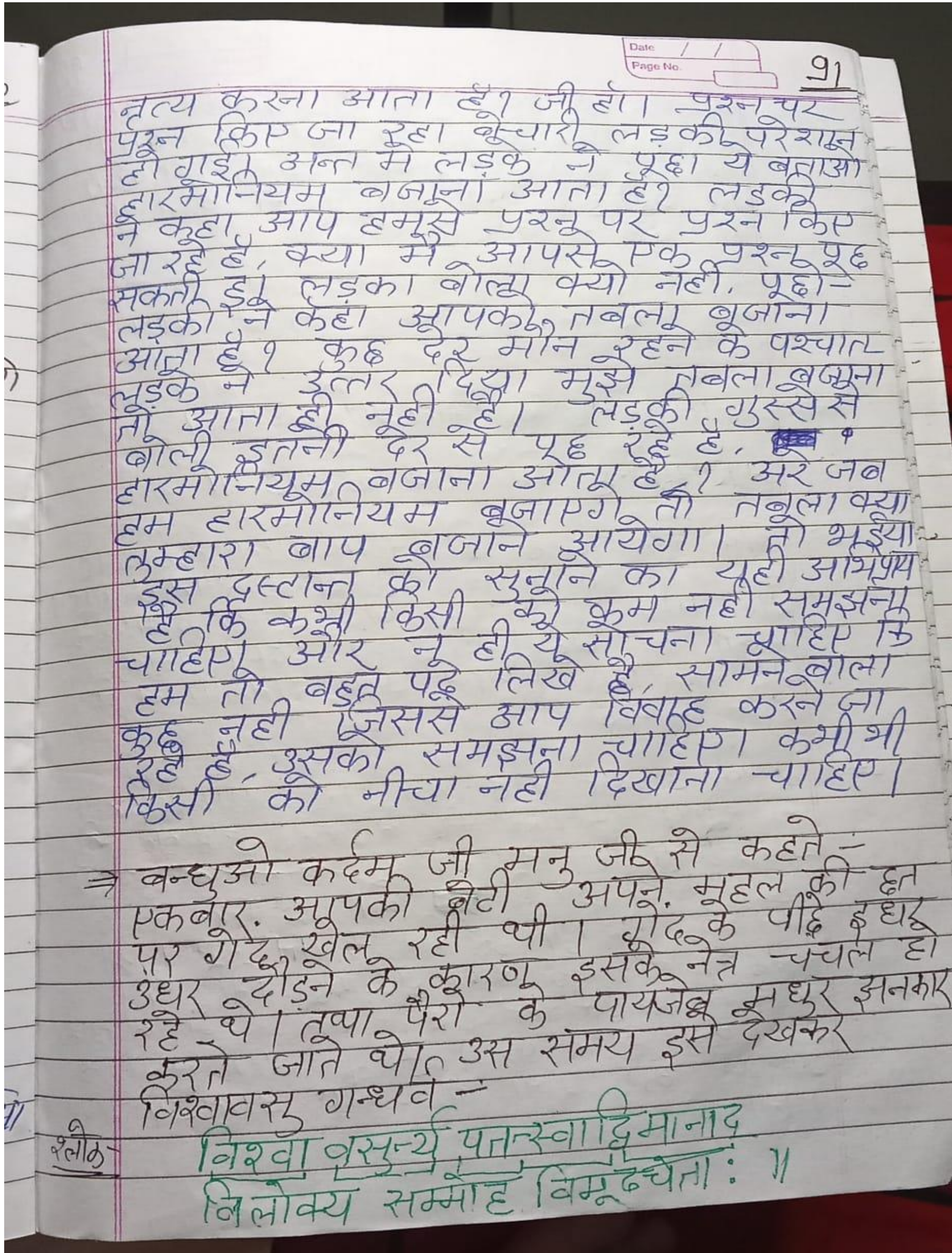
= देवता कहते अब मेरा क्या काम यहां
हमे जाते है। अपने धाम, भईया
आए हुए देवता भी अपने धाम
चले जाते है। तुमने विवाह की रीति
को सूक्ष्म किया भगवान ने तुम्हारा
वैवाहिक जीवन ही सूक्ष्म कर दिया।

⇒ बन्धुओ विवाह एक पवित्र बन्धन है।
विवाह संस्कार की जो विधि हमारे शास्त्रो
मे बतलाई गयी है। उसी विधि से हमे
अपने बच्चो के विवाह करवाने चाहिए।

⇒ बन्धुओ विवाह की बात हो रही है तो
एक बात निवेदन और करदू, विवाह
किसी के रुप और धन से नही होता
विवाह तो गुणो से होता है। सभी चाहते
है हमे बहु गुणवान मिले या, जमाई
गुणवान मिले किन्तु फिर भी आजकल
के लड़के गुण नही देखते. अबतो सबको
परी चाहिए।

⇒ महाराज आजकल तो कोई शहर का लड़का
जब गांव की लड़की देखने जाए तो
लड़की का ऐसा इन्टरव्यू ले कि पूछो मत।

⇒ एक बार एक शहर का लड़का गांव की
लड़की देखने आया। लड़की चाय का
कप लेकर आई। उसने सभी को नमस्ते
किया। लड़के ने आते ही उससे प्रश्न
करना प्रारम्भ कर दिया। तो हां ये बताओ
तुम्हे खाना बनाना आता है? जी हां।

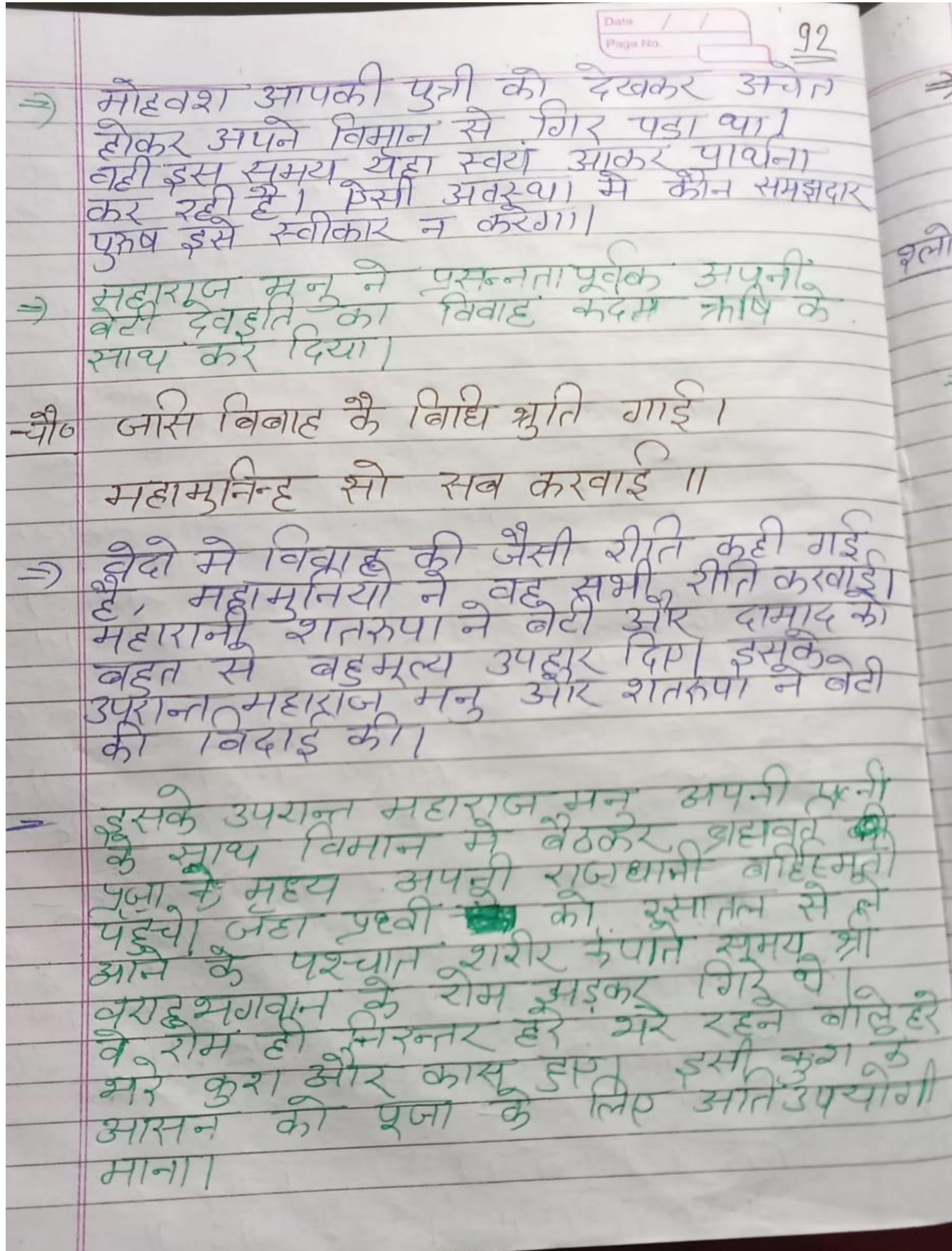


Date / /
Page No. 91

नृत्य करना आता है? जी हाँ। प्रश्न पर
प्रश्न किए जा रहा बेचारी लड़की परेशान
हो गई। अन्त में लड़के ने पूछा ये बताओ
हारमोनियम बजाना आता है? लड़की
ने कहा आप हमसे प्रश्न पर प्रश्न किए
जा रहे हैं, क्या मैं आपसे एक प्रश्न पूछ
सकती हूं। लड़का बोला क्यों नहीं, पूछो-
लड़की ने कहा आपको तबला बजाना
आता है? कुछ देर मौन रहने के पश्चात
लड़के ने उत्तर दिया मुझे तबला बजाना
तो आता ही नहीं है। लड़की गुस्से से
बोली इतनी देर से पूछ रहे हैं, ...
हारमोनियम बजाना आता है? अरे जब
हम हारमोनियम बजाएंगे तो तबला क्या
तुम्हारा बाप बजाने आयेगा। तो भईया
इस दृष्टान्त को सुनाने का यही अभिप्राय
है कि कभी किसी को कम नहीं समझना
चाहिए और न ही ये सोचना चाहिए कि
हम तो बहुत पढ़े लिखे हैं, सामने वाला
कुछ नहीं जिससे आप विवाह करने जा
रहे हैं, उसको समझना चाहिए। कभी भी
किसी को नीचा नहीं दिखाना चाहिए।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी मनु जी से कहते -
एकबार आपकी बेटी अपने महल की छत
पर गेंद खेल रही थी। गेंद के पीछे इधर
उधर दौड़ने के कारण इसके नेत्र चंचल हो
रहे थे। तथा पैरों के पायजेब मधुर झनकार
करते जाते थे। उस समय इसे देखकर
विश्वावसु गन्धर्व -

श्लोक - विश्वावसुन्यपतत्स्वाद्विमानाद
विलोक्य सम्मोह विमूढचेता: ॥



92

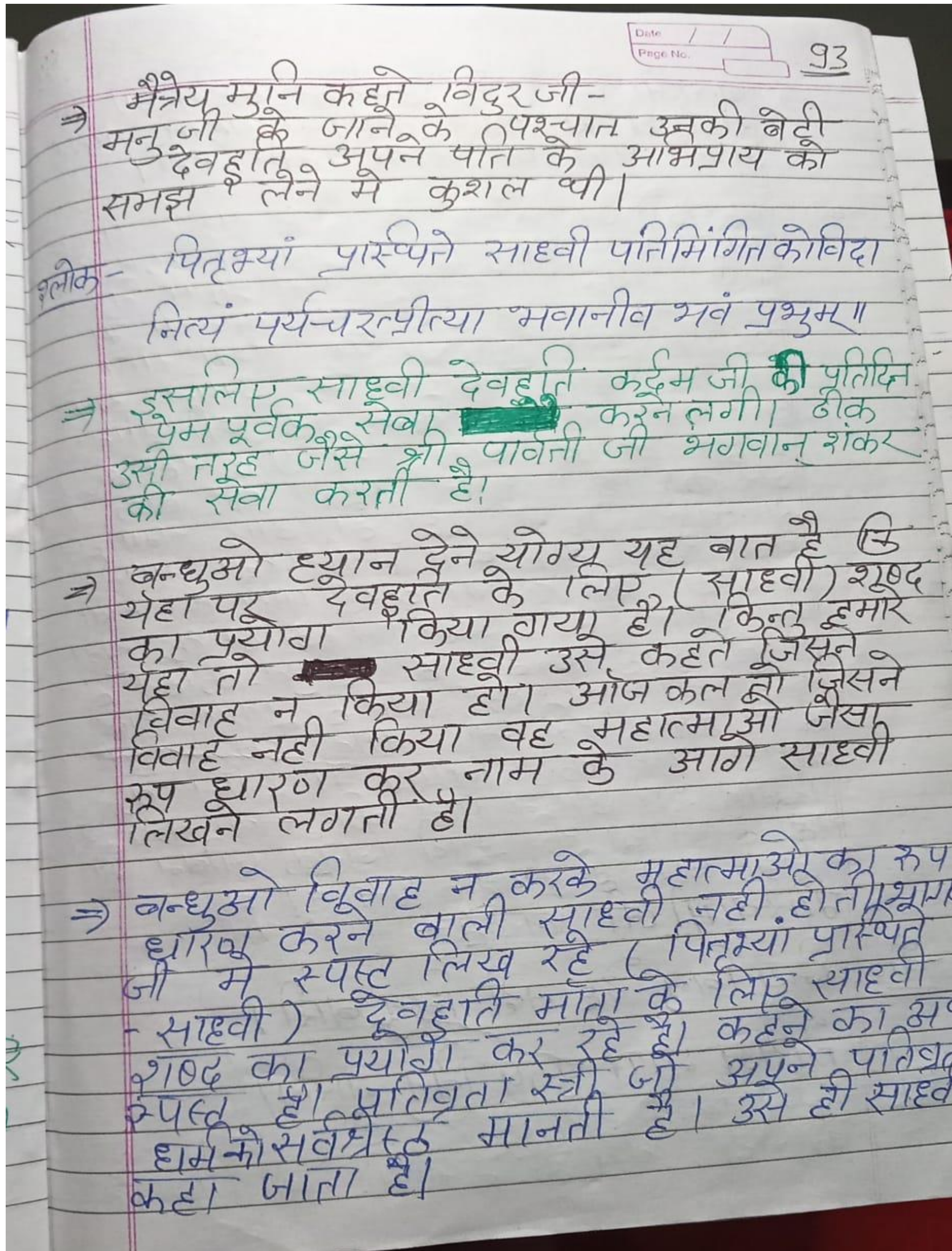
=> मोहवश आपकी पुत्री को देखकर अचेत होकर अपने विमान से गिर पड़ा था। वही इस समय यहां स्वयं आकर प्रार्थना कर रही है। ऐसी अवस्था मे कौन समझदार पुरुष इसे स्वीकार न करेगा।

=> महाराज मनु ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी बेटी देवहूति का विवाह कर्दम ऋषि के साथ कर दिया।

चौ० जसि बिबाह कै बिधि श्रुति गाई।
महामुनिन्ह सो सब करवाई॥

=> वेदो मे विवाह की जैसी रीति कही गई है, महामुनियो ने वह सभी रीति करवाई। महारानी शतरूपा ने बेटी और दामाद को बहुत से बहुमूल्य उपहार दिए। इसके उपरान्त महाराज मनु और शतरूपा ने बेटी की विदाई की।

– इसके उपरान्त महाराज मनु अपनी पत्नी के साथ विमान मे बैठकर ब्रह्मावर्त की प्रजा के मध्य अपनी राजधानी बर्हिष्मती पहुंचे। जहां पृथ्वी को रसातल से ले आने के पश्चात शरीर कंपाते समय श्री वराह भगवान के रोम झड़कर गिरे थे। वे रोम ही निरन्तर हरे भरे रहने वाले हरे भरे कुश और कास हुए। इसी कुश के आसन को प्रजा के लिए अति उपयोगी माना।



93

⇒ मैत्रेय मुनि कहते विदुर जी-
मनु जी के जाने के पश्चात उनकी बेटी देवहूति अपने पति के अभिप्राय को समझ लेने मे कुशल थी।

श्लोक- पितृभ्यां प्रस्थिते साध्वी पतिमिंगितकोविदा
नित्यं पर्यचरत्प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम्॥

⇒ इसलिए साध्वी देवहूति कर्दम जी की प्रतिदिन प्रेम पूर्वक सेवा करने लगी। ठीक उसी तरह जैसे श्री पार्वती जी भगवान् शंकर की सेवा करती है।

⇒ बन्धुओ ध्यान देने योग्य यह बात है कि यहां पर देवहूति के लिए (साध्वी) शब्द का प्रयोग किया गया है किन्तु हमारे यहा तो साध्वी उसे कहते जिसने विवाह न किया हो। आज कल तो जिसने विवाह नही किया वह महात्माओ जैसा रूप धारण कर नाम के आगे साध्वी लिखने लगती है।

⇒ बन्धुओ विवाह न करके महात्माओ का रूप धारण करने वाली साध्वी नही होती। भागवत जी मे स्पष्ट लिख रहे (पितृभ्यां प्रस्थिते साध्वी) देवहूति माता के लिए साध्वी शब्द का प्रयोग कर रहे है। कहने का अर्थ स्पष्ट है। पतिव्रता स्त्री जो अपने पतिव्रत धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानती है। उसे ही साध्वी कहा जाता है।

Date / /
Page No

94

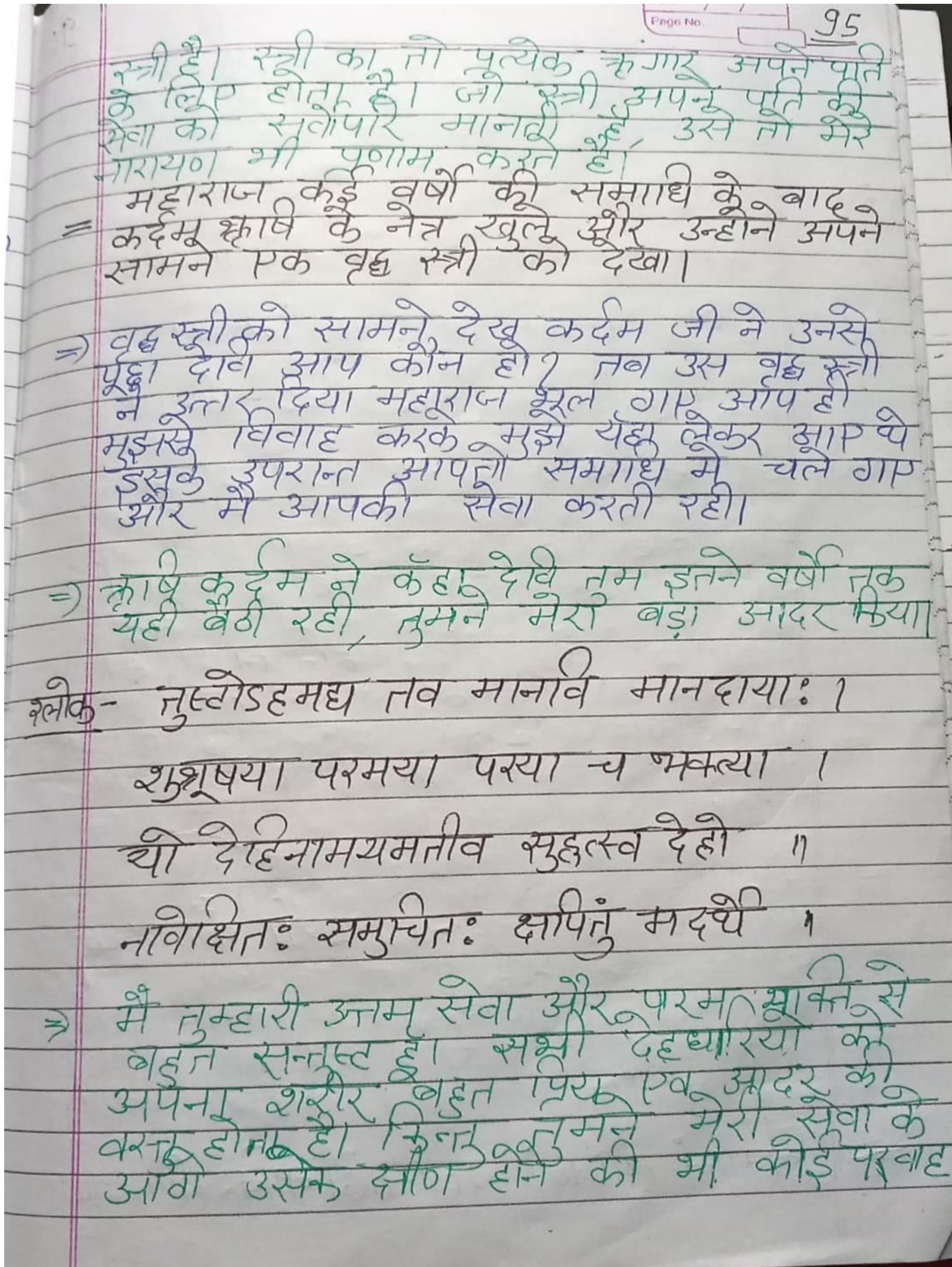
⇒ बन्धुओ विवाह के उपरान्त कर्दम जी तो समाधि से चले गए। देवहूति माता अपने पति की सेवा करती रही।

⇒ बन्धुओ जरा विचार कीजिए सम्राट् मनु की पुत्री माता देवहूति मायके मे कोई कमी नही। किन्तु विवाह ऐसे ऋषि के साथ हुआ जो एक छोटी सी कुटिया मे रहता। उस कुटिया मे भी सांप, मेढ़क, पक्षी, चिड़ियो ने अपने-अपने घर बना रखे। किन्तु फिर भी माता देवहूत अपने धर्म से पीछे नही हटी। जिसका पति अपनी पत्नी का ठीक से हालचाल भी न पूछा हो, और समाधि मे चला गया हो। क्या ऐसी पत्नी अपनी इच्छाओ को त्याग कर पति की सेवा कर सकती है। महाराज आज के युग मे तो यह कहना ही बहुत कठिन है करना तो दूर की बात है। किन्तु धन्य है वो भारत की नारी माता देवहूति जो अपने पति के समाधि मे जाने के पश्चात भी अपने पति की सेवा करती रही। यही है भारत की नारी जिनके जीवन मे पतिव्रत धर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है।

गोस्वामी जी लिखते-

चौ० जिय बिनु देह नदी बिनु बारी।
तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।।

अर्थ- जैसे बिना जीव के देह और बिना जल के नदी, वैसे ही हे नाथ! बिना पुरुष के



95

स्त्री है। स्त्री का तो प्रत्येक श्रृंगार अपने पति के लिए होता है। जो स्त्री अपने पति की सेवा को सर्वोपरि मानती है, उसे तो मेरे नारायण भी प्रणाम करते हैं।

= महाराज कई वर्षों की समाधि के बाद कर्दम ऋषि के नेत्र खुले और उन्होंने अपने सामने एक वृद्ध स्त्री को देखा।

=> वृद्ध स्त्री को सामने देख कर्दम जी ने उनसे पूछा देवि आप कौन हो? तब उस वृद्ध स्त्री ने उत्तर दिया महाराज भूल गए आप ही मुझसे विवाह करके मुझे यहां लेकर आए थे इसके उपरान्त आप तो समाधि में चले गए और मैं आपकी सेवा करती रही।

=> ऋषि कर्दम ने कहा देवि तुम इतने वर्षों तक यहीं बैठी रही, तुमने मेरा बड़ा आदर किया।

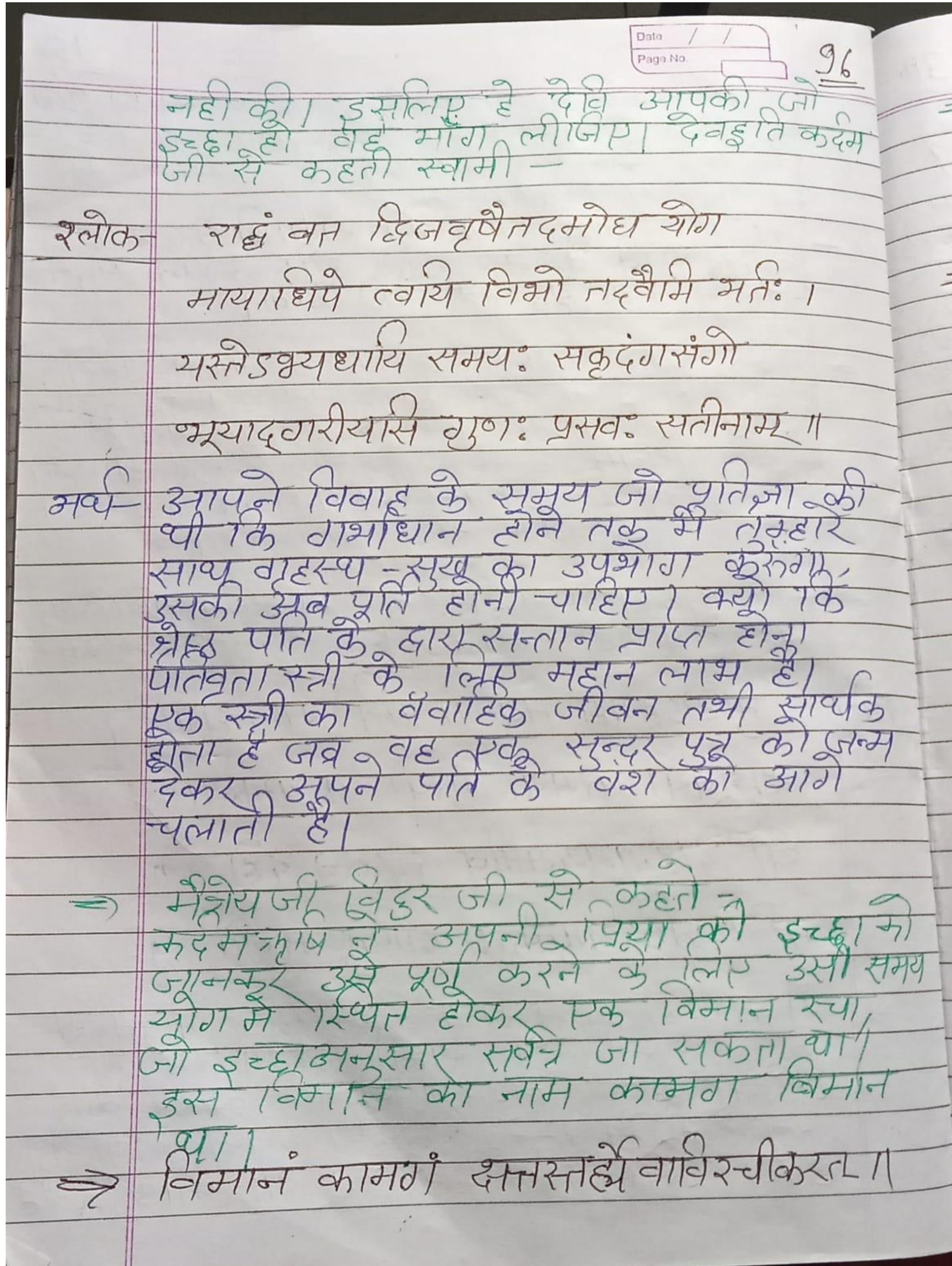
श्लोक- तुष्टोऽहमद्य तव मानवि मानदायाः।

शुश्रूषया परमया परया च भक्त्या ।

यो देहिनामयमतीव सुहृत्स्व देहो ॥

नाविक्षितः समुचितः क्षपितुं मदर्थे ।

=> मैं तुम्हारी उत्तम सेवा और परम भक्ति से बहुत सन्तुष्ट हूँ। सभी देहधारियों को अपना शरीर बहुत प्रिय एवं आदर की वस्तु होता है किन्तु तुमने मेरी सेवा के आगे उसके क्षीण होने की भी कोई परवाह



Date / /
Page No. 96

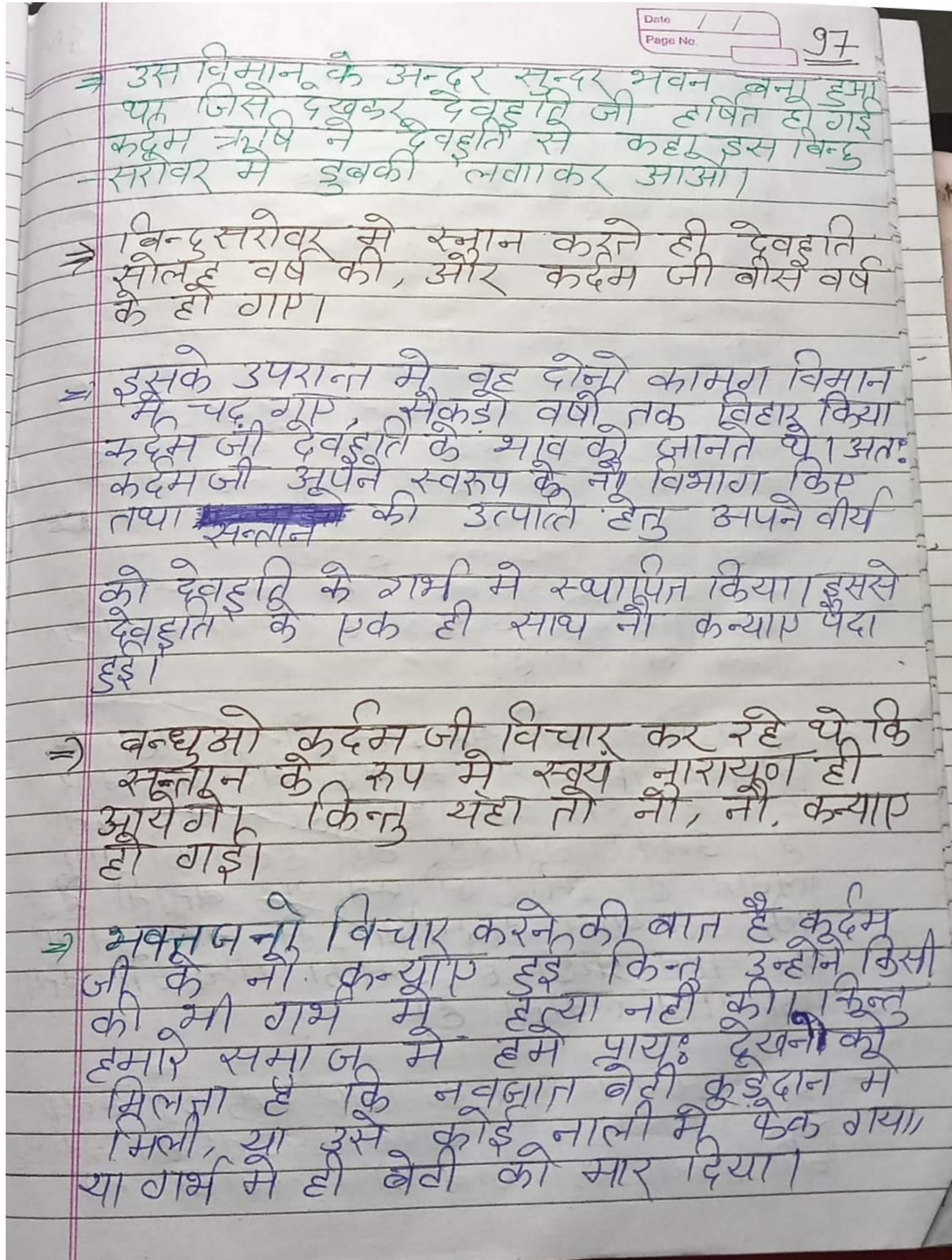
नहीं की। इसलिए हे देवि आपकी जो इच्छा हो वह माँग लीजिए। देवहूति कर्दम जी से कहती स्वामी –

श्लोक– राद्धं बत द्विजवृषैतदमोघ योग
मायाधिपे त्वयि विभो तदवैमि भर्तः।
यस्तेऽभ्यधायि समयः सकृदंगसंगो
भूयाद्गरीयसि गुणः प्रसवः सतीनाम्॥

अर्थ– आपने विवाह के समय जो प्रतिज्ञा की थी कि गर्भाधान होने तक मैं तुम्हारे साथ गृहस्थ-सुख का उपभोग करूंगा, उसकी अब पूर्ति होनी चाहिए। क्यों कि श्रेष्ठ पति के द्वारा सन्तान प्राप्त होना पतिव्रता स्त्री के लिए महान लाभ है। एक स्त्री का वैवाहिक जीवन तभी सार्थक होता है जब वह एक सुन्दर पुत्र को जन्म देकर अपने पति के वंश को आगे चलाती है।

=> मैत्रेय जी विदुर जी से कहते – कर्दम ऋषि ने अपनी प्रिया की इच्छा को जानकर उसे पूर्ण करने के लिए उसी समय योग में स्थित होकर एक विमान रचा, जो इच्छानुसार सर्वत्र जा सकता था। इस विमान का नाम कामग विमान था।

=> विमानं कामगं क्षत्तस्तर्ह्येवाविरचीकरत्॥



97

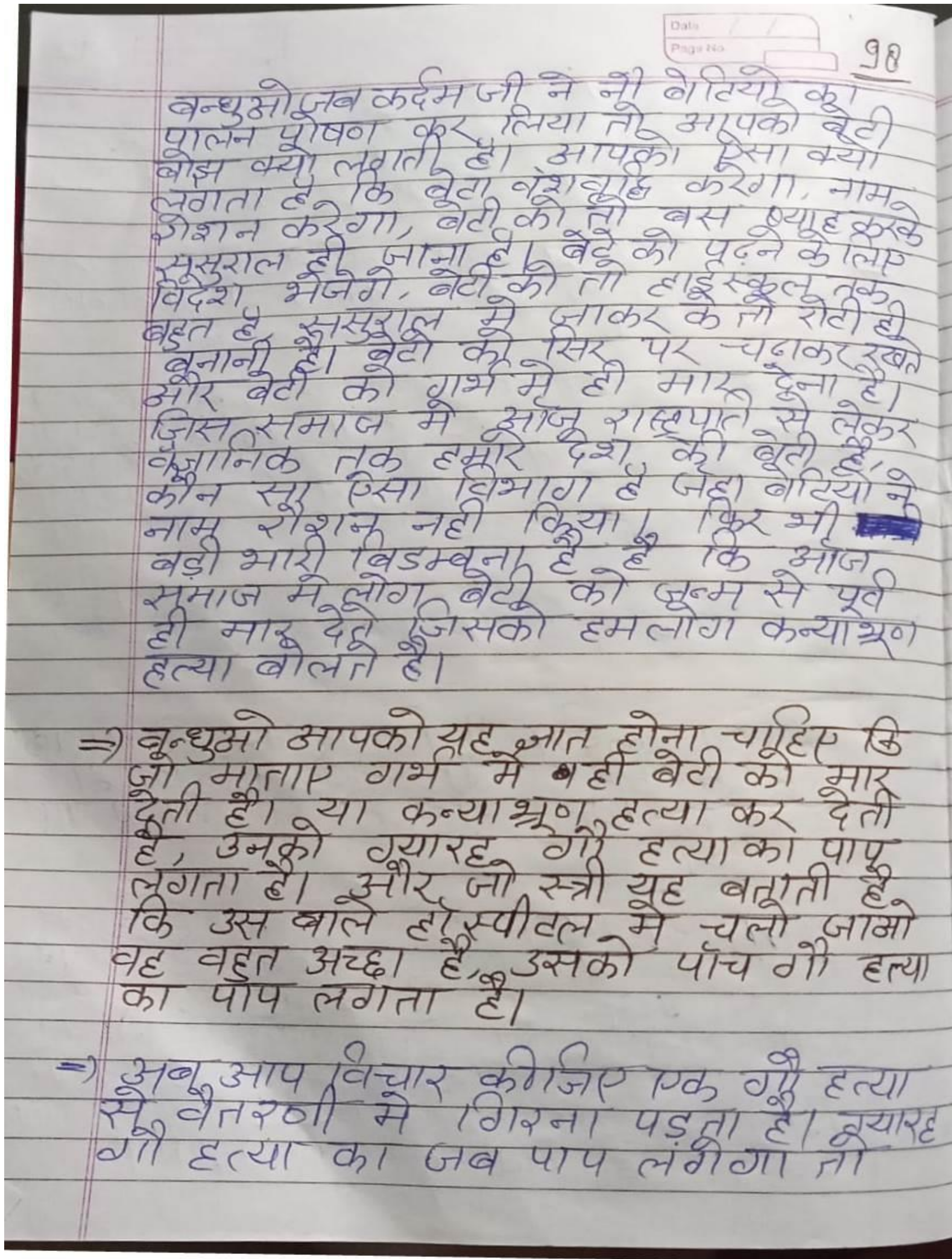
⇒ उस विमान के अन्दर सुन्दर भवन बना हुआ था जिसे देखकर देवहूति जी हर्षित हो गई कर्दम ऋषि ने देवहूति से कहा इस बिन्दु सरोवर में डुबकी लगाकर आओ।

⇒ बिन्दुसरोवर में स्नान करते ही देवहूति सोलह वर्ष की, और कर्दम जी बीस वर्ष के हो गए।

⇒ इसके उपरान्त में वह दोनो कामगा विमान मे चढ़ गए, सैकड़ो वर्षो तक विहार किया कर्दम जी देवहूति के भाव को जानते थे। अतः कर्दम जी अपने स्वरूप के नौ विभाग किए तथा सन्तान की उत्पत्ति हेतु अपने वीर्य को देवहूति के गर्भ मे स्थापित किया। इससे देवहूति के एक ही साथ नौ कन्याए पैदा हुई।

⇒ बन्धुओ कर्दम जी विचार कर रहे थे कि सन्तान के रूप मे स्वयं नारायण ही आयेगे। किन्तु यहा तो नौ, नौ, कन्याए हो गई।

⇒ भक्तजनो विचार करने की बात है कर्दम जी के नौ कन्याए हुई किन्तु उन्होंने किसी की भी गर्भ मे हत्या नही की। किन्तु हमारे समाज मे हमे प्रायः देखने को मिलता है कि नवजात बेटी कुड़ेदान मे मिली, या उसे कोई नाली मे फेंक गया, या गर्भ मे ही बेटी को मार दिया।



98

बन्धुओ जब कर्दम जी ने नौ बेटियो का पालन पोषण कर लिया तो आपको बेटी बोझ क्यो लगती है। आपको ऐसा क्यो लगता है कि बेटा वंशवृद्धि करेगा, नाम रोशन करेगा, बेटी को तो बस ब्याह करके ससुराल ही जाना है। बेटे को पढ़ने के लिए विदेश भेजेगी, बेटी को तो हाई स्कूल तक बहुत है ससुराल मे जाकर के तो रोटी ही बनानी है। बेटे को सिर पर चढ़ाकर रखते और बेटी को गर्भ मे ही मार देना है। जिस समाज मे आज राष्ट्रपति से लेकर वैज्ञानिक तक हमारे देश की बेटी है, कौन सा ऐसा विभाग है जहा बेटियो ने नाम रोशन नही किया। फिर भी बड़ी भारी विडम्बना है कि आज समाज मे लोग बेटी को जन्म से पूर्व ही मार देते जिसको हम लोग कन्याभ्रूण हत्या बोलते है।

=) बन्धुओ आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि जो माताए गर्भ मे ही बेटी को मार देती है। या कन्याभ्रूण हत्या कर देती है, उनको ग्यारह गौ हत्या का पाप लगता है। और जो स्त्री यह बताती है कि उस वाले होस्पीटल मे चलो जाओ वह बहुत अच्छा है, उसको पाँच गौ हत्या का पाप लगता है।

=) अब आप विचार कीजिए एक गौ हत्या से वैतरणी मे गिरना पड़ता है। ग्यारह गौ हत्या का जब पाप लगेगा तो

क्या होगा। बन्धुओ एक बार एक संत से मैने पूछा महाराज जी यह बताइए कि हमे बेटी क्यो मिलती है? तब महाराज जी ने कहा जो व्यक्ति अपने पूर्व जन्म मे कोई यज्ञ नही कर पाता है, उसे इस जन्म मे भगवान बेटी देते है, इसलिए कि बेटा पूर्व जन्म मे कोई यज्ञ नही कर पाए कोई बात नही किंतु इस जन्म मे बेटी दे रहा हूं कोई यज्ञ इस जन्म मे करना न करना किन्तु बेटी का कन्यादान तो अवश्य करोगे जो कोटि यज्ञो के बराबर होता है।

बन्धुओ बेटी तो मा बाप के आंगन की फुलवारी होती है। याद रखना आप बीमार है, और आपका बेटा आपके पास खड़ा है, आपने उससे एक गिलास पीने के लिए जल मांगा। हो सकता है, आपका बेटा आपको मना कर दे, किन्तु बेटी को यदि ससुराल मे पता भी चल जाए कि पिताजी बीमार है, तो उसे एक मिनट ससुराल मे चैन नही पड़ता और दौड़ी दौड़ी अपने पिता से मिलने चली आती है। ऐसी बेटी हमारे देश का गौरव है, इनको गर्भ मे मारे नही इनको आगे बढ़ाये-

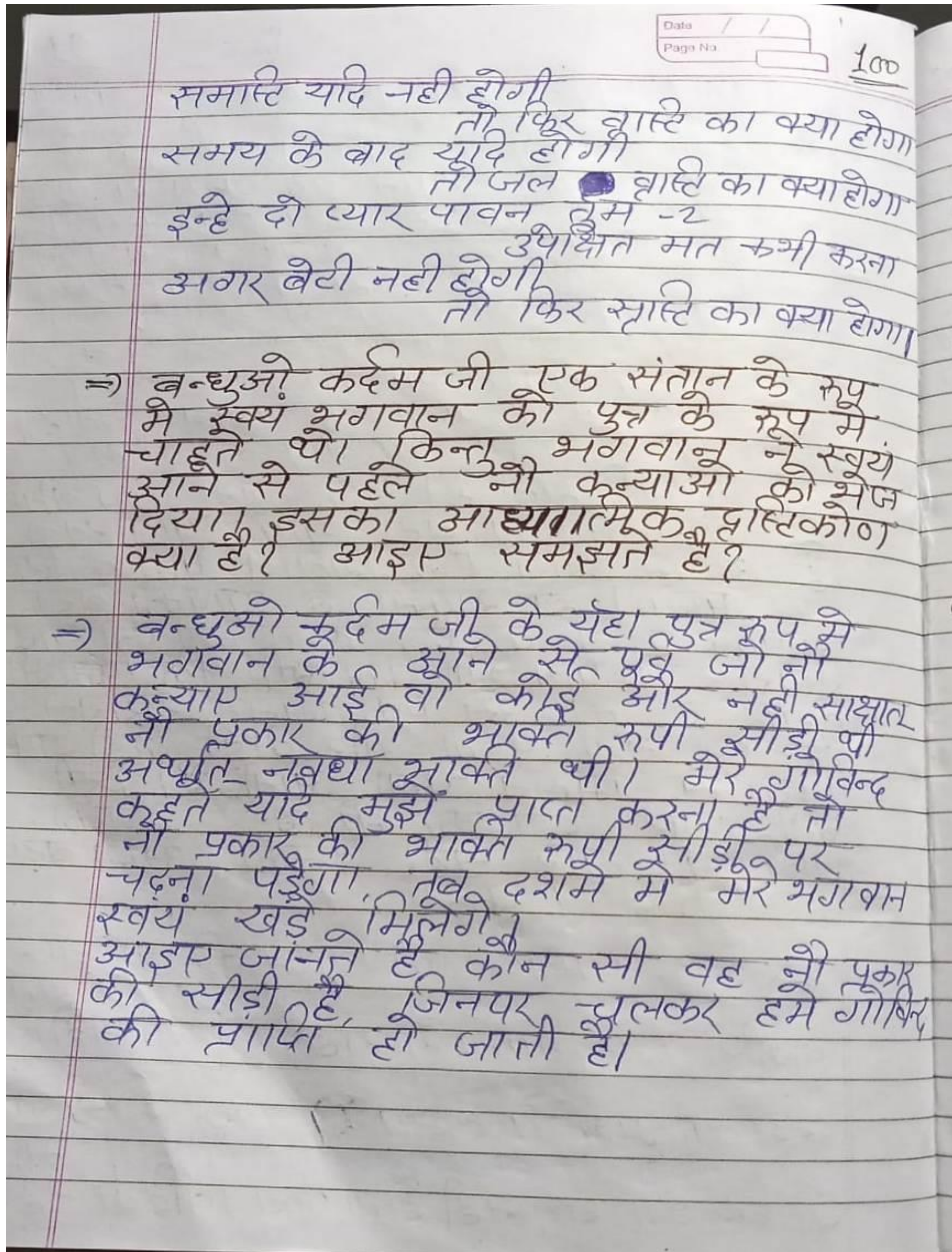
एक कवि ने कहा -

हर एक पाषाण सालिग्राम की बतियाँ नही होती -2

फकीरी जिन्दगानी मे महल कुटियाँ नही होती2

कभी भी गर्भ मे कन्या पे चाकू को चलाना मत

वो घर भी घर नही होता जहां बिटियाँ नही होती

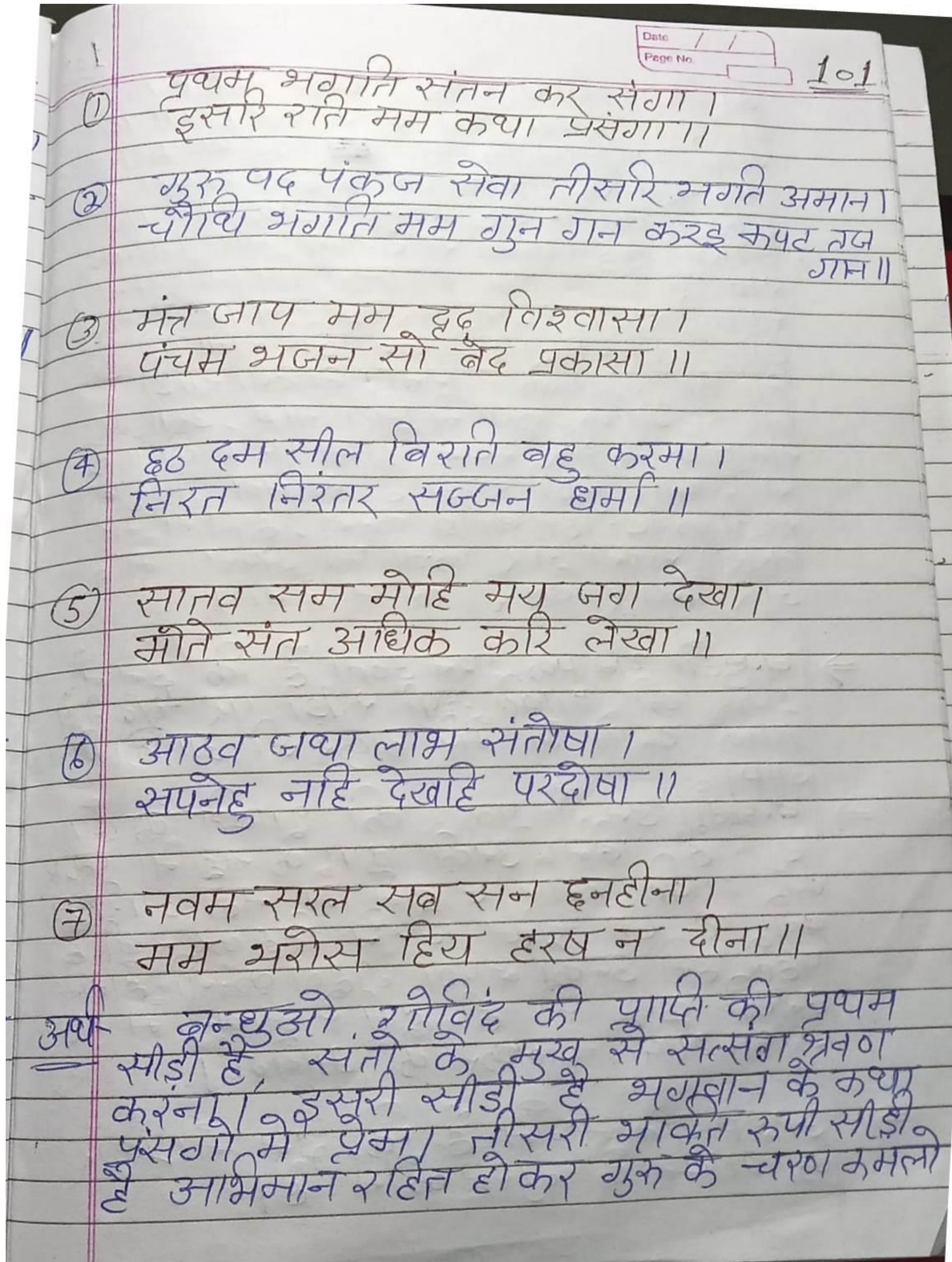


100

समाप्ति यदि नही होगी
तो फिर व्याप्ति का क्या होगा
समय के बाद यदि होगी
तो जल व्याप्ति का क्या होगा
इन्हे दो प्यार पावन तुम -2
उपेक्षित मत कभी करना
अगर बेटी नही होगी
तो फिर व्याप्ति का क्या होगा।

=> बन्धुओ! कर्दम जी एक संतान के रूप मे स्वयं भगवान को पुत्र के रूप मे चाहते थे। किन्तु भगवान् ने स्वयं आने से पहले नौ कन्याओ को भेज दिया, इसका आध्यात्मिक दृष्टिकोण क्या है? आइए समझते है?

=> बन्धुओ कर्दम जी के यहा पुत्र रूप मे भगवान के आने से पूर्व जो नौ कन्याए आई वो कोई और नही साक्षात नौ प्रकार की भक्ति रूपी सीढ़ी थी अर्थात नवधा भक्ति थी। मेरे गोविन्द कहते यदि मुझे प्राप्त करना है तो नौ प्रकार की भक्ति रूपी सीढ़ी पर चढ़ना पड़ेगा, तब दशमे मे मेरे भगवान स्वयं खड़े मिलेगे।
आइए जानते है कौन सी वह नौ प्रकार की सीढ़ी है, जिनपर चलकर हमे गोविंद की प्राप्ति हो जाती है।



Date / /
Page No. 101

① प्रथम भगति संतन कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥

② गुरु पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तज गान॥

③ मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा।
पंचम भजन सो वेद प्रकासा॥

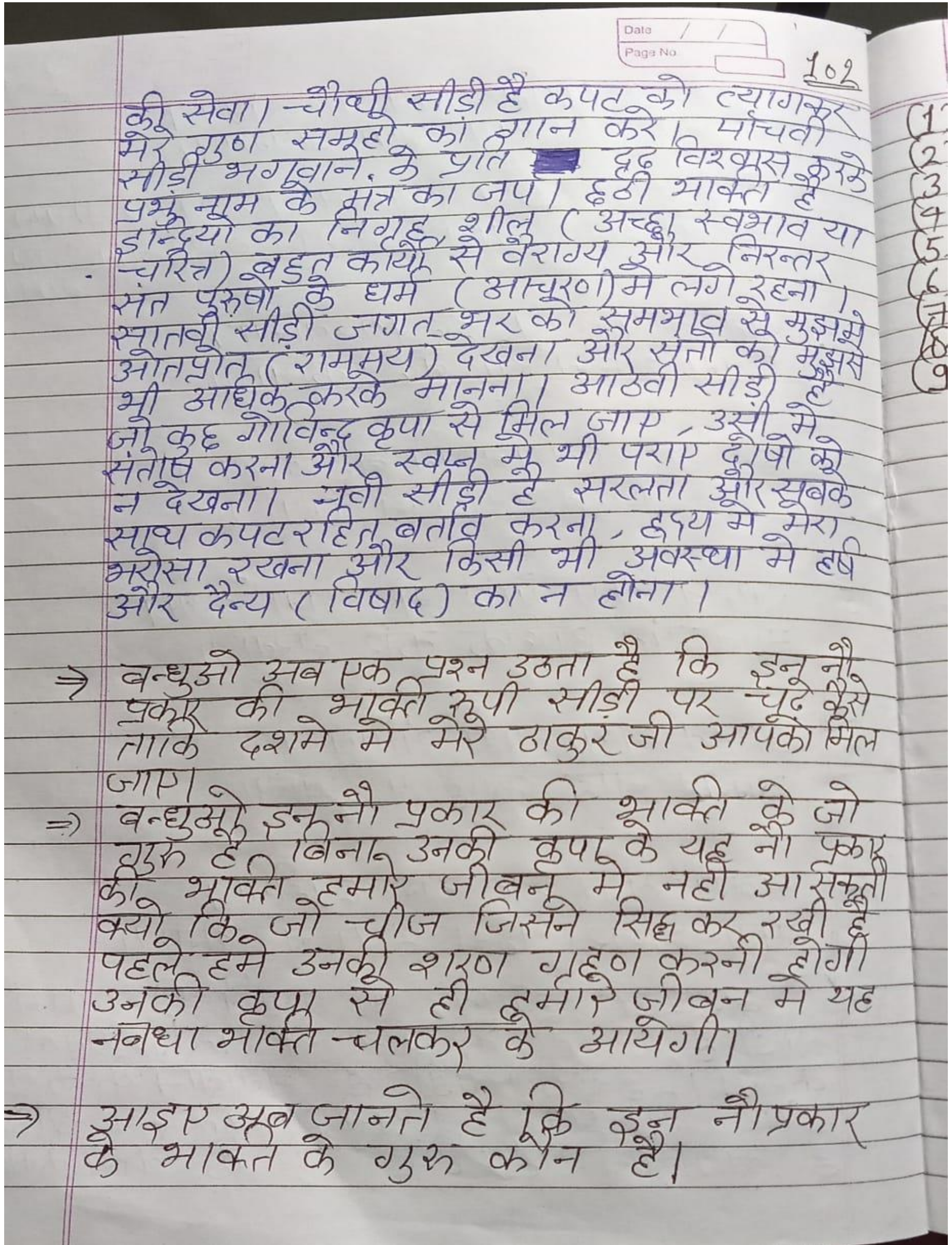
④ छठ दम सील बिरति बहु करमा।
निरत निरंतर सज्जन धर्मा॥

⑤ सातव सम मोहि मय जग देखा।
मोते संत अधिक करि लेखा॥

⑥ आठव जथा लाभ संतोषा।
सपनेहु नहि देखहि परदोषा॥

⑦ नवम सरल सब सन छलहीना।
मम भरोस हिय हरष न दीना॥

अर्थ- बन्धुओ, गोविंद की प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है, संतो के मुख से सत्संग श्रवण करना। दूसरी सीढ़ी है भगवान के कथा प्रसंगो मे प्रेम। तीसरी भक्ति रुपी सीढ़ी है आभिमान रहित होकर गुरु के चरण कमलो



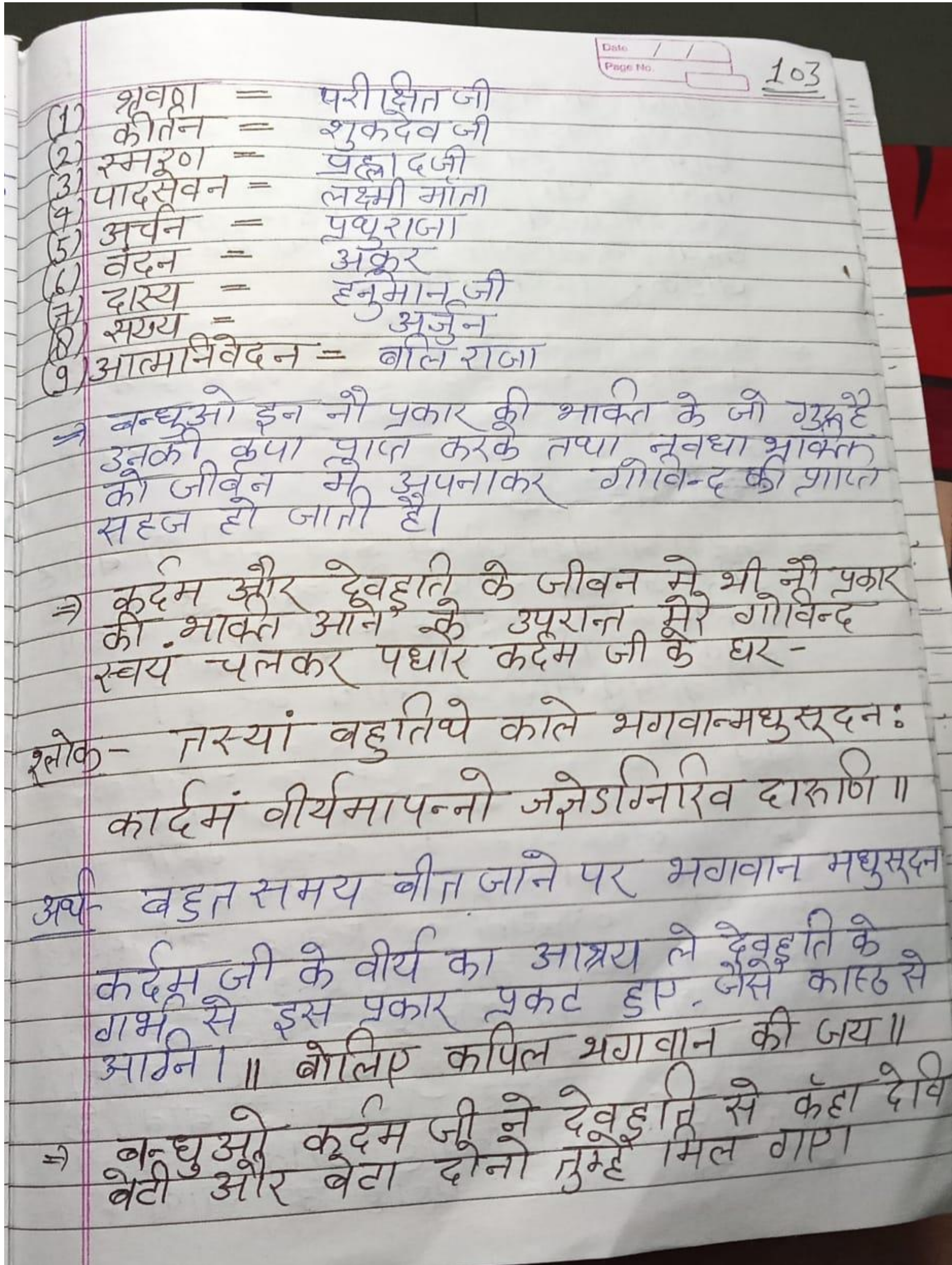
102

की सेवा। चौथी सीढ़ी है कपट को त्यागकर मेरे गुण समूहो का गान करे। पांचवी सीढ़ी भगवान के प्रति दृढ विश्वास करके प्रभु नाम के मंत्र का जप। छठी भक्ति है इन्द्रियो का निग्रह, शील (अच्छा स्वभाव या चरित्र) बहुत कार्यो से वैराग्य और निरन्तर संत पुरुषो के धर्म (आचरण) मे लगे रहना। सातवी सीढ़ी जगत भर को समभाव से मुझमे ओतप्रोत (राममय) देखना और संतो को मुझसे भी अधिक करके मानना। आठवी सीढ़ी है जो कुछ गोविन्द कृपा से मिल जाए, उसी मे संतोष करना और स्वप्न मे भी पराए दोषो को न देखना। नवी सीढ़ी है सरलता और सबके साथ कपटरहित बर्ताव करना, हृदय मे मेरा भरोसा रखना और किसी भी अवस्था मे हर्ष और दैन्य (विषाद) का न होना।

⇒ बन्धुओ अब एक प्रश्न उठता है कि इन नौ प्रकार की भक्ति रूपी सीढ़ी पर चढ़े कैसे ताकि दशमे मे मेरे ठाकुर जी आपको मिल जाए।

⇒ बन्धुओ इन नौ प्रकार की भक्ति के जो गुरु है बिना उनकी कृपा के यह नौ प्रकार की भक्ति हमारे जीवन मे नही आ सकती क्यो कि जो चीज जिसने सिद्ध कर रखी है पहले हमे उनकी शरण ग्रहण करनी होगी उनकी कृपा से ही हमारे जीवन मे यह नवधा भक्ति चलकर के आयेगी।

⇒ आइए अब जानते है कि इन नौ प्रकार के भक्ति के गुरु कौन है।



103

(1) श्रवण = परीक्षित जी
(2) कीर्तन = शुकदेव जी
(3) स्मरण = प्रह्लाद जी
(4) पादसेवन = लक्ष्मी माता
(5) अर्चन = पृथु राजा
(6) वंदन = अक्रूर
(7) दास्य = हनुमान जी
(8) सख्य = अर्जुन
(9) आत्मनिवेदन = बलि राजा

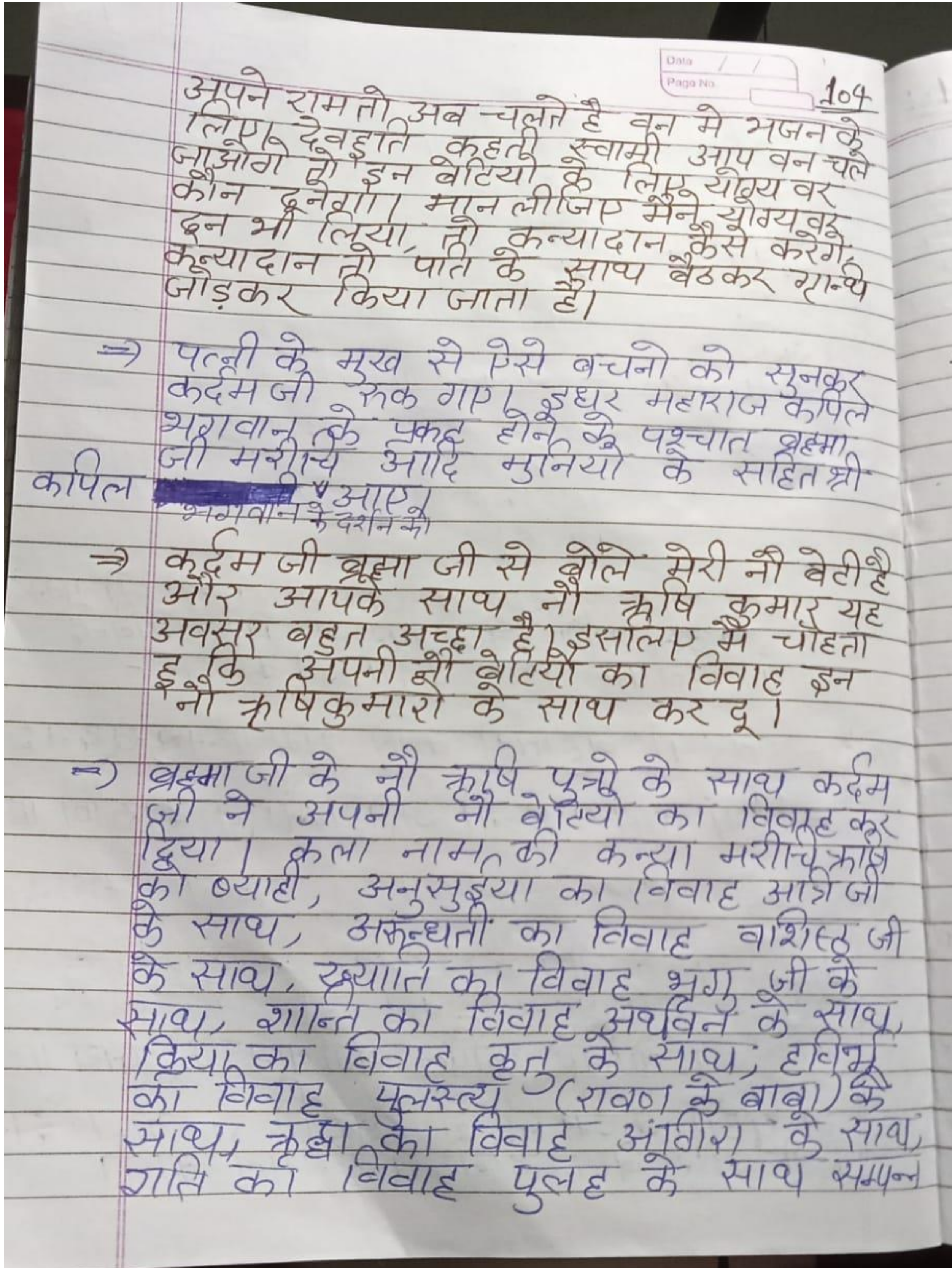
⇒ बन्धुओ इन नौ प्रकार की भक्ति के जो गुरु है उनकी कृपा प्राप्त करके तथा नवधा भक्ति को जीवन मे अपनाकर गोविन्द की प्राप्ति सहज हो जाती है।

⇒ कर्दम और देवहूति के जीवन मे भी नौ प्रकार की भक्ति आने के उपरान्त मेरे गोविन्द स्वयं चलकर पधारे कर्दम जी के घर-

श्लोक- तस्यां बहुतिथे काले भगवान्मधुसूदनः
कार्दमं वीर्यमापन्नो जज्ञेऽग्निरिव दारुणि ॥

अर्थ- बहुत समय बीत जाने पर भगवान मधुसूदन कर्दम जी के वीर्य का आश्रय ले देवहूति के गर्भ से इस प्रकार प्रकट हुए जैसे काष्ठ से अग्नि। ॥ बोलिए कपिल भगवान की जय॥

⇒ बन्धुओ कर्दम जी ने देवहूति से कहा देवि बेटी और बेटा दोनो तुम्हें मिल गए।



Date / /
Page No. 104

अपने राम तो अब चलते है वन मे भजन के लिए। देवहूति कहती स्वामी आप वन चले जाओगे तो इन बेटियो के लिए योग्य वर कौन ढूंढेगा। मान लीजिए मैंने योग्य वर ढूंढ भी लिया, तो कन्यादान कैसे करेंगे, कन्यादान तो पति के साथ बैठकर ग्रन्थि जोड़कर किया जाता है।

⇒ पत्नी के मुख से ऐसे वचनो को सुनकर कर्दम जी रुक गए। इधर महाराज कपिल भगवान के प्रकट होने के पश्चात ब्रह्मा जी मरीचि आदि मुनियो के सहित श्री कपिल भगवान के दर्शन को आए।

⇒ कर्दम जी ब्रह्मा जी से बोले मेरी नौ बेटी है और आपके साथ नौ ऋषि कुमार यह अवसर बहुत अच्छा है। इसलिए मैं चाहता हूं कि अपनी नौ बेटियों का विवाह इन नौ ऋषिकुमारो के साथ कर दूं।

⇒ ब्रह्मा जी के नौ ऋषि पुत्रो के साथ कर्दम जी ने अपनी नौ बेटियो का विवाह कर दिया। कला नाम की कन्या मरीचि ऋषि को ब्याही, अनुसुईया का विवाह अत्रि जी के साथ, अरुन्धती का विवाह वशिष्ठ जी के साथ, ख्याति का विवाह भृगु जी के साथ, शान्ति का विवाह अथर्वन के साथ, क्रिया का विवाह क्रतु के साथ, हविर्भू का विवाह पुलस्त्य (रावण के बाबा) के साथ, श्रद्धा का विवाह अंगिरा के साथ, गति का विवाह पुलह के साथ सम्पन्न

105

हुआ। महाराज कहते है जिस दिन ब्रह्मा जी ऋषि पुत्रो के साथ कपिल भगवान का दर्शन करने आए थे, उस दिन नारदजी भ्रमण पर गए थे, इसलिए अविवाहित रह गए नही तो उनके भी कही फेरे पड़ जाते।

॥ बोलो राधे राधे ॥

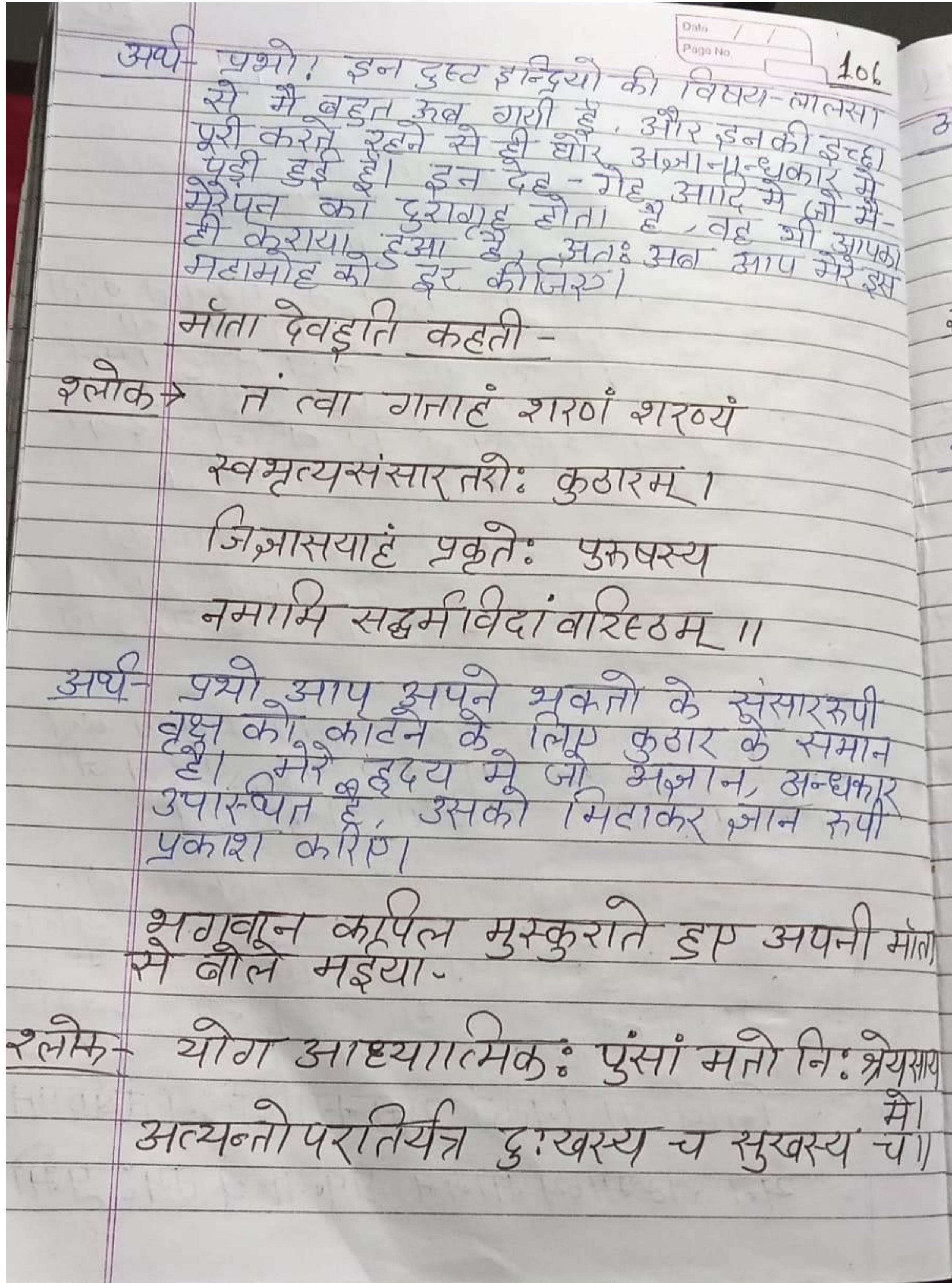
=) बेटियो का विवाह करने के पश्चात कर्दम जी ने देवहूति से कहा देवि बेटियाँ ससुराल की हो गई, बेटा तुम्हे मिल गया। मेरी जिम्मेदारी पूर्ण हुई। अब जो मैने जो भगवान को वचन दिया था उसको पूर्ण करने वन जाऊगा।

=) देवहूति ने कहा स्वामी अब मै आपको रोकूगी नही, मुझे मेरा बेटा मिल गया। बेटियो का विवाह हो गया, अब कोई चिन्ता नही।

=) कपिल भगवान और उनकी मईया बस दो ही लोग रह गए घर पर, कर्दम जी वन चले गए, बेटिया ससुराल।

=) एक दिन देवहूति माता ने कपिल भगवान को श्रृंगार करके (स्नान के उपरान्त) आसन पर बैठाया, उसी समय कपिल भगवान की नौ बहने भी आ गई। माता देवहूति ने कपिल भगवान से हाथ जोड़कर कहा-

श्लोक- निर्विण्णा नितरां भूमन्नसदिन्द्रिय तर्षणात्।
येन सम्भाव्य मानेन प्रपन्नान्धं तमः प्रभो॥



Date / /
Page No. 106

अर्थ- प्रभो! इन दुष्ट इन्द्रियो की विषय-लालसा से मै बहुत ऊब गयी हूँ, और इनकी इच्छा पूरी करते रहने से ही घोर अज्ञानान्धकार में पड़ी हुई हूँ। इन देह - गेह आदि मे जो मै-मेरेपन का दुराग्रह होता है, वह भी आपकी ही कराया हुआ है, अतः अब आप मेरे इस महामोह को दूर कीजिए।

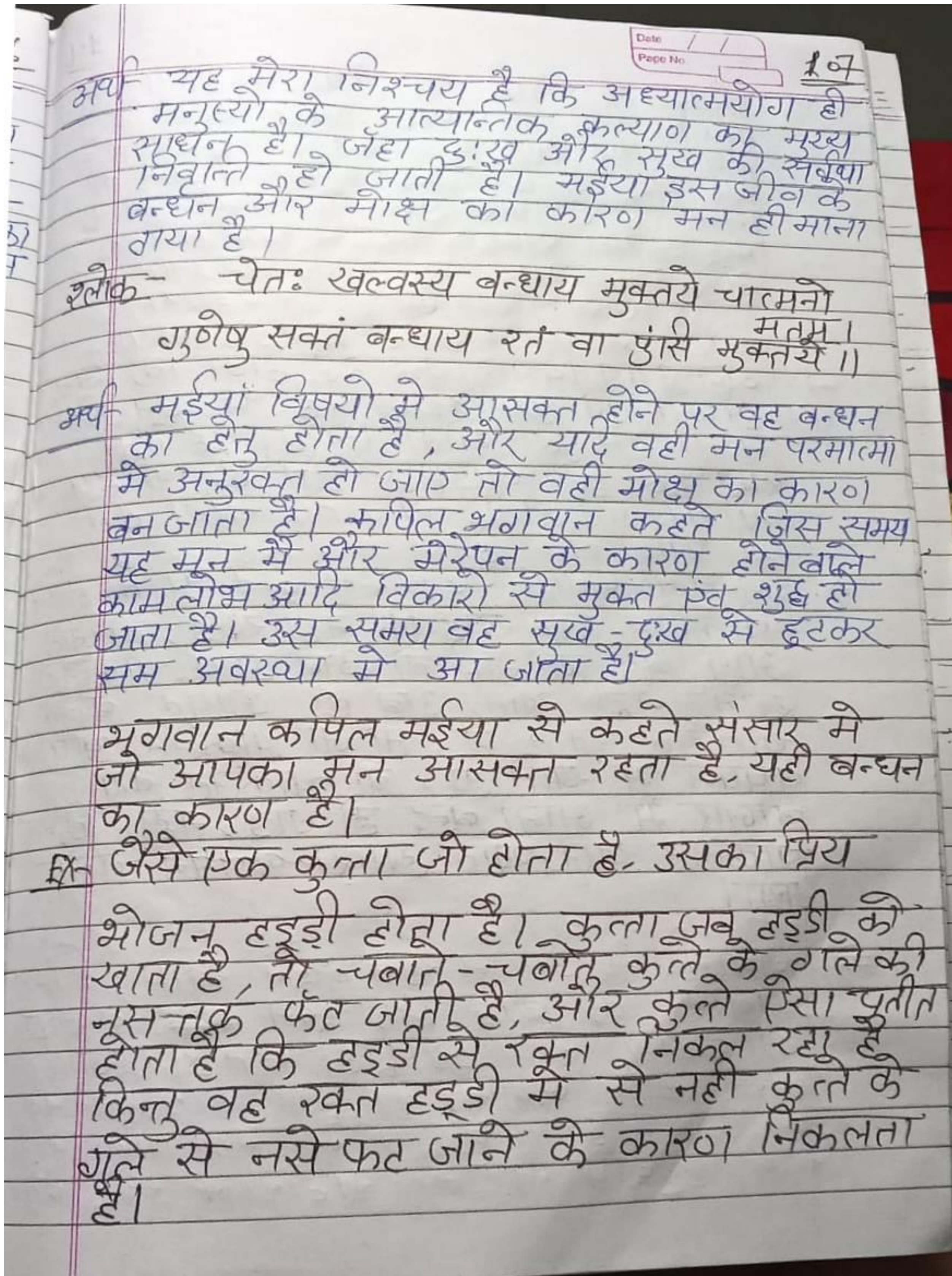
मॉता देवहूति कहती -

श्लोक→ तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं
स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम्।
जिज्ञासयाहं प्रकृतेः पुरुषस्य
नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम्॥

अर्थ- प्रभो आप अपने भक्तो के संसाररूपी वृक्ष को काटने के लिए कुठार के समान है। मेरे हृदय मे जो अज्ञान, अन्धकार उपास्थित है, उसको मिटाकर ज्ञान रूपी प्रकाश करिए।

भगवान कपिल मुस्कुराते हुए अपनी मॉता से बोले मईया-

श्लोक- योग आध्यात्मिकः पुंसां मतो निःश्रेयसाय मे।
अत्यन्तोपरतिर्यत्र दुःखस्य च सुखस्य च॥



107

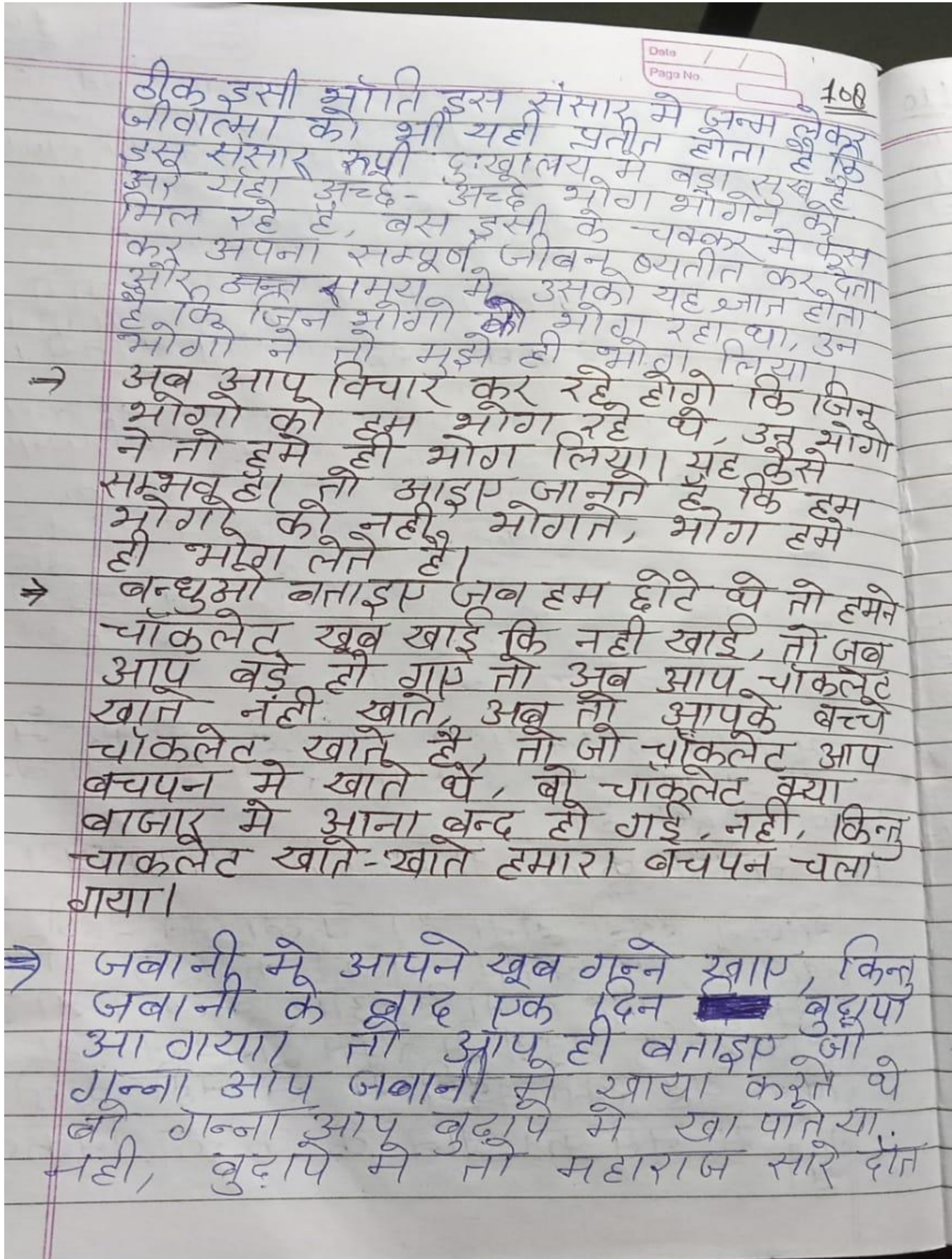
अर्थ- यह मेरा निश्चय है कि अध्यात्मयोग ही मनुष्यो के आत्यान्तिक कल्याण का मुख्य साधन है, जहा दुःख और सुख की सर्वथा निवृत्ति हो जाती है। मईया इस जीव के बन्धन और मोक्ष का कारण मन ही माना गया है।

श्लोक- चेतः खल्वस्य बन्धाय मुक्तये चात्मनो मतम्।
गुणेषु सक्तं बन्धाय रतं वा पुंसि मुक्तये।।

अर्थ- मईयां विषयो मे आसक्त होने पर वह बन्धन का हेतु होता है, और यदि वही मन परमात्मा मे अनुरक्त हो जाए तो वही मोक्ष का कारण बन जाता है। कपिल भगवान कहते जिस समय यह मन मैं और मेरेपन के कारण होने वाले काम लोभ आदि विकारो से मुक्त एवं शुद्ध हो जाता है। उस समय वह सुख-दुख से छुटकर सम अवस्था मे आ जाता है।

भगवान कपिल मईया से कहते संसार मे जो आपका मन आसक्त रहता है, यही बन्धन का कारण है।

Ex- जैसे एक कुत्ता जो होता है, उसका प्रिय भोजन हड्डी होता है। कुत्ता जब हड्डी को खाता है, तो चबाते-चबाते कुत्ते के गले की नस तक फट जाती है, और कुत्ते ऐसा प्रतीत होता है कि हड्डी से रक्त निकल रहा है किन्तु वह रक्त हड्डी मे से नही कुत्ते के गले से नसे फट जाने के कारण निकलता है।



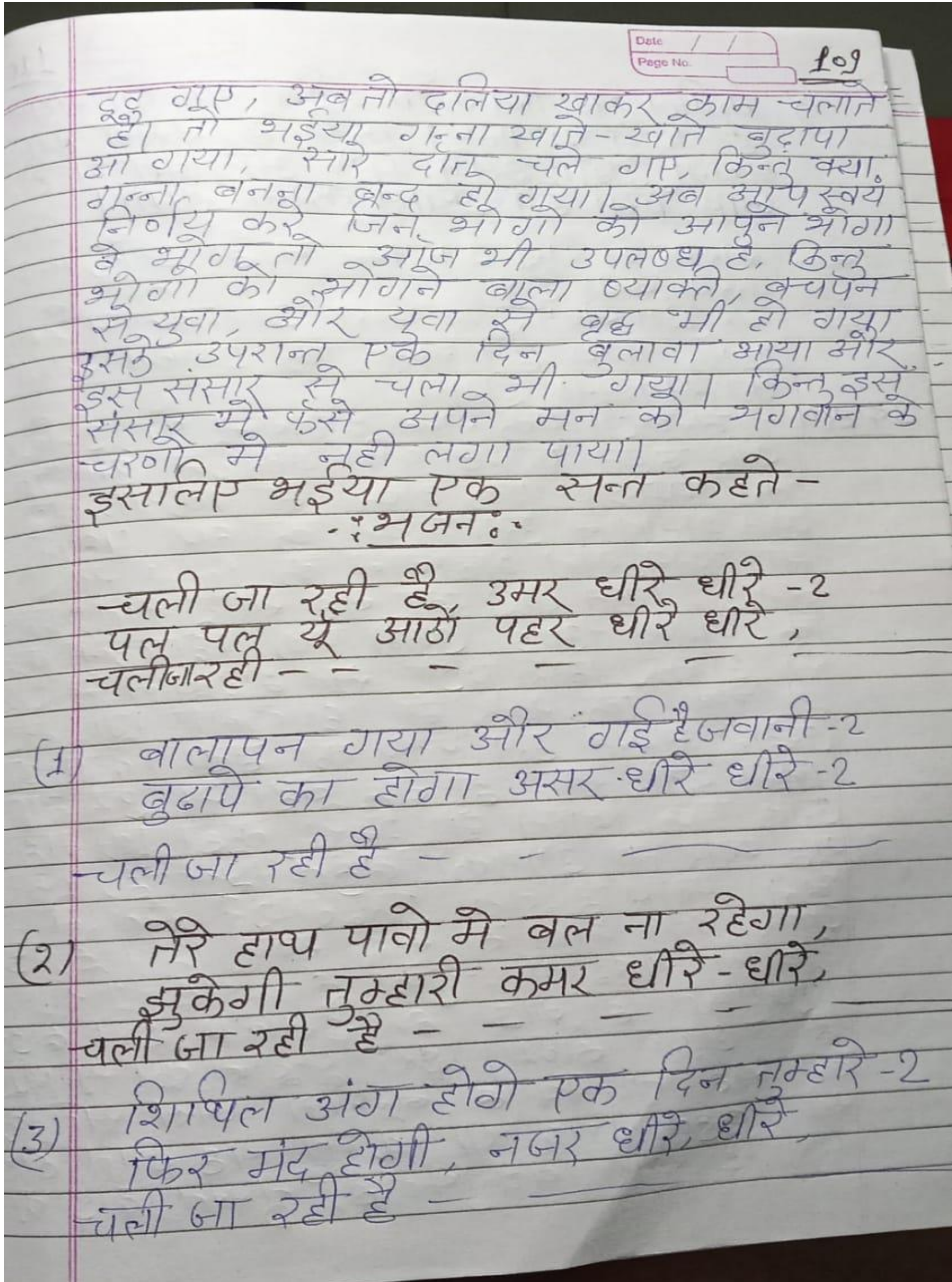
108

ठीक इसी भाँति इस संसार मे जन्म लेकर जीवात्मा को भी यही प्रतीत होता है कि इस संसार रूपी दुःखालय मे बड़ा सुख है और यहां अच्छे- अच्छे भोग भोगने को मिल रहे है, बस इसी के चक्कर मे फँस कर अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देता और अन्त समय मे उसको यह ज्ञात होता है कि जिन भोगो को भोग रहा था, उन भोगो ने तो मुझे ही भोग लिया।

→ अब आप विचार कर रहे होगे कि जिन भोगो को हम भोग रहे थे, उन भोगो ने तो हमे ही भोग लिया। यह कैसे सम्भव है। तो आइए जानते है कि हम भोगो को नही भोगते, भोग हमे ही भोग लेते है।

→ बन्धुओ बताइए जब हम छोटे थे तो हमने चॉकलेट खूब खाई कि नही खाई, तो जब आप बड़े हो गए तो अब आप चॉकलेट खाते नंही खाते, अब तो आपके बच्चे चॉकलेट खाते है, तो जो चॉकलेट आप बचपन मे खाते थे, वो चॉकलेट क्या बाजार मे आना बन्द हो गई, नही, किन्तु चाकलेट खाते-खाते हमारा बचपन चला गया।

→ जवानी मे आपने खूब गन्ने खाए, किन्तु जवानी के बाद एक दिन बुढ़ापा आ गया। तो आप ही बताइए जो गन्ना आप जवानी मे खाया करते थे वो गन्ना आप बुढ़ापे मे खा पाते या नही, बुढ़ापे मे तो महाराज सारे दाँत



Date / /
Page No. 109

टूट गए, अब तो दलिया खाकर काम चलाते हो तो भईया गन्ना खाते- खाते बुढ़ापा आ गया, सारे दांत चले गए, किन्तु क्या गन्ना बनना बन्द हो गया। अब आप स्वयं निर्णय करे जिन भोगो को आपने भोगा वे भोग तो आज भी उपलब्ध है, किन्तु भोगो को भोगने वाला व्यक्ति, बचपन से युवा, और युवा से वृद्ध भी हो गया इसके उपरान्त एक दिन बुलावा आया और इस संसार से चला भी गया। किन्तु इस संसार मे फंसे अपने मन को भगवान के चरणो मे नही लगा पाया।

इसलिए भईया एक सन्त कहते -

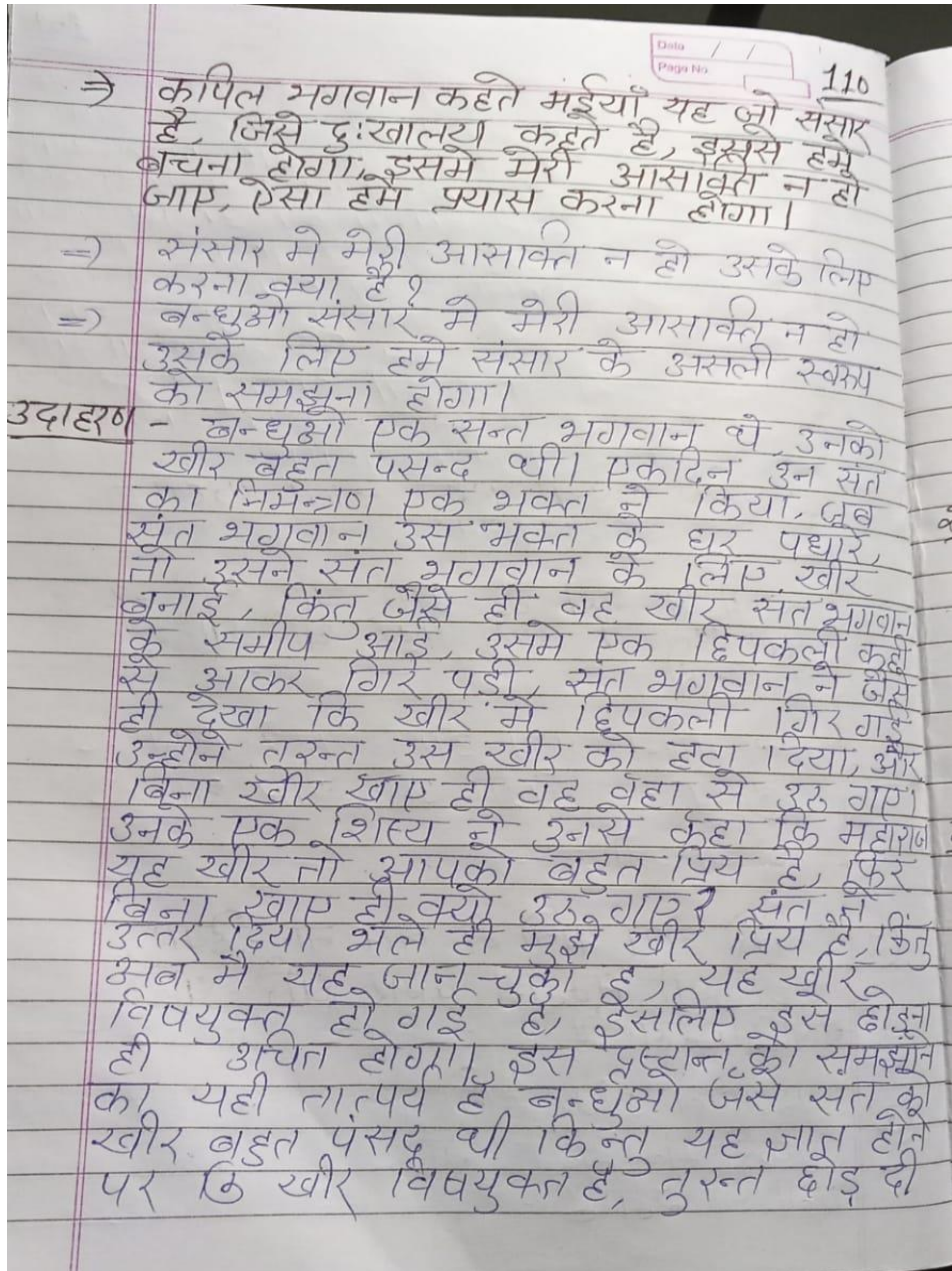
:भजन:

चली जा रही है, उमर धीरे धीरे -2
पल पल यूं आठों पहर धीरे धीरे,
चलीजारही - - - - -

(1) बालापन गया और गई है जवानी -2
बुढ़ापे का होगा असर धीरे धीरे -2
चली जा रही है - -

(2) तेरे हाथ पावो मे बल ना रहेगा,
झुकेगी तुम्हारी कमर धीरे - धीरे,
चली जा रही है - - - -

(3) शिथिल अंग होगे एक दिन तुम्हारे -2
फिर मंद होगी, नजर धीरे धीरे,
चली जा रही है -



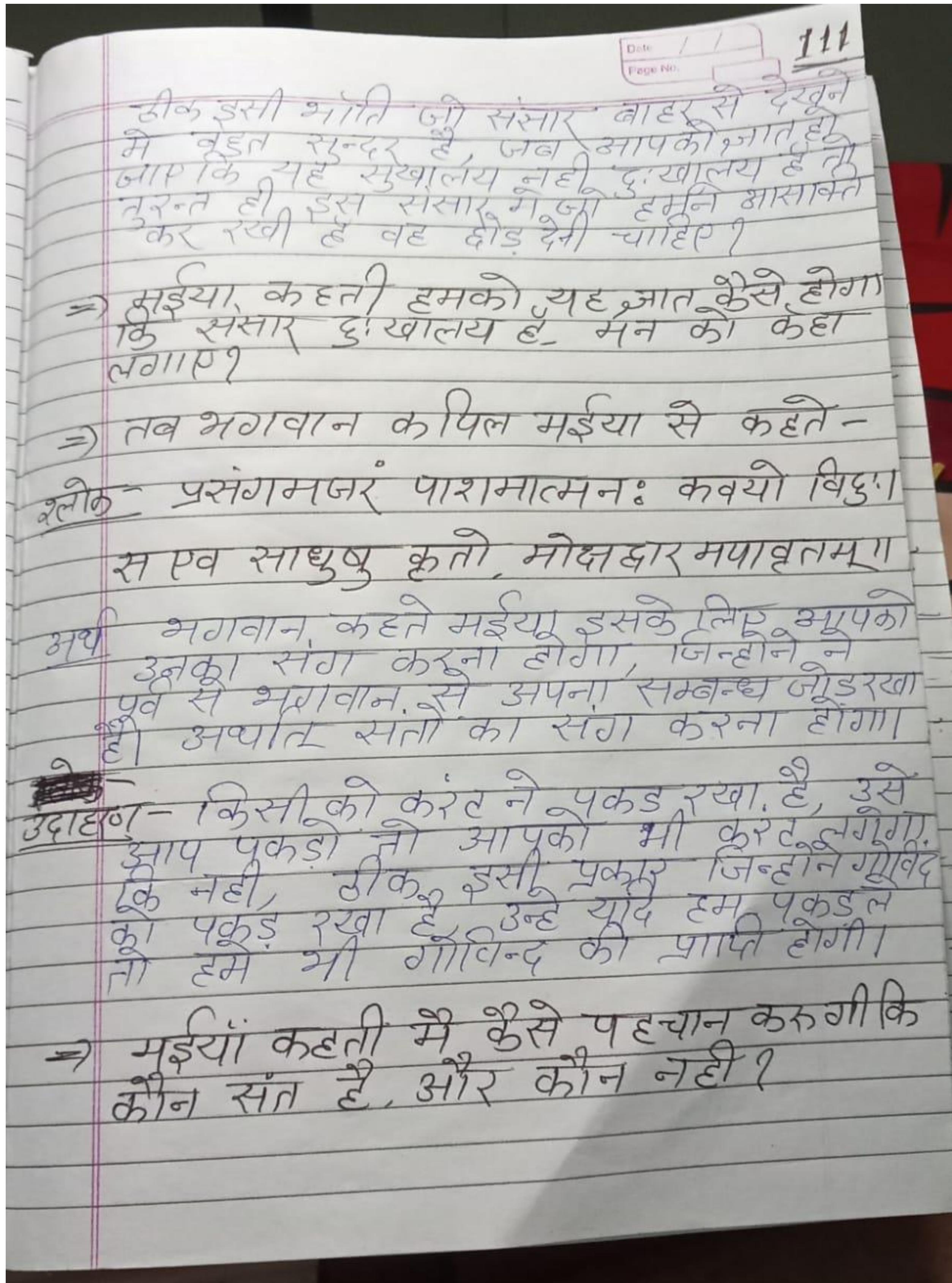
110

⇒ कपिल भगवान कहते मईया, यह जो संसार है, जिसे दुःखालय कहते है, इससे हमे बचना होगा, इसमे मेरी आसक्ति न हो जाए, ऐसा हमें प्रयास करना होगा।

⇒ संसार मे मेरी आसक्ति न हो उसके लिए करना क्या है?

⇒ बन्धुओ संसार मे मेरी आसक्ति न हो उसके लिए हमे संसार के असली स्वरूप को समझना होगा।

उदाहरण - बन्धुओ एक सन्त भगवान थे, उनको खीर बहुत पसन्द थी। एकदिन उन संत का निमन्त्रण एक भक्त ने किया, जब संत भगवान उस भक्त के घर पधारे, तो उसने संत भगवान के लिए खीर बनाई, किंतु जैसे ही वह खीर संत भगवान के समीप आई, उसमे एक छिपकली कहीं से आकर गिर पड़ी, संत भगवान ने जैसे ही देखा कि खीर मे छिपकली गिर गई उन्होने तुरन्त उस खीर को हटा दिया, और बिना खीर खाए ही वह वहा से उठ गए। उनके एक शिष्य ने उनसे कहा कि महाराज यह खीर तो आपको बहुत प्रिय है, फिर बिना खाए ही क्यो उठ गए? संत ने उत्तर दिया भले ही मुझे खीर प्रिय है, किंतु अब मै यह जान चुका हूँ, यह खीर विषयुक्त हो गई है, इसलिए इसे छोड़ना ही उचित होगा। इस दृष्टान्त को समझाने का यही तात्पर्य है बन्धुओ जैसे संत को खीर बहुत पंसद थी किन्तु यह ज्ञात होने पर कि खीर विषयुक्त है, तुरन्त छोड़ दी



Date / / Page No. 111

ठीक इसी भाँति जो संसार बाहर से देखने मे बहुत सुन्दर है, जब आपको ज्ञात हो जाए कि यह सुखालय नही दुःखालय है तो तुरन्त ही इस संसार मे जो हमने आसक्ति कर रखी है वह तोड़ देनी चाहिए।

=> मईया कहती हमको यह ज्ञात कैसे होगा कि संसार दुःखालय है, मन को कहाँ लगाए?

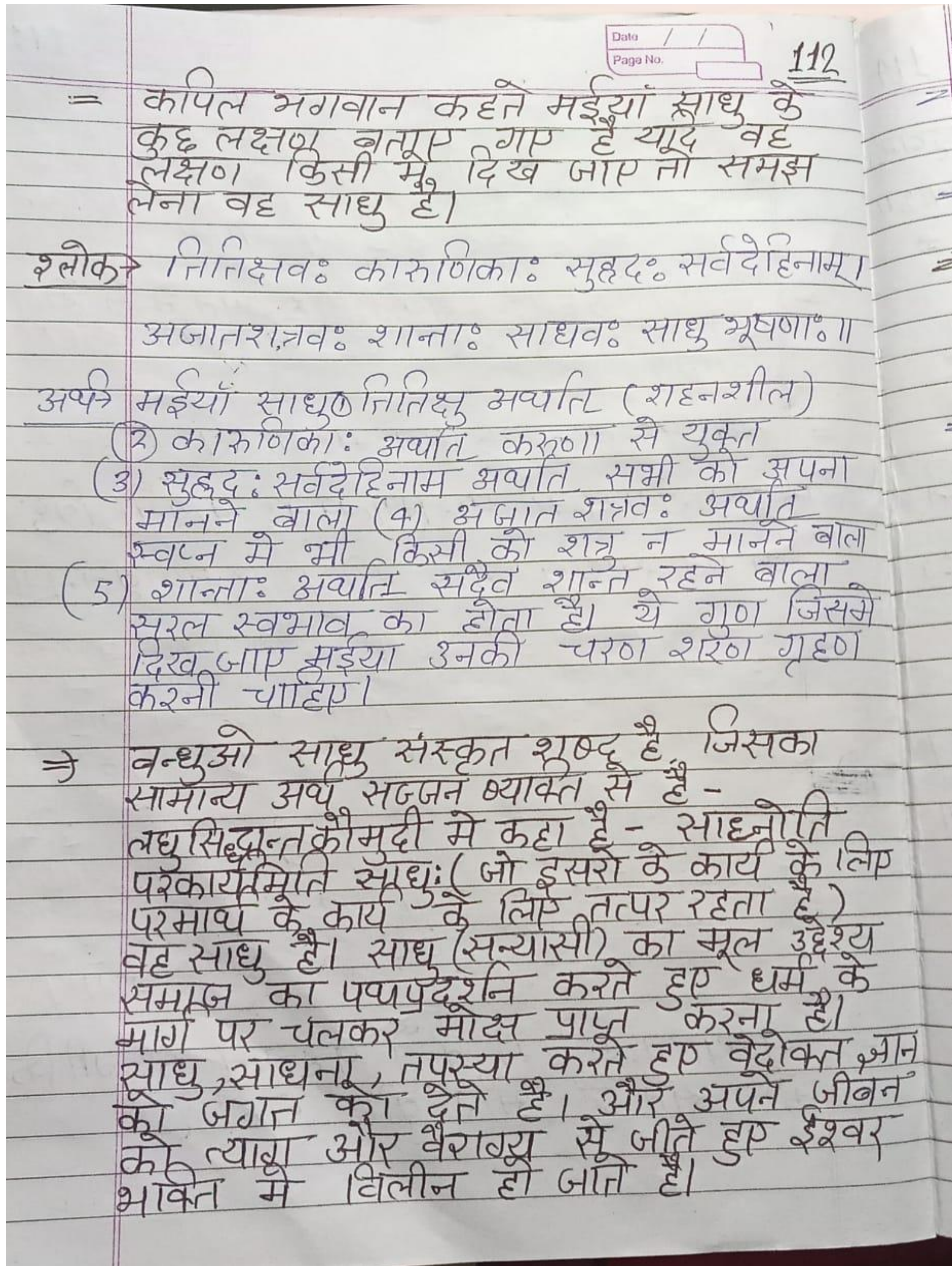
=> तब भगवान कपिल मईया से कहते –

श्लोक – प्रसंगमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः।
स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम्॥

अर्थ – भगवान कहते मईया इसके लिए आपको उनका संग करना होगा, जिन्होने ने पूर्व से भगवान से अपना सम्बन्ध जोड़ रखा है अर्थात् संतो का संग करना होगा।

उदाहरण – किसी को करंट ने पकड़ रखा है, उसे आप पकड़ो तो आपको भी करंट लगेगा कि नही, ठीक इसी प्रकार जिन्होने गोविंद को पकड़ रखा है उन्हे यदि हम पकड़ ले तो हमे भी गोविन्द की प्राप्ति होगी।

=> मईयां कहती मै कैसे पहचान करुगी कि कौन संत है और कौन नही?



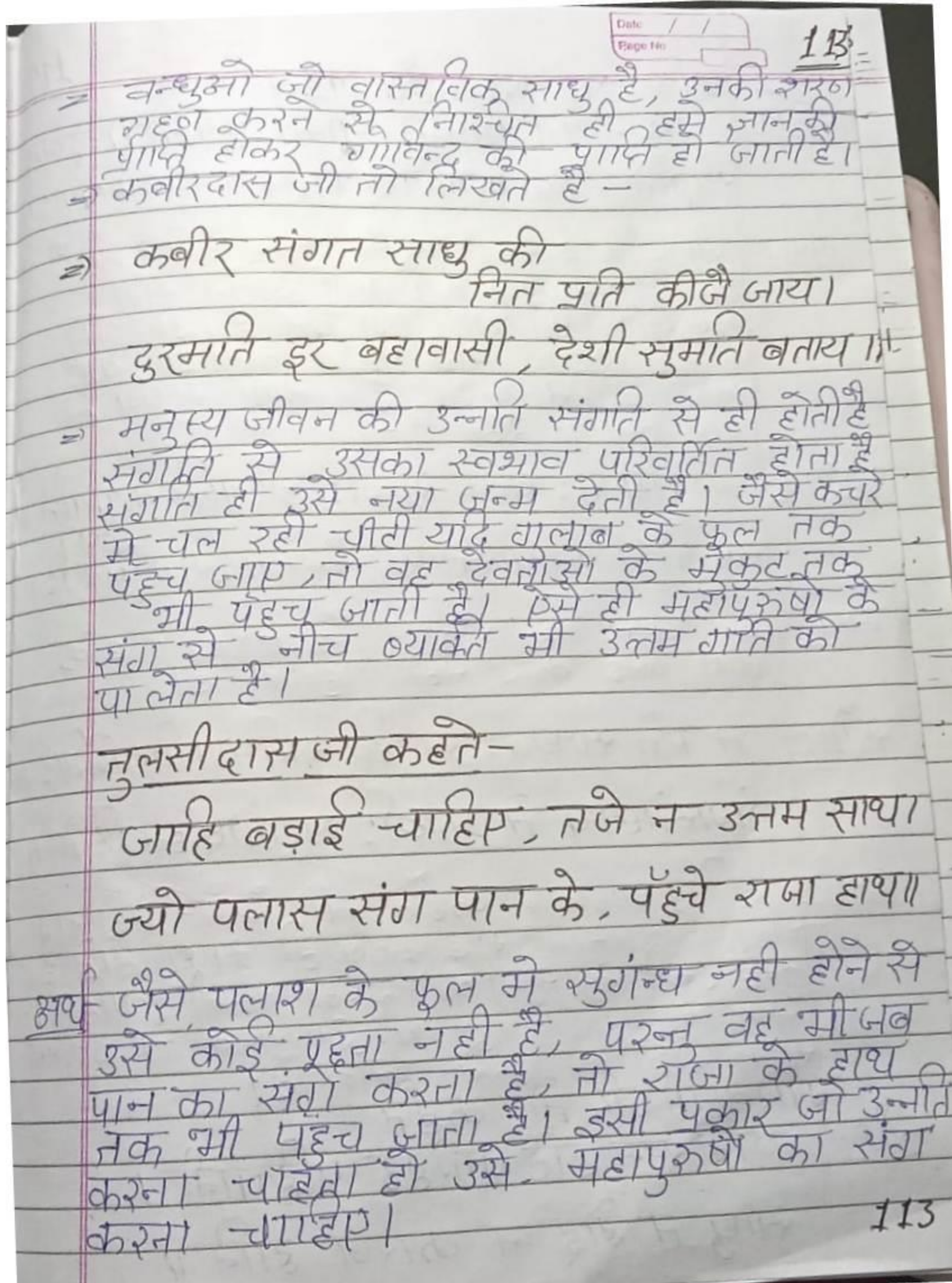
112

= कपिल भगवान कहते मईयां साधु के कुछ लक्षण बताए गए है यदि वह लक्षण किसी मे दिख जाए तो समझ लेना वह साधु है।

श्लोक→ तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम्।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः॥

अर्थ→ मईयाँ साधु (1) तितिक्षु अर्थात (शहनशील) (2) कारुणिकाः अर्थात करुणा से युक्त (3) सुहृदः सर्वदेहिनाम अर्थात सभी को अपना मानने वाला (4) अजातशत्रवः अर्थात स्वप्न मे भी किसी को शत्रु न मानने वाला (5) शान्ताः अर्थात सदैव शान्त रहने वाला सरल स्वभाव का होता है। ये गुण जिसमे दिख जाए मईया उनकी चरण शरण ग्रहण करनी चाहिए।

⇒ बन्धुओ साधु संस्कृत शब्द है, जिसका सामान्य अर्थ सज्जन व्यक्ति से है - लघुसिद्धान्तकौमुदी मे कहा है - साध्नोति परकार्यमिति साधुः (जो दूसरो के कार्य के लिए परमार्थ के कार्य के लिए तत्पर रहता है) वह साधु है। साधु (सन्यासी) का मूल उद्देश्य समाज का पथप्रदर्शन करते हुए धर्म के मार्ग पर चलकर मोक्ष प्राप्त करना है। साधु, साधना, तपस्या करते हुए वेदोक्त ज्ञान को जगत को देते है। और अपने जीवन को त्याग और वैराग्य से जीते हुए ईश्वर भक्ति मे विलीन हो जाते है।



113

⇒ बन्धुओ जो वास्तविक साधु है, उनकी शरण ग्रहण करने से निश्चित ही हमे ज्ञान की प्राप्ति होकर गोविन्द की प्राप्ति हो जाती है।
⇒ कबीरदास जी तो लिखते है –

⇒ कबीर संगत साधु की
नित प्राति कीजै जाय।
दुरमाति इर बहावासी, देशी सुमाति बताय ॥

⇒ मनुष्य जीवन की उन्नाति संगाति से ही होती है संगाति से उसका स्वभाव परिवर्तित होता है संगाति ही उसे नया जन्म देती है। जैसे कचरे मे चल रही चीटी यदि गुलाब के फुल तक पहुंच जाए, तो वह देवताओ के मुकुट तक भी पहुच जाती है। ऐसे ही महापुरुषो के संग से नीच व्यक्ति भी उत्तम गाति को पा लेता है।

तुलसीदास जी कहते–
जाहि बड़ाई चाहिए, तजे न उत्तम साथ।
ज्यो पलास संग पान के, पहुँचे राजा हाथ॥

अर्थ – जैसे पलाश के फुल मे सुगंन्ध नही होने से उसे कोई पूछता नही है, परन्तु वह भी जब पान का संग करता है, तो राजा के हाथ तक भी पहुच जाता है। इसी प्रकार जो उन्नाति करना चाहता हो उसे महापुरुषो का संग करना चाहिए।

113

Date / /
Page No. 114

→ कपिल भगवान कहते मईया -

श्लोक- मय्यनन्येन भावेन भक्तिं कुर्वन्ति ये दृढाम्।
मत्कृते त्यक्त कर्माणिस्त्यक्तस्वजन बान्धवाः॥

अर्थात् जो जीव अनन्य भाव से सुदृढ़ प्रेम करते है, मेरे लिए सम्पूर्ण कर्म तथा अपने सगे सम्बन्धियो को भी त्याग देते है, और मेरे परायण रहकर मेरी पवित्र कथाओ का श्रवण, कीर्तन करते है, तथा मुझमे ही चित्त लगाए रहते है -

श्लोक- मदाश्रयाः कथा मृष्टाः, शृण्वन्ति कथयन्ति च।
तपन्ति विविधास्तापा, नैतान्मद्गत चेतसः॥

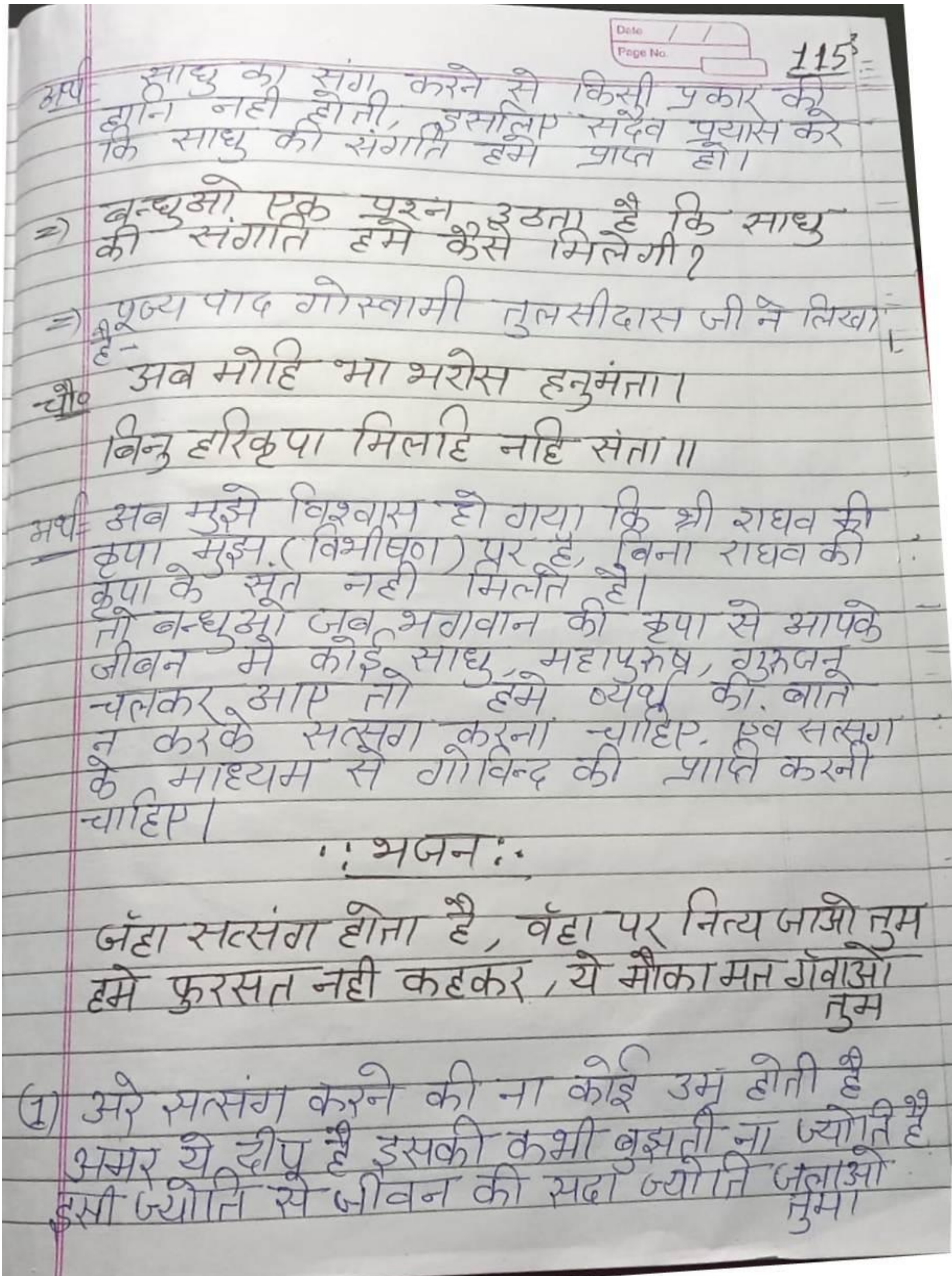
अर्थ- उन भक्तो को संसार के तरह-तरह के ताप कोई कष्ट नही पहुँचाते है।

श्लोक- त एते साधवः साध्वि सर्वसंगविवर्जिताः।
संगस्तेष्वथ ते प्रार्थ्यः संगदोषहरा हि ते॥

अर्थ- कपिल भगवान कहते माँ ऐसे-ऐसे सर्व संगपरित्यागी महापुरुष ही साधु होते है, तुम्हे उन्ही के संग की इच्छा करनी चाहिए। क्यो कि माँ ऐसे साधु आसक्ति से उत्पन्न सभी दोषो को हरने वाले है।

गोस्वामी जी तो कहते -

चौ० एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी।
साधु ते होइ न कारज हानी॥



Date / /
Page No. 115

अर्थ- साधु का संग करने से किसी प्रकार की हानि नही होती, इसलिए सदैव प्रयास करे कि साधु की संगति हमे प्राप्त हो।

=> बन्धुओ एक प्रश्न उठता है कि साधु की संगति हमे कैसे मिलेगी?

=> पूज्य पाद गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है-

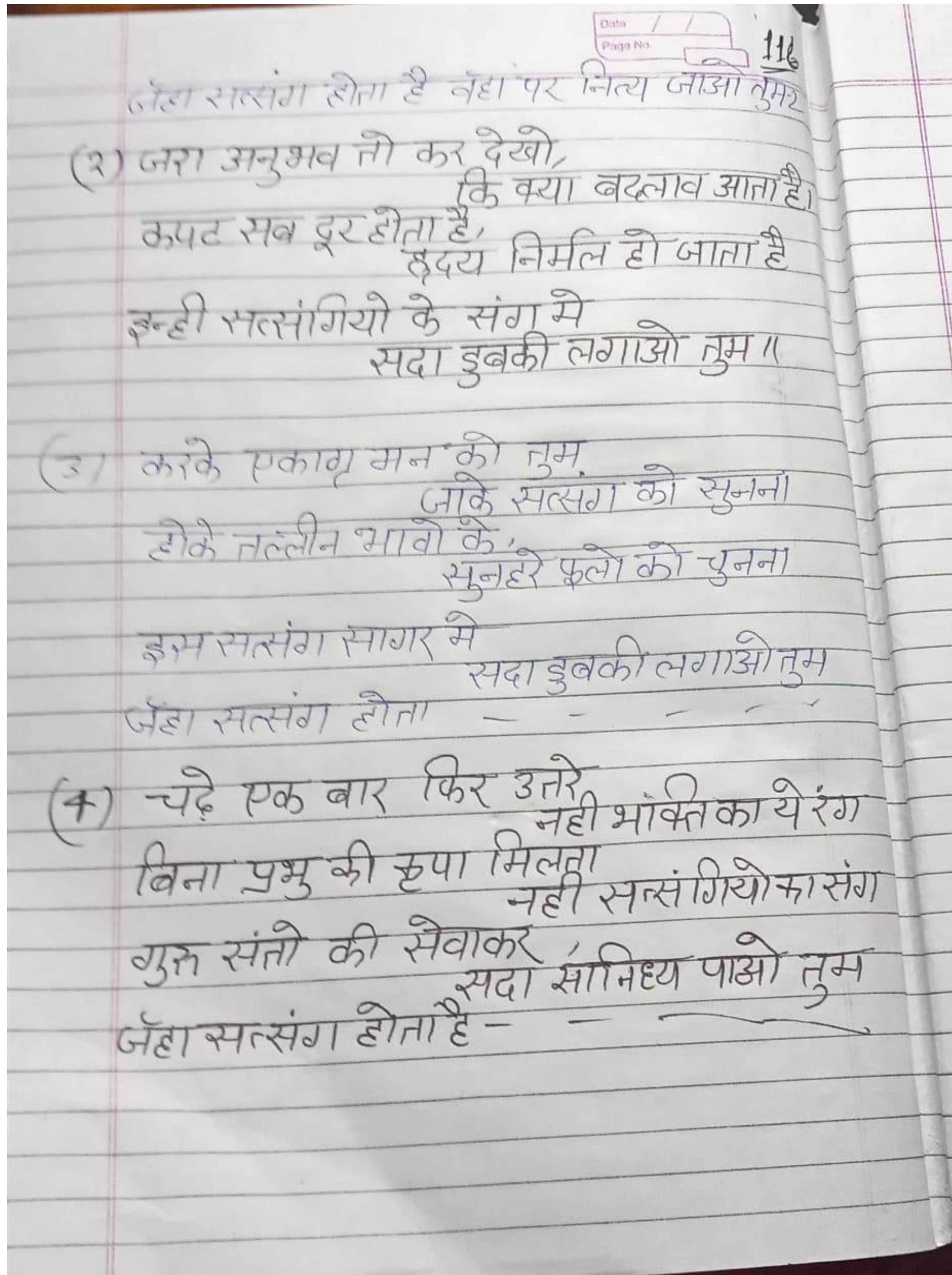
चौ० अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहि नहि संता॥

अर्थ- अब मुझे विश्वास हो गया कि श्री राघव की कृपा मुझ (विभीषण) पर है, बिना राघव की कृपा के संत नही मिलते है।
तो बन्धुओ जब भगवान की कृपा से आपके जीवन मे कोई साधु, महापुरुष, गुरुजन चलकर आए तो हमे व्यर्थ की बाते न करके सत्संग करना चाहिए, एवं सत्संग के माध्यम से गोविन्द की प्राप्ति करनी चाहिए।

:: भजन ::

जँहा सत्संग होता है, वँहा पर नित्य जाओ तुम
हमे फुरसत नही कहकर, ये मौका मत गंवाओ तुम

(1) अरे सत्संग करने की ना कोई उम्र होती है
अमर ये दीप है इसकी कभी बुझती ना ज्योति है
इसी ज्योति से जीवन की सदा ज्योति जलाओ तुम।


116
जँहा सत्संग होता है वहा पर नित्य जाओ तुम॥
(२) जरा अनुभव तो कर देखो,
कि क्या बदलाव आता है।
कपट सब दूर होता है,
हृदय निर्मल हो जाता है
इन्ही सत्संगियो के संग मे
सदा डुबकी लगाओ तुम॥
(3) करके एकाग्र मन को तुम,
जाके सत्संग को सुनना
होके तल्लीन भावो के,
सुनहरे फूलो को चुनना
इस सत्संग सागर मे
सदा डुबकी लगाओ तुम
जँहा सत्संग होता - - - -
(4) चढ़े एक बार फिर उतरे
नही भक्ति का ये रंग
बिना प्रभु की कृपा मिलता
नही सत्संगियो का संग
गुरु संतो की सेवाकर,
सदा सानिध्य पाओ तुम
जँहा सत्संग होता है - - -

116 117

⇒ माता देवहूति कहती है ये मन बड़ा चंचल है भजन, साधना मे लगता नही, ऐसा क्या करे कि ये मन भजन साधना मे लगने लगे।

⇒ श्री कपिल भगवान कहते माँ–

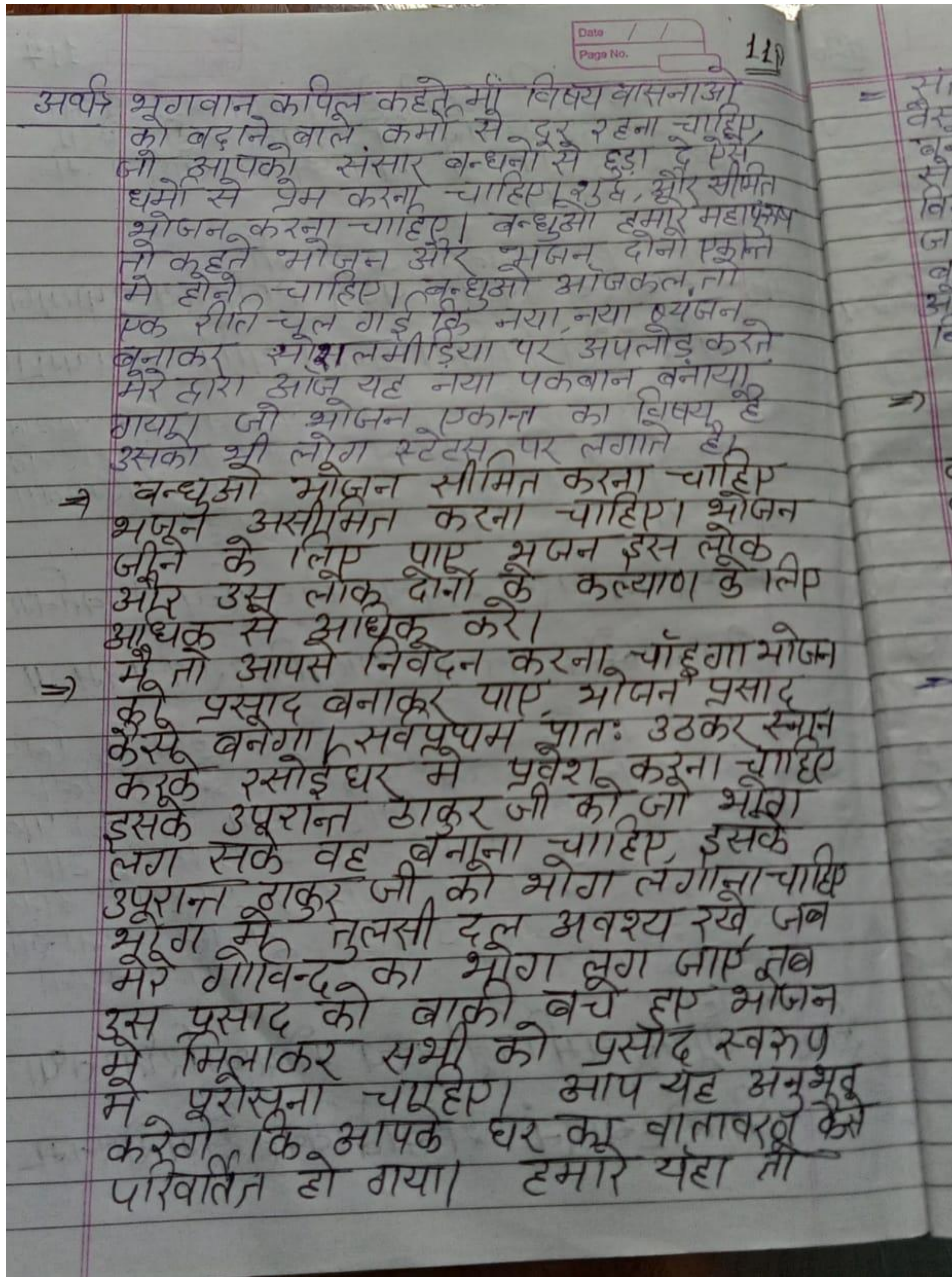
श्लोक– योगस्य लक्षणं वक्ष्ये सबीजस्य नृपात्मजा।
मनो येनैव विधिना प्रसन्नं याति सत्पथम्॥

अर्थ– अब मै आपको सबीज (ध्येयस्वरुप के आलम्बन से युक्त) योग का लक्षण बताता हूँ जिसके द्वारा चित्त शुद्ध एव प्रसन्न होकर परमात्मा के मार्ग मे प्रवृत्त हो जाता है।

श्लोक– स्वधर्माचरणं शक्त्या विधर्माच्च निवर्तनम्।
दैवाल्लब्धेन सन्तोष आत्मविच्चरणार्चनम्॥

अर्थ– परमात्मा के मार्ग मे प्रवृत्त होने के लिए एव अपने मन को एकाग्र करने के लिए सर्वप्रथम हमे शास्त्रविहित धर्म का का पालन करना चाहिए तथा, तथा शास्त्रविरुद्ध आचरण का परित्याग करना चाहिए, प्रारब्ध के अनुसार जो कुछ मिल जाए उसी मे सन्तुष्ट रहना चाहिए आत्मज्ञानियो के चरणो की पूजा करनी चाहिए।

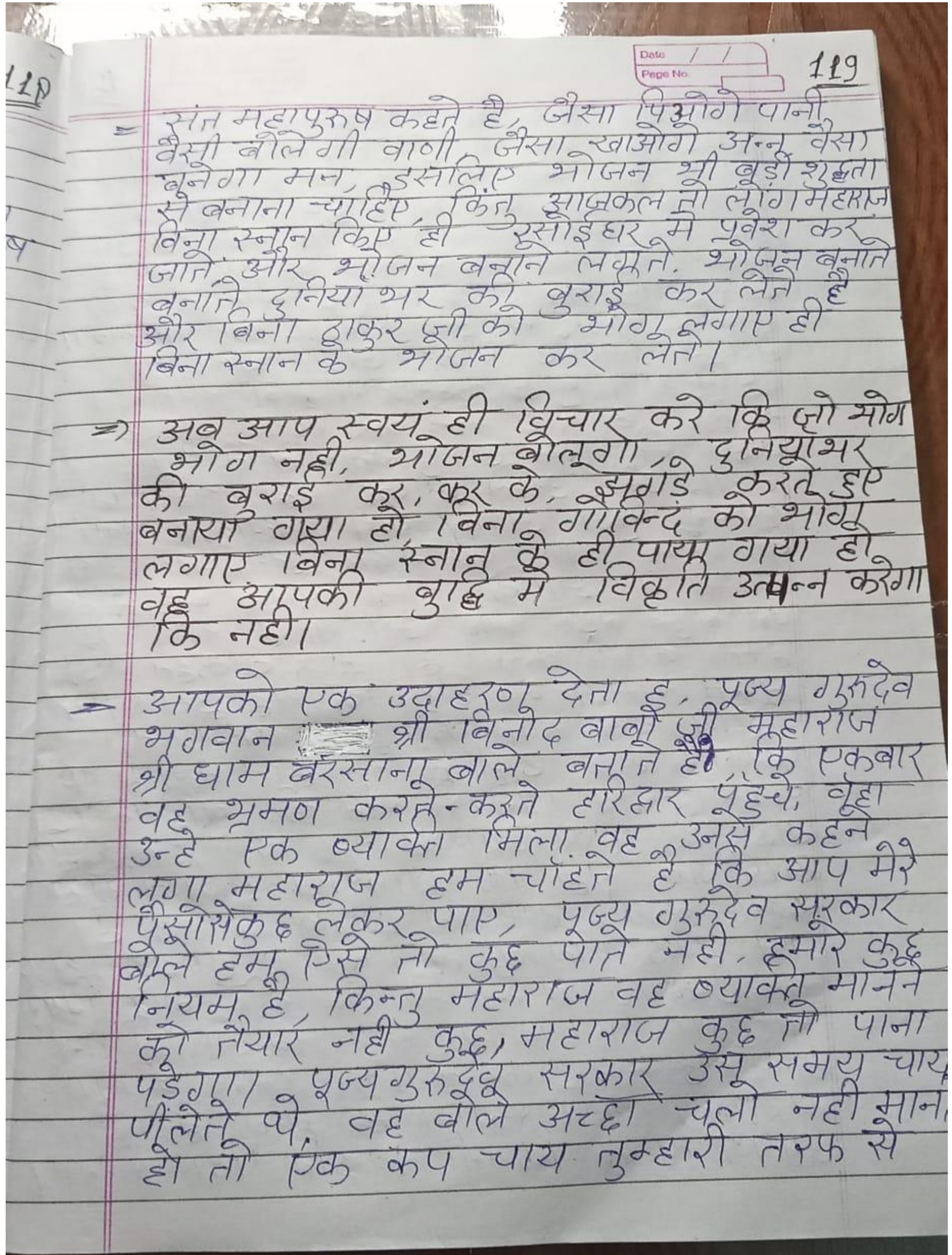
श्लोक– ग्राम्यधर्मनिवृत्तिश्च मोक्षधर्मरतिस्तथा।
मितमेध्यादनं शश्वद्विविक्त क्षेमसेवनम्॥



अर्थात भगवान कपिल कहते है विषय वासनाओ को बढ़ाने वाले कर्मों से दूर रहना चाहिए, जो आपको संसार बन्धनों से छुड़ा दे ऐसे धर्मों से प्रेम करना चाहिए। शुद्ध, और सीमित भोजन करना चाहिए। बन्धुओ हमारे महापुरुष तो कहते भोजन और भजन दोनो एकान्त मे होने चाहिए। बन्धुओ आजकल तो एक रीति चल गई कि नया नया व्यंजन बनाकर सोशलमीड़िया पर अपलोड़ करते मेरे द्वारा आज यह नया पकवान बनाया गया। जो भोजन एकान्त का विषय है उसको भी लोग स्टेटस पर लगाते है।

→ बन्धुओ भोजन सीमित करना चाहिए भजन असीमित करना चाहिए। भोजन जीने के लिए पाए भजन इस लोक और उस लोक दोनो के कल्याण के लिए अधिक से अधिक करे।

⇒ मै तो आपसे निवेदन करना चाहूगा भोजन को प्रसाद बनाकर पाए, भोजन प्रसाद कैसे बनेगा, सर्वप्रथम प्रातः उठकर स्नान करके रसोई घर मे प्रवेश करना चाहिए इसके उपरान्त ठाकुर जी को जो भोग लग सके वह बनाना चाहिए, इसके उपरान्त ठाकुर जी को भोग लगाना चाहिए भोग मे तुलसी दल अवश्य रखे जब मेरे गोविन्द का भोग लग जाए तब उस प्रसाद को बाकी बचे हुए भोजन मे मिलाकर सभी को प्रसाद स्वरुप मे परोसना चाहिए। आप यह अनुभव करेगे कि आपके घर का वातावरण कैसे परिवर्तित हो गया। हमारे यहा तो



119

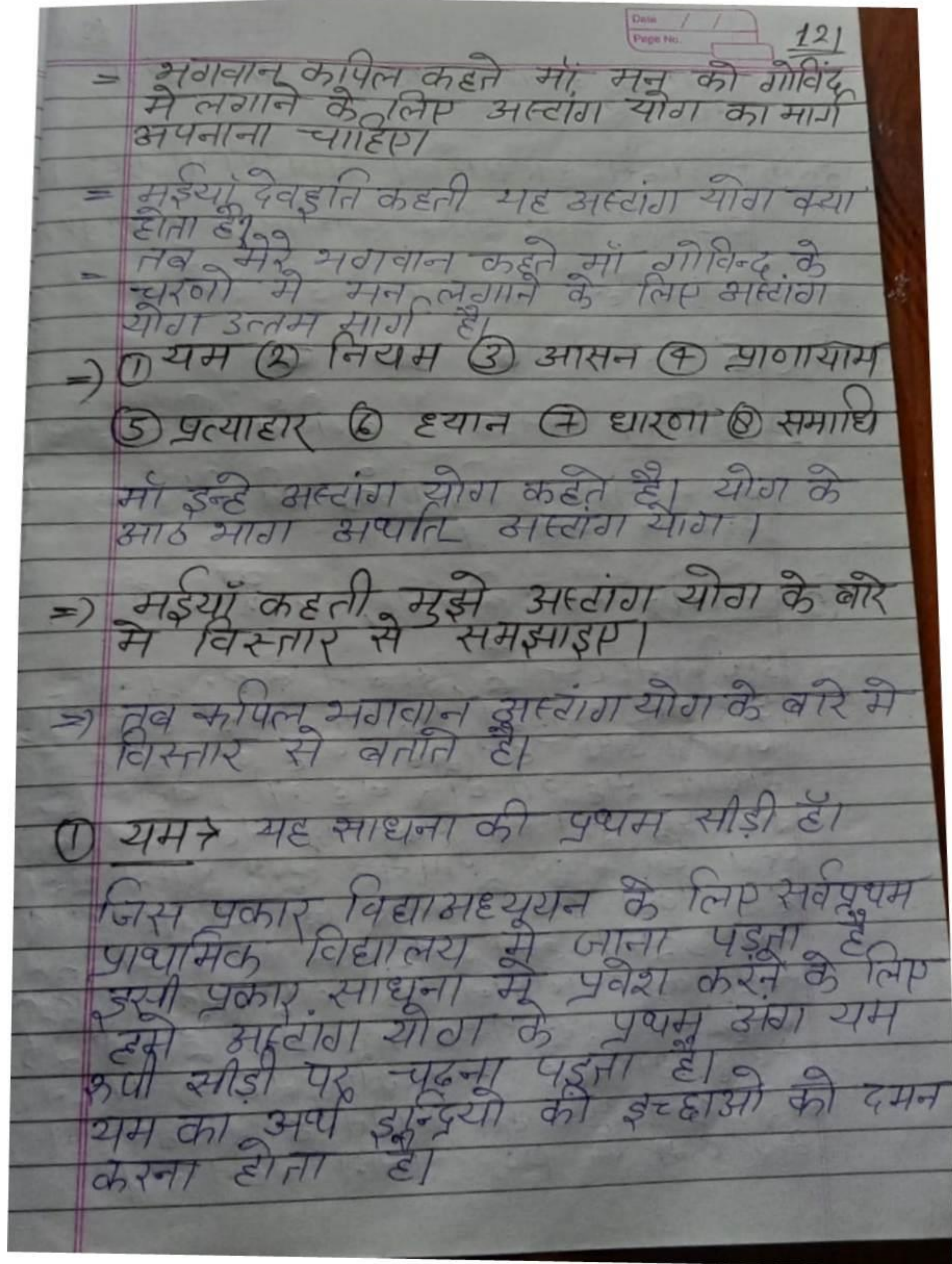
संत महापुरुष कहते है, जैसा पिओगे पानी वैसी बोलेगी वाणी, जैसा खाओगे अन्न, वैसा बनेगा मन, इसलिए भोजन भी बड़ी शुद्धता से बनाना चाहिए, किंतु आजकल तो लोग महाराज बिना स्नान किए ही रसोईघर मे प्रवेश कर जाते और भोजन बनाने लगते, भोजन बनाते बनाते दुनिया भर की बुराई कर लेते है और बिना ठाकुर जी को भोग लगाए ही बिना स्नान के भोजन कर लेते।

अब आप स्वयं ही विचार करे कि जो भोग भोग नही, भोजन बोलूगा, दुनियाभर की बुराई कर, कर के, झगड़े करते हुए बनाया गया हो, बिना गोविन्द को भोग लगाए बिना स्नान के ही पाया गया हो वह आपकी बुद्धि मे विकृति उत्पन्न करेगा कि नही।

आपको एक उदाहरण देता हू, पूज्य गुरुदेव भगवान श्री बिनोद बाबू जी महाराज श्री धाम बरसाना वाले बताते है कि एकबार वह भ्रमण करते-करते हरिद्वार पहुँचे, वहा उन्हे एक व्यक्ति मिला. वह उनसे कहने लगा महाराज हम चाहते है कि आप मेरे पैसो से कुछ लेकर पाए, पूज्य गुरुदेव सरकार बोले हम पैसे तो कुछ पाते नही. हमारे कुछ नियम है, किन्तु महाराज वह व्यक्ति मानने को तैयार नही कुछ, महाराज कुछ तो पाना पड़ेगा। पूज्य गुरुदेव सरकार उस समय चाय पी लेते थे, वह बोले अच्छा चलो नही मानते हो तो एक कप चाय तुम्हारी तरफ से

Date / /
Page No. 120

पी लेते हैं। उस ब्यक्ति ने दुकानदार को दस रुपए दिए, दुकानदार ने एक कप चाय गुरुदेव को दे दी, चाय पीने के बाद गुरुदेव कहते पता नहीं बुद्धि को क्या हुआ, पास में खड़ा एक ब्यक्ति सिगरेट पी रहा था, उसे देखकर मैं भी दुकान वाले के पास गया और उससे कहा भईया एक सिगरेट दे दो सिगरेट लेकर मैं उस सिगरेट को पीने लगा जैसे ही सिगरेट पीकर आगे चला तो अपने आप बुद्धि कहने लगी, अरे राम राम ये कैसा अपराध मैंने कर दिया गुरुदेव कहते मैं तुरन्त उस दुकान वाले के पास गया और उससे जाकर पूछा, भईया जो ब्यक्ति मुझे अभी चाय पिलाकर गया वो कौन था, दुकानदार उत्तर देता जिस ब्यक्ति ने आपको चाय पिलाई वह शहर का बहुत बड़ा दबंग आदमी है, सभी से हफ्ता बसूली करता है। गुरुदेव कहते मुझे तुरन्त समझ आ गया कि यह उस ब्यक्ति द्वारा दस रुपए की चाय पीने का परिणाम है। अनीति के द्वारा कमाए हुए धन से चाय पीने से संत की बुद्धि बिगड़ गई और एक अपराध कर दिया, बन्धुओ आवश्यक नहीं कि अपराध स्वभाव से हो कभी-कभी अपराध प्रभाव से भी हो जाते हैं अनीति के द्वारा कमाए हुए दस रुपए का उपभोग करने से संत की बुद्धि बिगड़ गई तो जरा विचार करो कि जो भोजन आप लड़, झगड़ कर बनाकर बिना भोग लगाए, बिना स्नान के पाते हैं, वो आपके अन्दर कितनी विकृति पैदा करेगा।



121

- भगवान् कपिल कहते माँ मन को गोविंद मे लगाने के लिए अस्टांग योग का मार्ग अपनाना चाहिए।
- मईया देवहूति कहती यह अस्टांग योग क्या होता है?
- तब मेरे भगवान कहते माँ गोविन्द के चरणो मे मन लगाने के लिए अस्टांग योग उत्तम मार्ग है।

=) ① यम ② नियम ③ आसन ④ प्राणायाम ⑤ प्रत्याहार ⑥ ध्यान ⑦ धारणा ⑧ समाधि

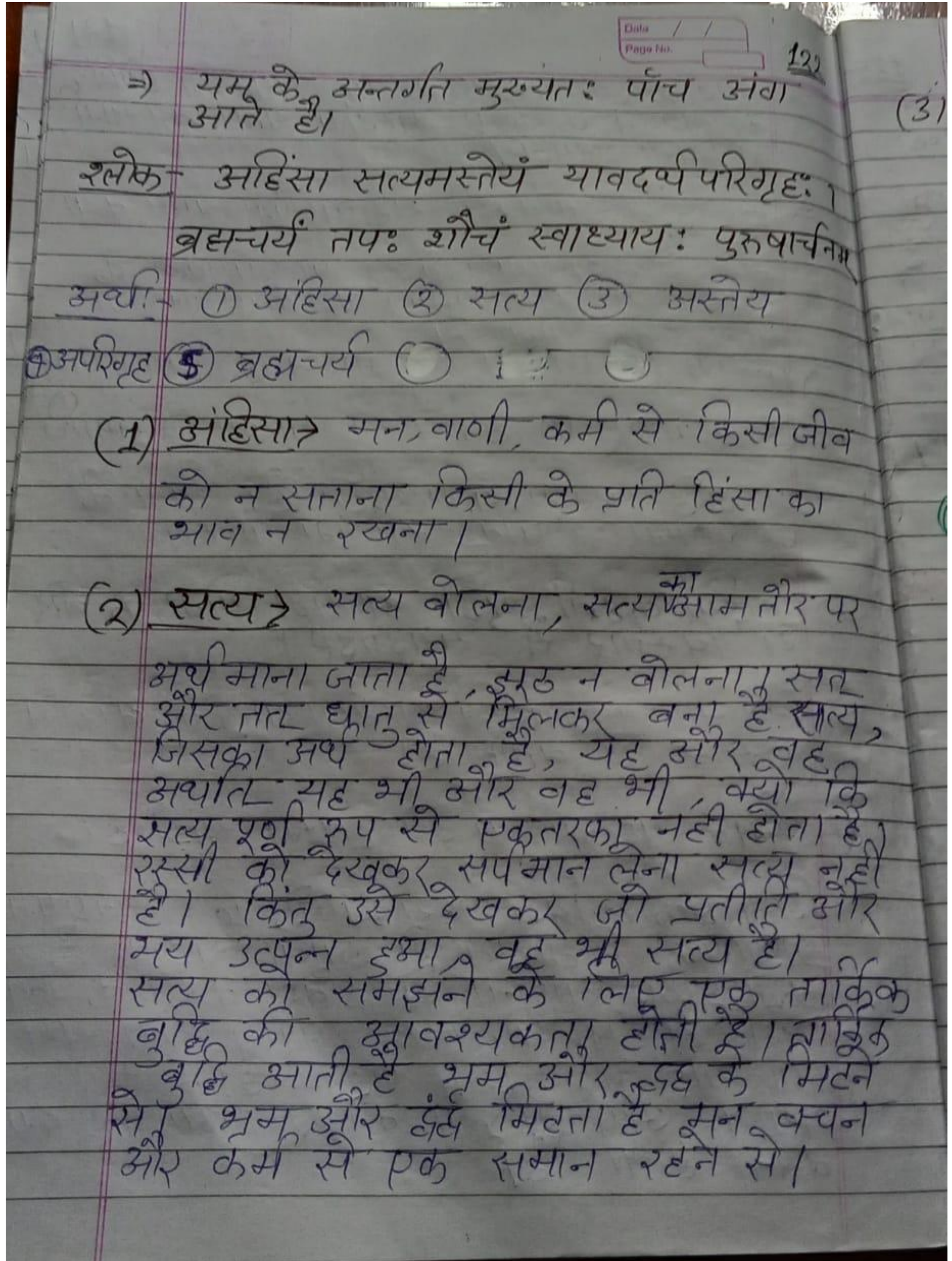
माँ इन्हे अस्टांग योग कहते है। योग के आठ भाग अर्थात् अस्टांग योग।

=) मईयाँ कहती मुझे अस्टांग योग के बारे मे विस्तार से समझाइए।

=) तब कपिल भगवान अस्टांग योग के बारे मे विस्तार से बताते है।

① यम → यह साधना की प्रथम सीढ़ी है।

जिस प्रकार विद्याअध्ययन के लिए सर्वप्रथम प्राथमिक विद्यालय मे जाना पड़ता है इसी प्रकार साधना मे प्रवेश करने के लिए हमे अस्टांग योग के प्रथम अंग यम रूपी सीढ़ी पर चढ़ना पड़ता है। यम का अर्थ इन्द्रियो की इच्छाओ को दमन करना होता है।



122

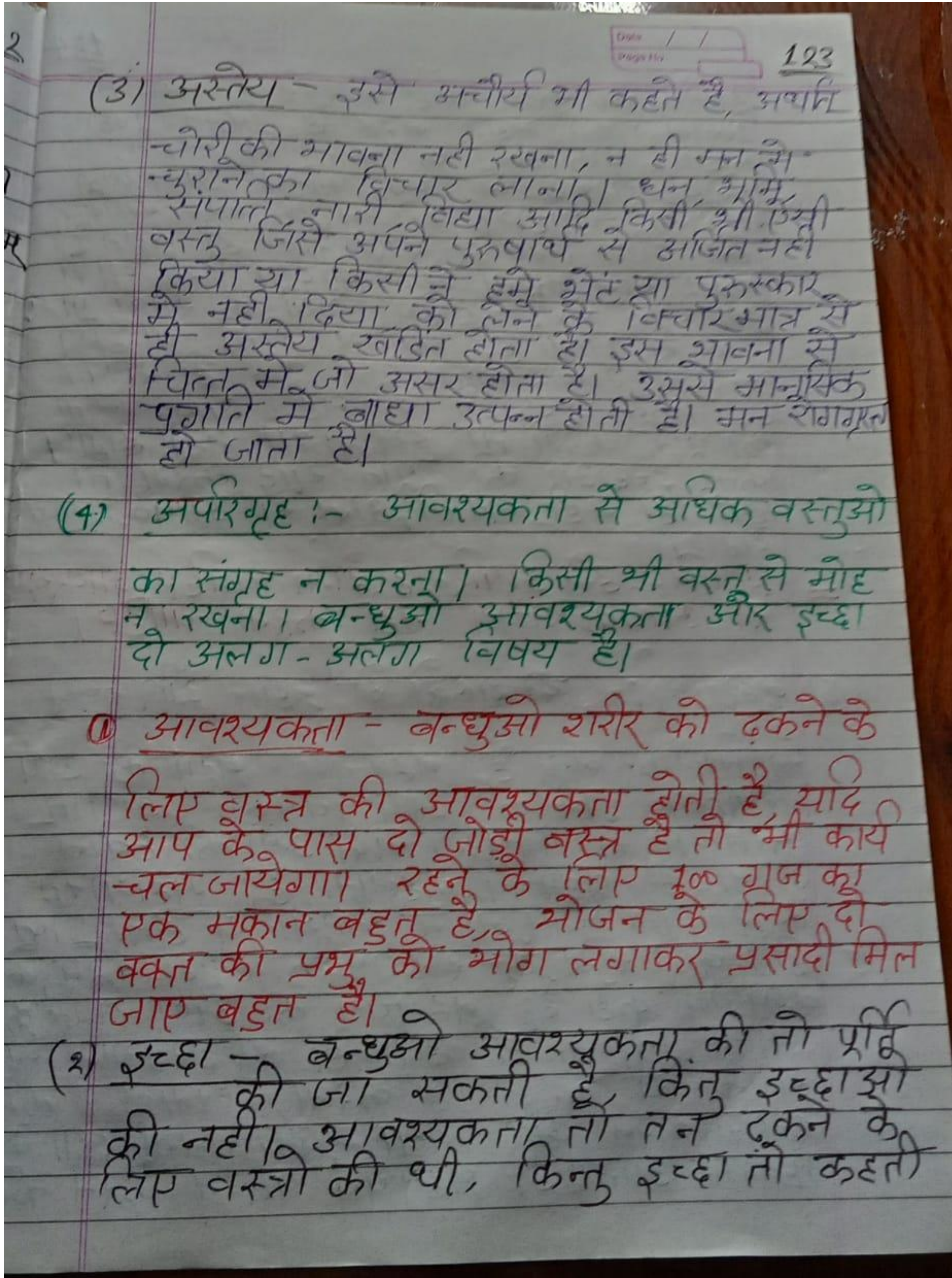
⇒ यम के अन्तर्गत मुख्यतः पाँच अंग आते हैं।

श्लोक- अहिंसा सत्यमस्तेयं यावदर्थपरिग्रहः।
ब्रह्मचर्यं तपः शौचं स्वाध्यायः पुरुषार्चनम्

अर्थ:- (1) अहिंसा (2) सत्य (3) अस्तेय (4) अपरिग्रह (5) ब्रह्मचर्य

(1) अहिंसा⇒ मन, वाणी, कर्म से किसी जीव को न सताना किसी के प्रति हिंसा का भाव न रखना।

(2) सत्य⇒ सत्य बोलना, सत्य का आम तौर पर अर्थ माना जाता है, झूठ न बोलना। सत् और तत् धातु से मिलकर बना है सत्य, जिसका अर्थ होता है, यह और वह अर्थात् यह भी और वह भी, क्यों कि सत्य पूर्ण रूप से एकतरफा नहीं होता है। रस्सी को देखकर सर्प मान लेना सत्य नहीं है। किंतु उसे देखकर जो प्रतीति और भय उत्पन्न हुआ, वह भी सत्य है। सत्य को समझने के लिए एक तार्किक बुद्धि की आवश्यकता होती है। तार्किक बुद्धि आती है भ्रम और द्वंद्व के मिटने से। भ्रम और द्वंद्व मिटता है मन, वचन और कर्म से एक समान रहने से।



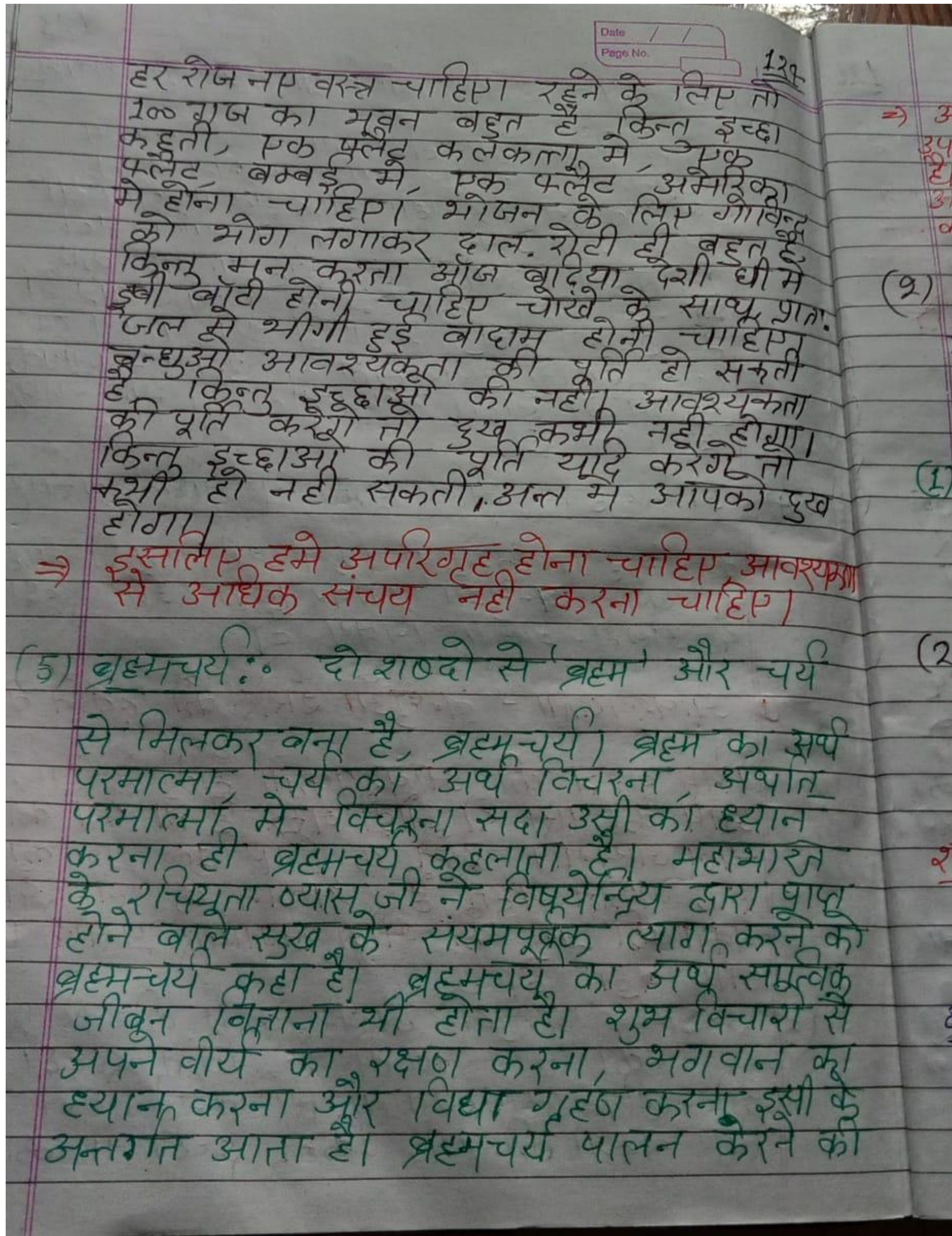
123

(3) अस्तेय – इसे अचौर्य भी कहते है, अर्थात चोरी की भावना नही रखना, न ही मन मे चुराने का विचार लाना। धन भूमि, संपत्ति, नारी, विद्या आदि किसी भी ऐसी वस्तु जिसे अपने पुरुषार्थ से अर्जित नही किया या किसी ने हमे भेंट या पुरस्कार मे नही दिया को लेने के विचार मात्र से ही अस्तेय खंडित होता है। इस भावना से चित्त मे जो असर होता है। उससे मानसिक प्रगति मे बाधा उत्पन्न होती है। मन रोगग्रस्त हो जाता है।

(4) अपरिग्रह :- आवश्यकता से अधिक वस्तुओ का संग्रह न करना। किसी भी वस्तु से मोह न रखना। बन्धुओ आवश्यकता और इच्छा दो अलग-अलग विषय है।

(1) आवश्यकता – बन्धुओ शरीर को ढकने के लिए वस्त्र की आवश्यकता होती है, यदि आप के पास दो जोड़ी वस्त्र है तो भी कार्य चल जायेगा। रहने के लिए 100 गज का एक मकान बहुत है, भोजन के लिए दो वक्त की प्रभु को भोग लगाकर प्रसादी मिल जाए बहुत है।

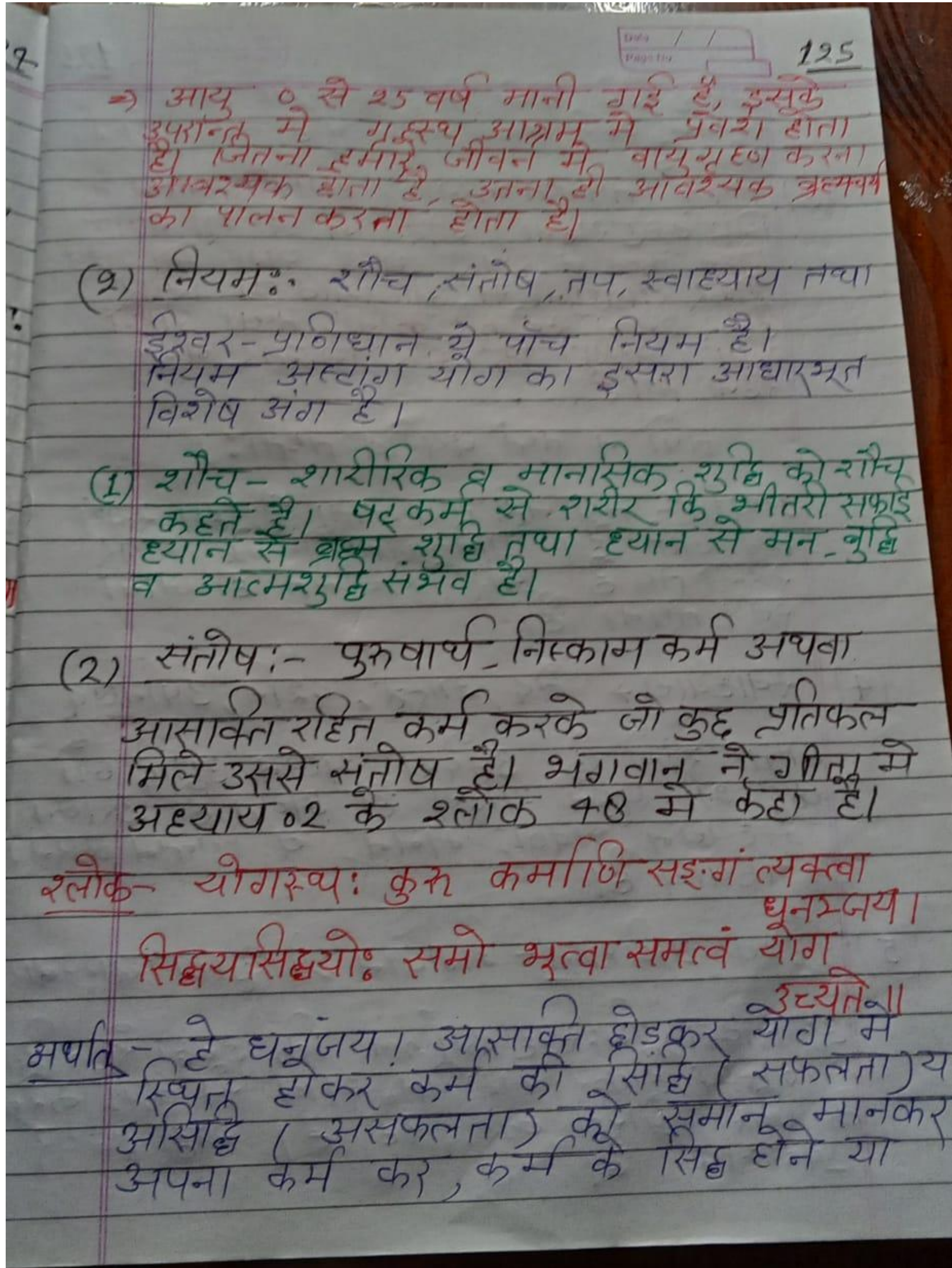
(2) इच्छा – बन्धुओ आवश्यकता की तो पूर्ति की जा सकती है, किंतु इच्छाओ की नही। आवश्यकता तो तन ढकने के लिए वस्त्रो की थी, किन्तु इच्छा तो कहती



हर रोज नए वस्त्र चाहिए। रहने के लिए तो 100 गज का भवन बहुत है किन्तु इच्छा कहती, एक फ्लैट कलकत्ता मे एक फ्लैट बम्बई मे, एक फ्लैट अमेरिका मे होना चाहिए। भोजन के लिए गोविन्द को भोग लगाकर दाल-रोटी ही बहुत है किन्तु मन करता आज बूंदिया देशी घी मे डूबी बाटी होनी चाहिए चोखे के साथ प्रात: जल से भीगी हुई बादाम होनी चाहिए। बन्धुओ आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है किन्तु इच्छाओ की नही। आवश्यकता की पूर्ति करेगे तो दुख कभी नही होगा। किन्तु इच्छाओ की पूर्ति यदि करेगे तो सुखी हो नही सकती, अन्त मे आपको दुख होगा।

⇒ इसलिए हमे अपरिग्रह होना चाहिए आवश्यकता से अधिक संचय नही करना चाहिए।

(5) ब्रह्मचर्य :- दो शब्दो से 'ब्रह्म' और चर्य से मिलकर बना है, ब्रह्मचर्य। ब्रह्म का अर्थ परमात्मा, चर्य का अर्थ विचरना, अर्थात परमात्मा मे विचरना सदा उसी का ध्यान करना ही ब्रह्मचर्य कहलाता है। महाभारत के रचियता व्यास जी ने विषयेन्द्रिय द्वारा प्राप्त होने वाले सुख के संयमपूर्वक त्याग करने को ब्रह्मचर्य कहा है। ब्रह्मचर्य का अर्थ सात्विक जीवन बिताना भी होता है। शुभ विचारो से अपने वीर्य का रक्षण करना, भगवान का ध्यान करना और विद्या ग्रहण करना इसी के अन्तर्गत आता है। ब्रह्मचर्य पालन करने की



125

→ आयु 0 से 25 वर्ष मानी गई है, इसके उपरान्त मे गृहस्थ आश्रम मे प्रवेश होता है। जितना हमारे जीवन मे वायु ग्रहण करना आवश्यक होता है, उतना ही आवश्यक ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है।

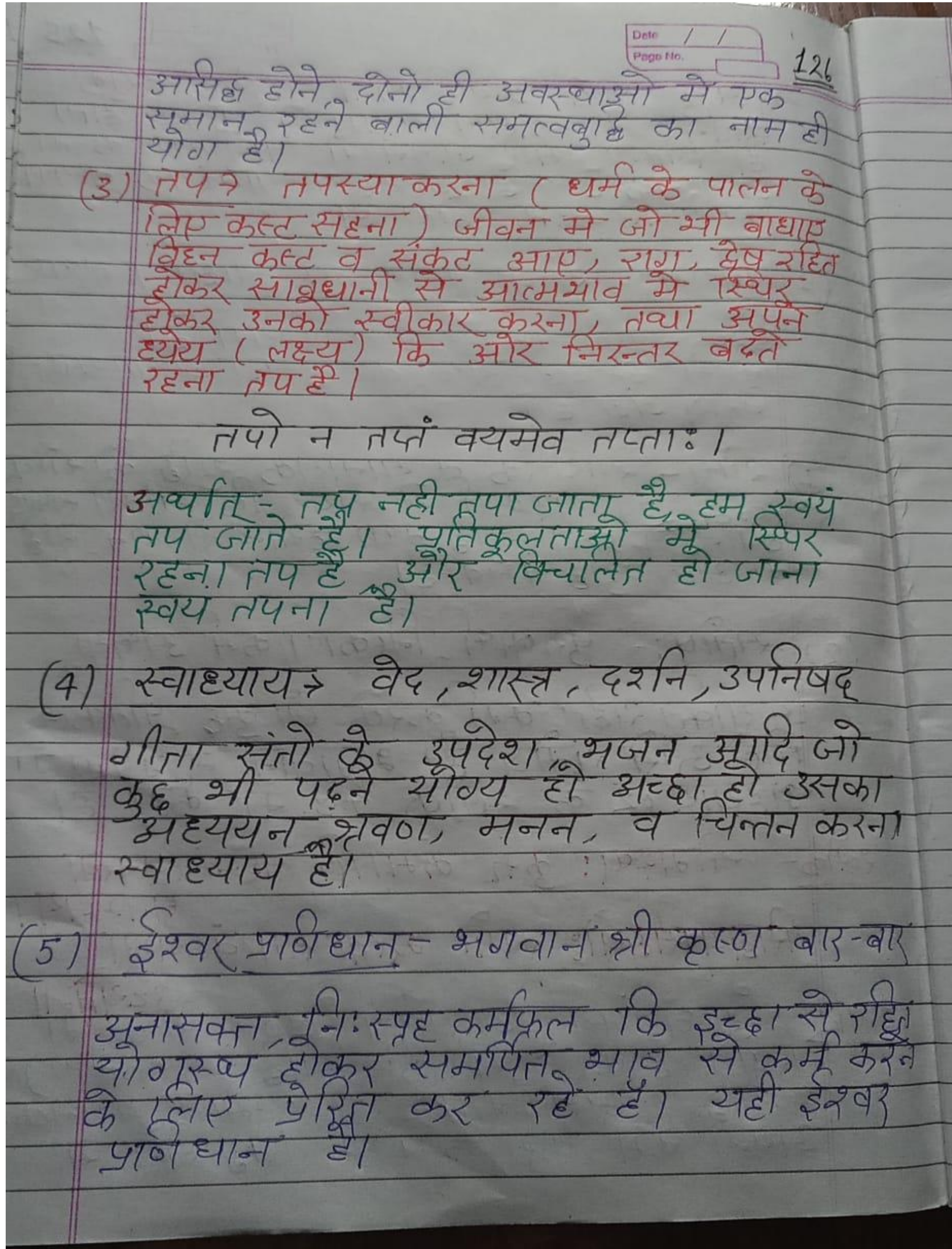
(2) नियमः शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर-प्रणिधान ये पांच नियम है। नियम अष्टांग योग का दूसरा आधारभूत विशेष अंग है।

(1) शौच- शारीरिक व मानसिक शुद्धि को शौच कहते है। षट्कर्म से शरीर कि भीतरी सफाई ध्यान से श्वास शुद्धि तथा ध्यान से मन-बुद्धि व आत्मशुद्धि संभव है।

(2) संतोष:- पुरुषार्थ-निस्काम कर्म अथवा आसक्ति रहित कर्म करके जो कुछ प्रतिफल मिले उससे संतोष है। भगवान ने गीता मे अध्याय 02 के श्लोक 48 मे कहा है।

श्लोक- योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

अर्थात- हे धनंजय! आसक्ति छोड़कर योग मे स्थित होकर कर्म की सिद्धि (सफलता) या असिद्धि (असफलता) को समान मानकर अपना कर्म कर, कर्म के सिद्ध होने या



126

आसिद्ध होने, दोनो ही अवस्थाओं मे एक समान रहने वाली समत्वबुद्धि का नाम ही योग है।

(3) तप → तपस्या करना (धर्म के पालन के लिए कष्ट सहना) जीवन मे जो भी बाधाएं विघ्न कष्ट व संकट आए, राग, द्वेष रहित होकर सावधानी से आत्मभाव मे स्थिर होकर उनको स्वीकार करना, तथा अपने ध्येय (लक्ष्य) कि ओर निरन्तर बढ़ते रहना तप है।

तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।

अर्थात - तप नही तपा जाता है, हम स्वयं तप जाते हैं। प्रतिकूलताओं मे स्थिर रहना तप है और विचलित हो जाना स्वयं तपना है।

(4) स्वाध्याय → वेद, शास्त्र, दर्शन, उपनिषद

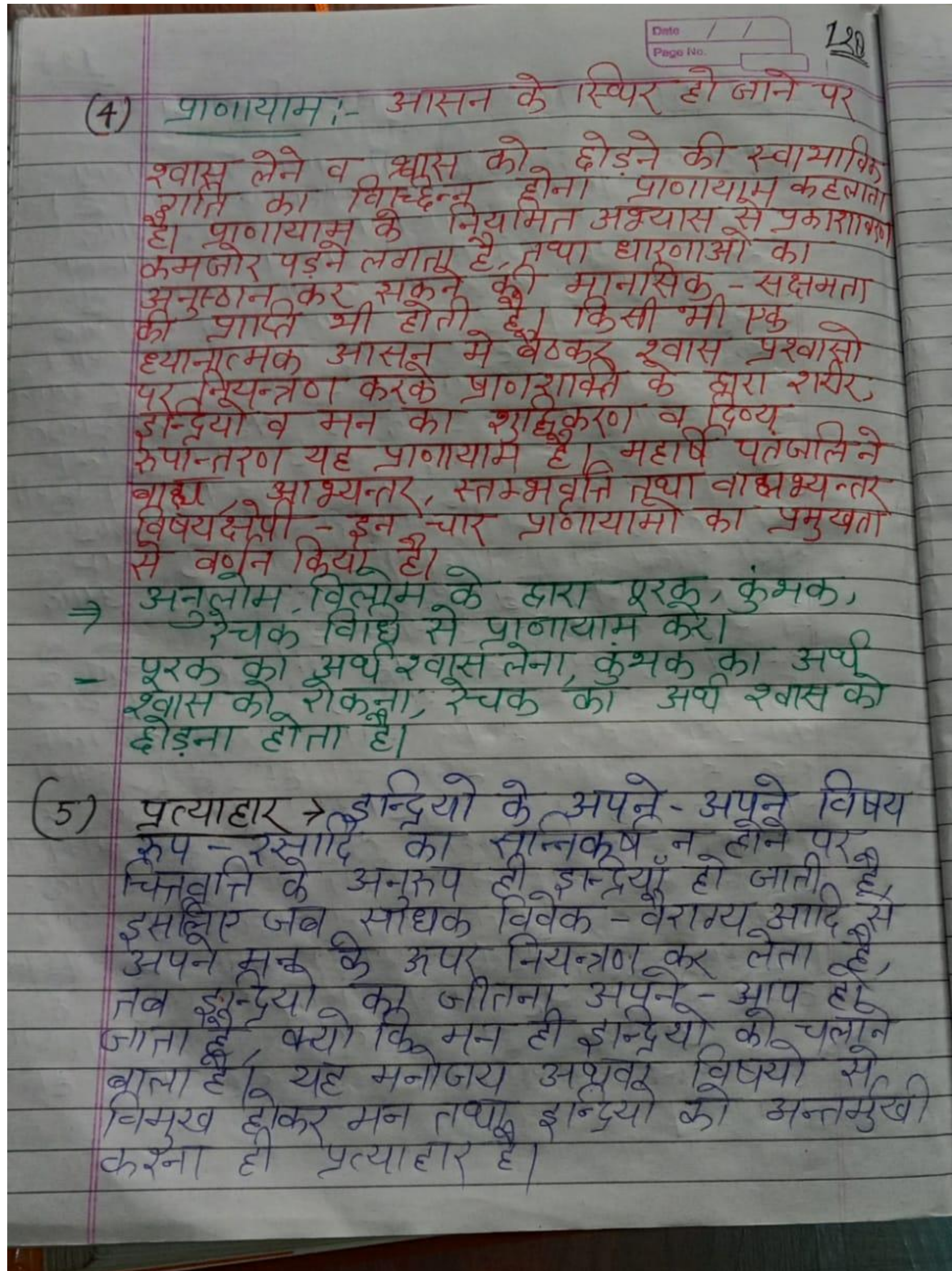
गीता संतो के उपदेश, भजन आदि जो कुछ भी पढ़ने योग्य हो अच्छा हो उसका अध्ययन, श्रवण, मनन, व चिन्तन करना स्वाध्याय है।

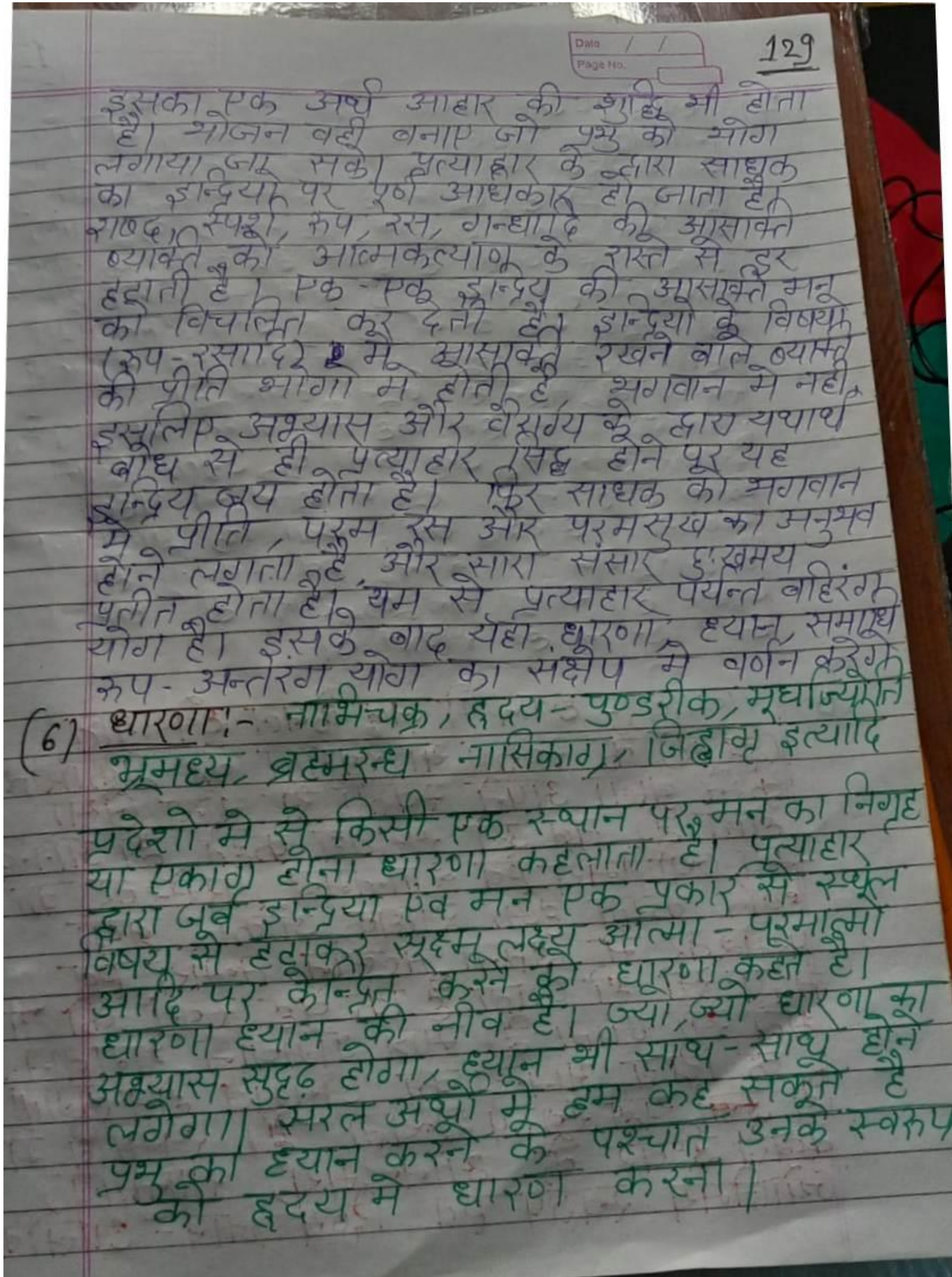
(5) ईश्वर प्रणिधान - भगवान श्री कृष्ण बार-बार

अनासक्त, निःस्पृह कर्मफल कि इच्छा से रहित योगस्थ होकर समर्पित भाव से कर्म करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। यही ईश्वर प्रणिधान है।

Date / /
Page No. 127

(3) आसन :- पद्मासन, भद्रासन, सिद्धासन या सुखासन आदि किसी भी आसन मे स्थिरता और सुखपूर्वक बैठना आसन कहलाता है। साधक को जप, उपासना, एवं ध्यान आदि करने के लिए किसी भी आसन मे स्थिरता और सुखपूर्वक बैठने का लम्बा अभ्यास भी करना चाहिए। जो इन आसनो मे नही बैठ सकते या रोगी है, उनके लिए महर्षि व्यास कहते है कि वे सोपाश्रय आसन, अर्थात अर्थात कुर्सी अथवा दीवार आदि का सहारा ले सकते है। जप एवं ध्यानादि-रूप उपासना के लिए आसन का अभ्यास अति आवश्यक है। किसी ध्यानात्मक आसन को करते समय मेरुदण्ड सदा सीधा होना चाहिए। उपासना के लिए एकान्त स्थान, शुद्ध वायु, मक्खी-मच्छर आदि से रहित वातावरण उपयुक्त है।
इसका एक अर्थ हम यह भी कह सकते है कि एक आसन पर अधिक समय तक बैठने का प्रयास करे, हमारे जप, साधना के लिए एक ही आसन होना चाहिए, हम प्रयास यह करे कि एक ही आसन पर बैठकर हम 12 वर्ष भजन, साधना करे यदि इस बीच मे आसन फट जाए तो उसमे कपड़ा लगाकर उसे सिल ले, किन्तु आसन बदले नही, यदि एक आसन पर बैठकर हम 12 वर्ष तक साधना करते है तो वह आसन सिद्ध हो जाता है इसके उपरान्त उस पर बैठकर जो भी जप अनुष्ठान किया जाता है, वह सिद्ध हो जाता है।

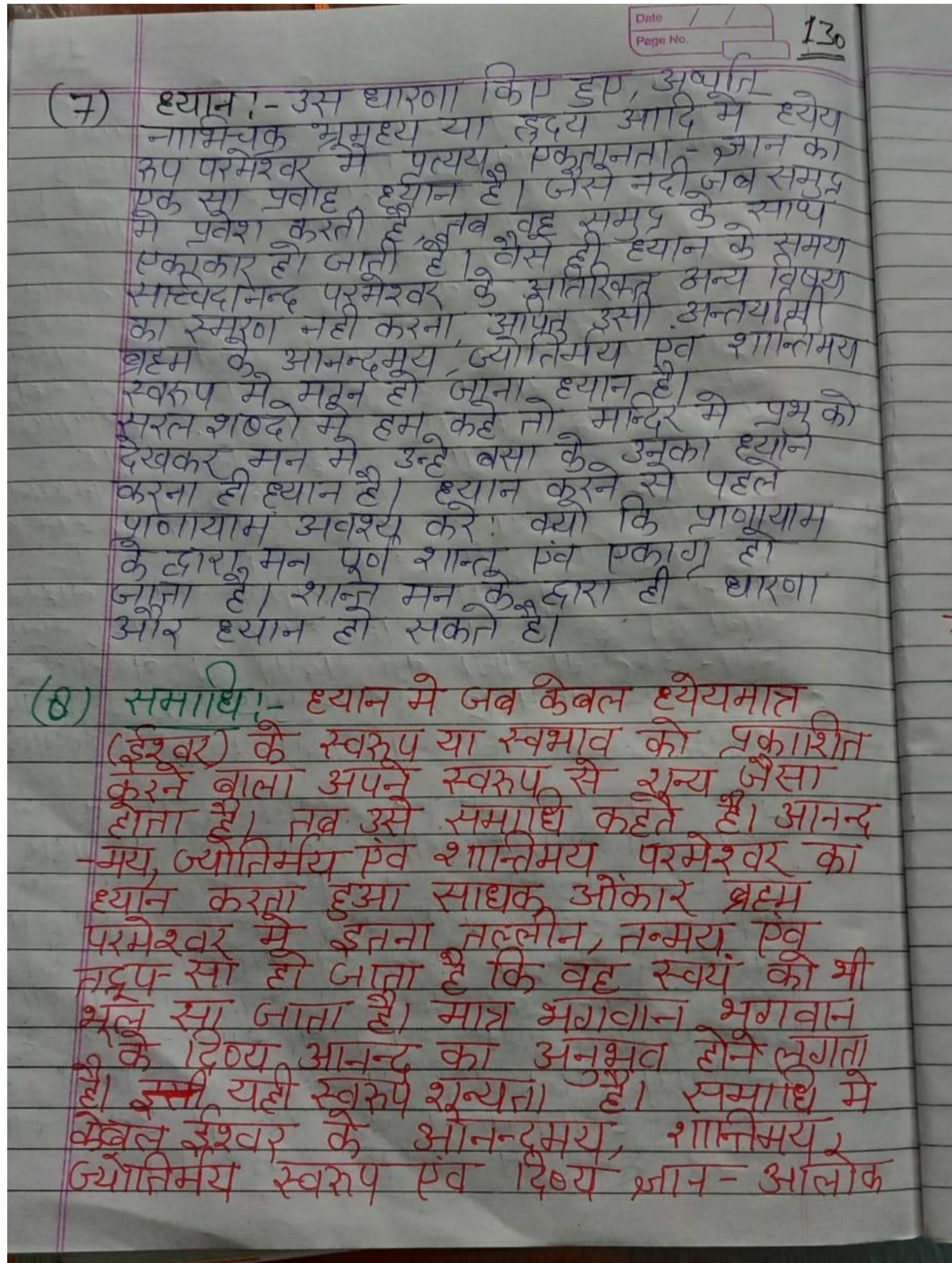

Date / /
Page No.
128
(4) प्राणायाम:- आसन के स्थिर हो जाने पर श्वास लेने व श्वास को छोड़ने की स्वाभाविक गति का विच्छेदन होना प्राणायाम कहलाता है। प्राणायाम के नियमित अभ्यास से प्रकाशावरण कमजोर पड़ने लगता है, तथा धारणाओं का अनुष्ठान कर सकने की मानसिक - सक्षमता की प्राप्ति भी होती है। किसी भी एक ध्यानात्मक आसन मे बैठकर श्वास प्रश्वासो पर नियन्त्रण करके प्राणशक्ति के द्वारा शरीर, इन्द्रियो व मन का शुद्धिकरण व दिव्य रुपान्तरण यह प्राणायाम है। महर्षि पतंजलि ने बाह्य, आभ्यन्तर, स्तम्भवृत्ति तथा बाह्याभ्यन्तर विषयक्षेपी - इन चार प्राणायामो का प्रमुखता से वर्णन किया है।
→ अनुलोम, विलोम के द्वारा पूरक, कुंभक, रेचक विधि से प्राणायाम करें।
- पूरक का अर्थ श्वास लेना, कुंभक का अर्थ श्वास को रोकना, रेचक का अर्थ श्वास को छोड़ना होता है।
(5) प्रत्याहार → इन्द्रियो के अपने - अपने विषय रूप - रसादि का सान्निकर्ष न होने पर चित्तवृत्ति के अनुरूप ही इन्द्रियाँ हो जाती है, इसलिए जब साधक विवेक - वैराग्य आदि से अपने मन के ऊपर नियन्त्रण कर लेता है, तब इन्द्रियो का जीतना अपने - आप हो जाता है, क्योकि मन ही इन्द्रियो को चलाने वाला है। यह मनोजय अथवा विषयो से विमुख होकर मन तथा इन्द्रियो को अन्तर्मुखी करना ही प्रत्याहार है।



129

इसका एक अर्थ आहार की शुद्धि भी होता है। भोजन वही बनाए जो प्रभु को भोग लगाया जा सके। प्रत्याहार के द्वारा साधक का इन्द्रियो पर पूर्ण अधिकार हो जाता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धादि की आसक्ति व्यक्ति को आत्मकल्याण के रास्ते से दूर हटाती है। एक-एक इन्द्रिय की आसक्ति मनु को विचलित कर देती है। इन्द्रियो के विषय (रूप-रसादि) मे आसक्ति रखने वाले व्यक्ति की प्रीति भोगो मे होती है, भगवान मे नही, इसलिए अभ्यास और वैराग्य के द्वारा यथार्थ बोध से ही प्रत्याहार सिद्ध होने पर यह इन्द्रिय जय होता है। फिर साधक को भगवान मे प्रीति, परम रस और परमसुख का अनुभव होने लगता है, और सारा संसार दुःखमय प्रतीत होता है। यम से प्रत्याहार पर्यन्त बहिरंग योग है। इसके बाद यहां धारणा, ध्यान, समाधि रूप- अन्तरंग योग का संक्षेप मे वर्णन करेंगे।

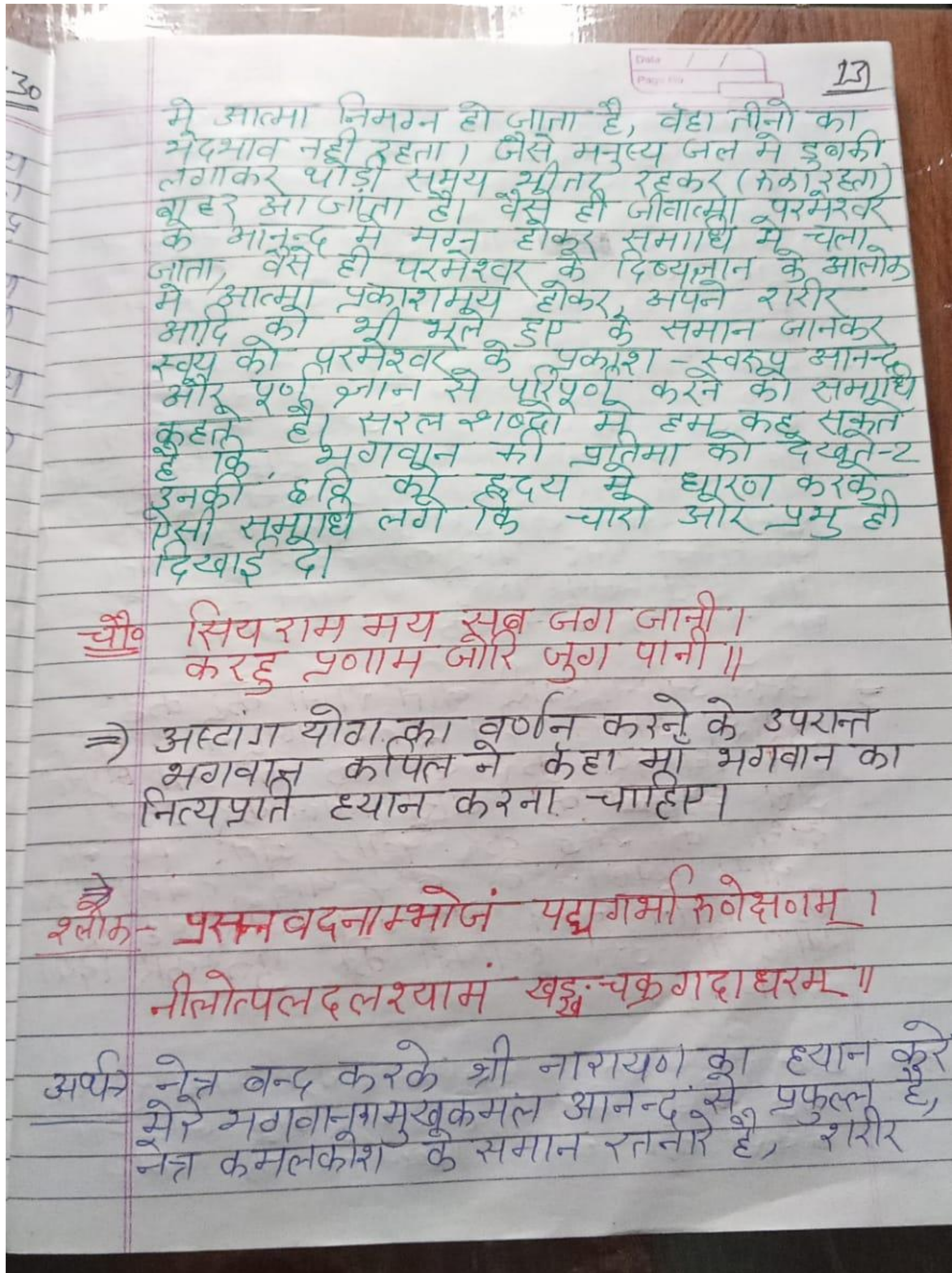
(6) धारणा:- नाभिचक्र, हृदय-पुण्डरीक, मूर्धज्योति, भ्रूमध्य, ब्रह्मरन्ध्र, नासिकाग्र, जिह्वाग्र इत्यादि प्रदेशो मे से किसी एक स्थान पर मन का निग्रह या एकाग्र होना धारणा कहलाता है। प्रत्याहार द्वारा जब इन्द्रिया एवं मन एक प्रकार से स्थूल विषय से हटाकर सूक्ष्म लक्ष्य आत्मा-परमात्मा आदि पर केन्द्रित करने को धारणा कहते है। धारणा ध्यान की नींव है। ज्यो-ज्यो धारणा का अभ्यास सुदृढ होगा, ध्यान भी साथ-साथ होने लगेगा। सरल अर्थो मे हम कह सकते है प्रभु का ध्यान करने के पश्चात उनके स्वरूप को हृदय मे धारण करना।



Date / /
Page No. 130

(7) ध्यान :- उस धारणा किए हुए, अनुभूति नाभिचक्र भ्रूमध्य या हृदय आदि मे ध्येय रूप परमेश्वर मे प्रत्यय, एकतानता - ज्ञान का एक सा प्रवाह ध्यान है। जैसे नदी जब समुद्र मे प्रवेश करती है, तब वह समुद्र के साथ एकाकार हो जाती है। वैसे ही ध्यान के समय सच्चिदानन्द परमेश्वर के अतिरिक्त अन्य विषय का स्मरण नही करना, अपितु उसी अन्तर्यामी ब्रह्म के आनन्दमय, ज्योतिर्मय एवं शान्तिमय स्वरूप मे मग्न हो जाना ध्यान है। सरल शब्दो मे हम कहे तो मन्दिर मे प्रभु को देखकर मन मे उन्हे बसा के उनका ध्यान करना ही ध्यान है। ध्यान करने से पहले प्राणायाम अवश्य करे। क्यो कि प्राणायाम के द्वारा मन पूर्ण शान्त एवं एकाग्र हो जाता है। शान्त मन के द्वारा ही धारणा और ध्यान हो सकते है।

(8) समाधि :- ध्यान मे जब केवल ध्येयमात्र (ईश्वर) के स्वरूप या स्वभाव को प्रकाशित करने वाला अपने स्वरूप से शून्य जैसा होता है, तब उसे समाधि कहते हैं। आनन्द-मय, ज्योतिर्मय एवं शान्तिमय परमेश्वर का ध्यान करता हुआ साधक ओंकार ब्रह्म परमेश्वर मे इतना तल्लीन, तन्मय एवं तद्रूप सा हो जाता है कि वह स्वयं को भी भूल सा जाता है। मात्र भगवान भगवान के दिव्य आनन्द का अनुभव होने लगता है। यही स्वरूप शून्यता है। समाधि मे केवल ईश्वर के आनन्दमय, शान्तिमय, ज्योतिर्मय स्वरूप एवं दिव्य ज्ञान - आलोक



131

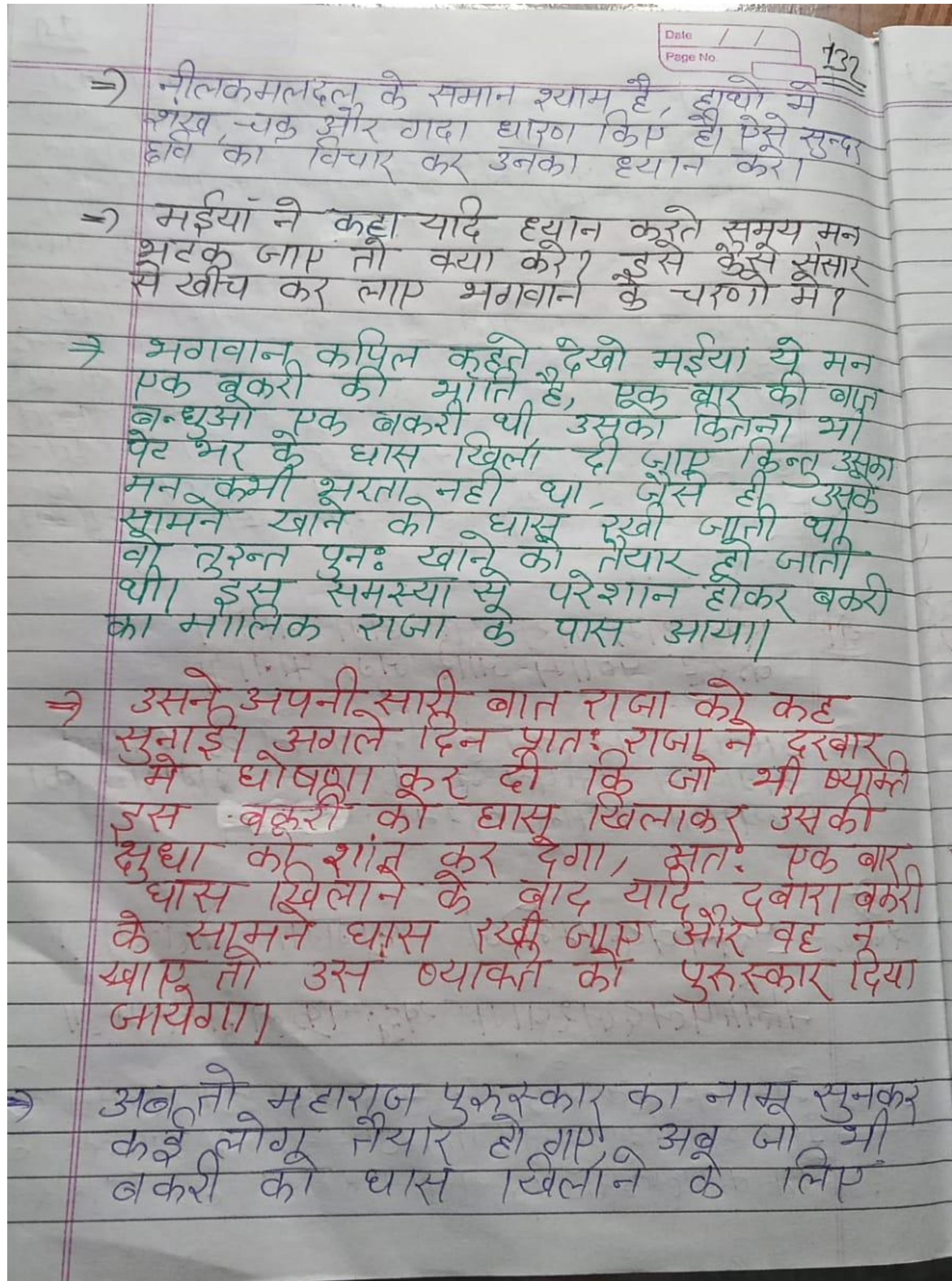
मे आत्मा निमग्न हो जाता है, वहा तीनो का भेदभाव नही रहता। जैसे मनुष्य जल मे डुबकी लगाकर थोड़ी समय भीतर रहकर (रुका रहता) बाहर आ जाता है। वैसे ही जीवात्मा परमेश्वर के आनन्द मे मग्न होकर समाधि मे चला जाता, वैसे ही परमेश्वर के दिव्यज्ञान के आलोक मे आत्मा प्रकाशमय होकर, अपने शरीर आदि को भी भूले हुए के समान जानकर स्वयं को परमेश्वर के प्रकाश - स्वरूप आनन्द और पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण करने को समाधि कहते है। सरल शब्दो मे हम कह सकते है कि, भगवान की प्रतिमा को देखते-२ उनकी छवि को हृदय मे धारण करके ऐसी समाधि लगे कि चारो ओर प्रभु ही दिखाई दे।

चौ० सियराम मय सब जग जानी।
करहु प्रणाम जोरि जुग पानी॥

⇒ अस्टांग योग का वर्णन करने के उपरान्त भगवान कपिल ने कहा माँ भगवान का नित्यप्राति ध्यान करना चाहिए।

श्लोक- प्रसन्नवदनाम्भोजं पद्मगर्भारुणेक्षणम्।
नीलोत्पलदलश्यामं शङ्खचक्रगदाधरम्॥

अर्थात् नेत्र बन्द करके श्री नारायण का ध्यान करे, मेरे भगवान का मुखकमल आनन्द से प्रफुल्ल है, नेत्र कमलकोश के समान रतनारे है, शरीर



Date / /
Page No. 132

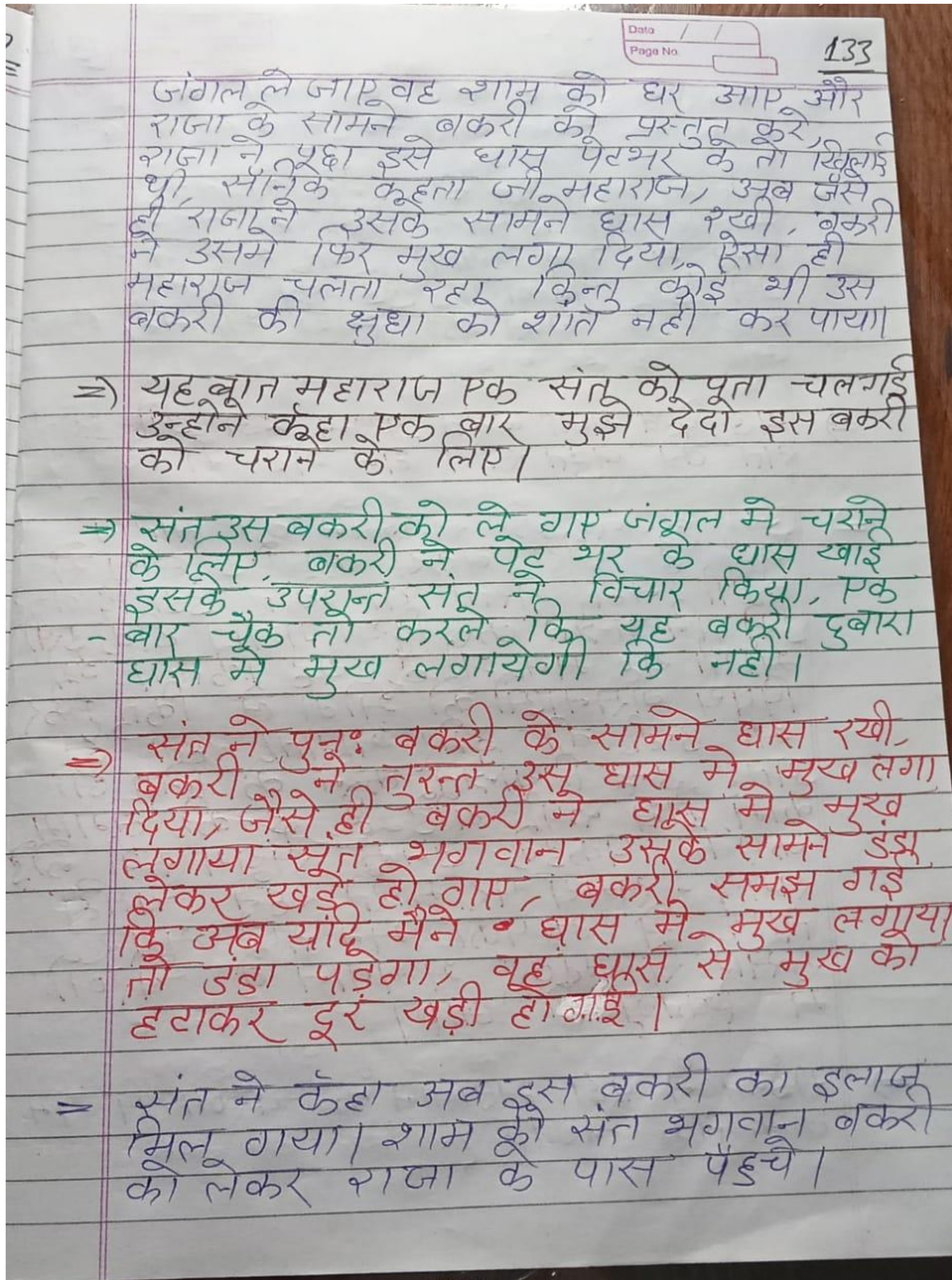
⇒ नीलकमलदल के समान श्याम है, हाथो मे शंख, चक्र और गदा धारण किए है। ऐसे सुन्दर छवि का विचार कर उनका ध्यान करो।

⇒ मईयां ने कहा यदि ध्यान करते समय मन भटक जाए तो क्या करें? इसे कैसे संसार से खींच कर लाए भगवान के चरणो मे?

⇒ भगवान कपिल कहते देखो मईया ये मन एक बकरी की भांति है, एक बार की बात बन्धुओ एक बकरी थी उसको कितना भी पेट भर के घास खिला दी जाए किन्तु उसका मन कभी भरता नही था, जैसे ही उसके सामने खाने को घास रखी जाती थी वो तुरन्त पुनः खाने को तैयार हो जाती थी। इस समस्या से परेशान होकर बकरी का मालिक राजा के पास आया।

⇒ उसने अपनी सारी बात राजा को कह सुनाई। अगले दिन प्रातः राजा ने दरबार मे घोषणा कर दी कि जो भी व्यक्ति इस बकरी को घास खिलाकर उसकी क्षुधा को शांत कर देगा, अतः एक बार घास खिलाने के बाद यदि दुबारा बकरी के सामने घास रखी जाए और वह न खाए तो उस व्यक्ति को पुरुस्कार दिया जायेगा।

⇒ अब तो महाराज पुरुस्कार का नाम सुनकर कई लोग तैयार हो गए, अब जो भी बकरी को घास खिलाने के लिए



133

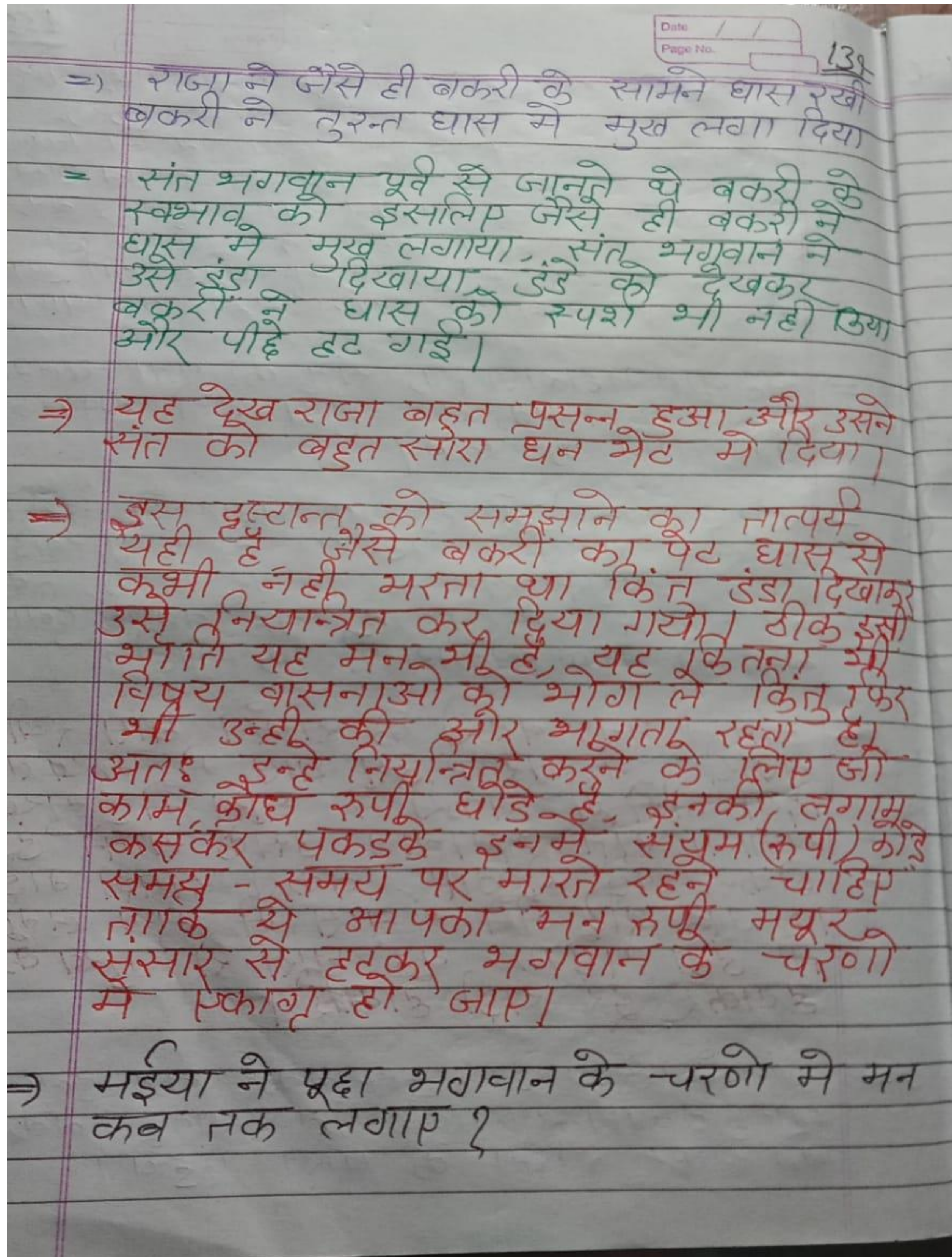
जंगल ले जाए वह शाम को घर आए और राजा के सामने बकरी को प्रस्तुत करे, राजा ने पूछा इसे घास पेटभर के तो खिलाई थी, सैनिक कहता जी महाराज, अब जैसे ही राजा ने उसके सामने घास रखी, बकरी ने उसमे फिर मुख लगा दिया, ऐसा ही महाराज चलता रहा किन्तु कोई भी उस बकरी की क्षुधा को शांत नही कर पाया।

=) यह बात महाराज एक संत को पता चल गई उन्होने कहा एक बार मुझे दे दो इस बकरी को चराने के लिए।

=) संत उस बकरी को ले गए जंगल मे चराने के लिए, बकरी ने पेट भर के घास खाई इसके उपरान्त संत ने विचार किया, एक बार चैक तो करले कि यह बकरी दुबारा घास मे मुख लगायेगी कि नही।

=) संत ने पुनः बकरी के सामने घास रखी, बकरी ने तुरन्त उस घास मे मुख लगा दिया, जैसे ही बकरी ने घास मे मुख लगाया संत भगवान उसके सामने डंडा लेकर खड़े हो गए, बकरी समझ गई कि अब यदि मैने घास मे मुख लगाया तो डंडा पड़ेगा, वह घास से मुख को हटाकर दूर खड़ी हो गई।

=) संत ने कहा अब इस बकरी का इलाज मिल गया। शाम को संत भगवान बकरी को लेकर राजा के पास पँहुचे।



⇒ राजा ने जैसे ही बकरी के सामने घास रखी बकरी ने तुरन्त घास मे मुख लगा दिया

= संत भगवान पूर्व से जानते थे बकरी के स्वभाव को इसलिए जैसे ही बकरी ने घास मे मुख लगाया, संत भगवान ने उसे डंडा दिखाया, डंडे को देखकर बकरी ने घास को स्पर्श भी नही किया और पीछे हट गई।

⇒ यह देख राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने संत को बहुत सारा धन भेंट मे दिया।

⇒ इस दृष्टान्त को समझाने का तात्पर्य यही है जैसे बकरी का पेट घास से कभी नही भरता था किंतु डंडा दिखाकर उसे नियन्त्रित कर दिया गया। ठीक इसी भाँति यह मन भी है, यह कितना भी विषय वासनाओ को भोग ले किंतु फिर भी उन्ही की ओर भागता रहता है। अतः इन्हे नियन्त्रित करने के लिए जो काम क्रोध रुपी घोडे है, इनकी लगाम कसकर पकडके इनमे संयम रुपी कोड़े समय - समय पर मारते रहने चाहिए ताकि ये आपका मन रुपी मयूर संसार से हटकर भगवान के चरणो मे एकाग्र हो जाए।

⇒ मईया ने पूछा भगवान के चरणो मे मन कब तक लगाए?

Date / /
Page No. 135

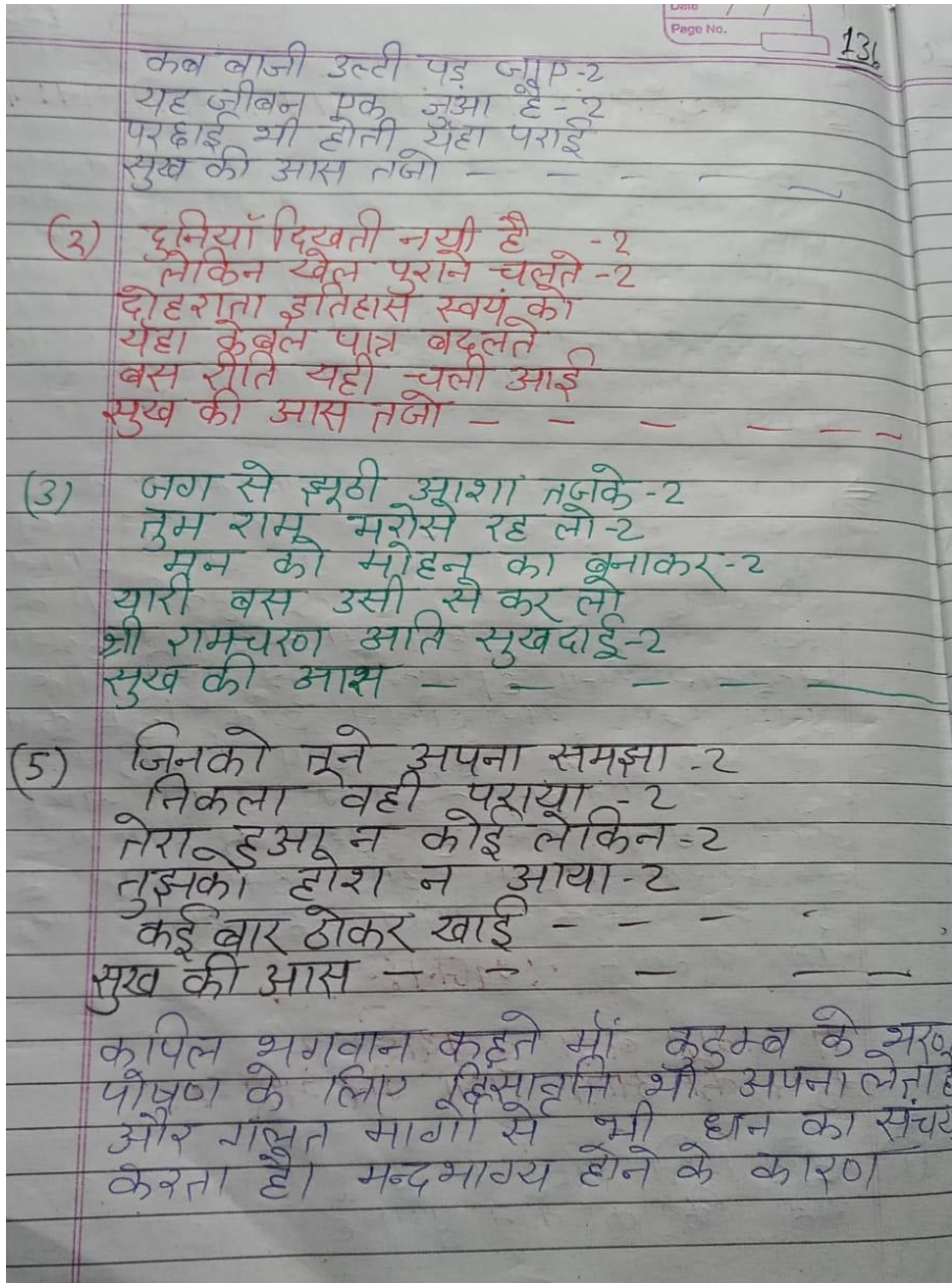
- कपिल भगवान कहते -
⇒ ध्यायेद्देवं समग्रांगं यावन्न च्यवते मनः ॥
- मईया श्री भगवान नारायण के विग्रह का दर्शन करते हुए उनके श्री अंगो का दर्शन दर्शन करते हुए तब तक ध्यान करे, जब तक चित्त वहा से हटे नही।

⇒ इसके उपरान्त मे जीव की गति का वर्णन श्री कपिल भगवान ने माता देवहूति से किया।

⇒ भगवान कपिल कहते माँ जीव माया के चक्कर मे पड़कर अपने मूल उद्देश्य को भूल जाता है और मन्दमति जीव अपने नाशवान शरीर तथा उसके सम्बन्धियो के घर, खेत, और धन आदि को मोहवश नित्य मान लेता है। पत्नी, पुत्र, पुत्री, परिवार इनमे फसकर सारा जीवन इनके लिए कमाने मे निकाल देता है, यद्यपि जिनके लिए वह धन एकत्रित करने मे अपना सारा जीवन गवा देता है, उन्ही के द्वारा कई बार धोखा मिलता और ठगा जाता है फिर भी उसकी आँखे नही खुलती, एक संत कहते - ः भजन ः

ये जगत बड़ा दुखदाई -2
सुख की आस तजो मेरे भाई -2

(1) झूठे रिश्ते झूठे नाते है
यहा किसका कौन हुआ है



Page No. 136

कब बाजी उल्टी पड़ जाए-2
यह जीवन एक जुआ है-2
परछाई भी होती यहाँ पराई
सुख की आस तजो — — — —

(2) दुनियाँ दिखती नयी है -2
लेकिन खेल पुराने चलते -2
दोहराता इतिहास स्वयं को
यहाँ केवल पात्र बदलते
बस रीति यही चली आई
सुख की आस तजो — — — — —

(3) जग से झूठी आशा तजके-2
तुम राम भरोसे रह लो-2
मन को मोहन का बनाकर-2
यारी बस उसी से कर लो
श्री रामचरण अति सुखदाई-2
सुख की आस — — — — —

(5) जिनको तूने अपना समझा -2
निकला वही पराया -2
तेरा हुआ न कोई लेकिन-2
तुझको होश न आया-2
कई बार ठोकर खाई — — —
सुख की आस — — — —

कपिल भगवान कहते माँ कुटुम्ब के भरण पोषण के लिए हिंसावृत्ति भी अपना लेता है और गलत मार्गों से भी धन का संचय करता है। मन्दभाग्य होने के कारण

Date / /
Page No. 137

जब कुटुम्ब के भरण पोषण में असमर्थ हो जाता है तब अत्यन्त दीन और चिन्तातुर होकर लंबी-लंबी सांसे छोड़ने लगता है।

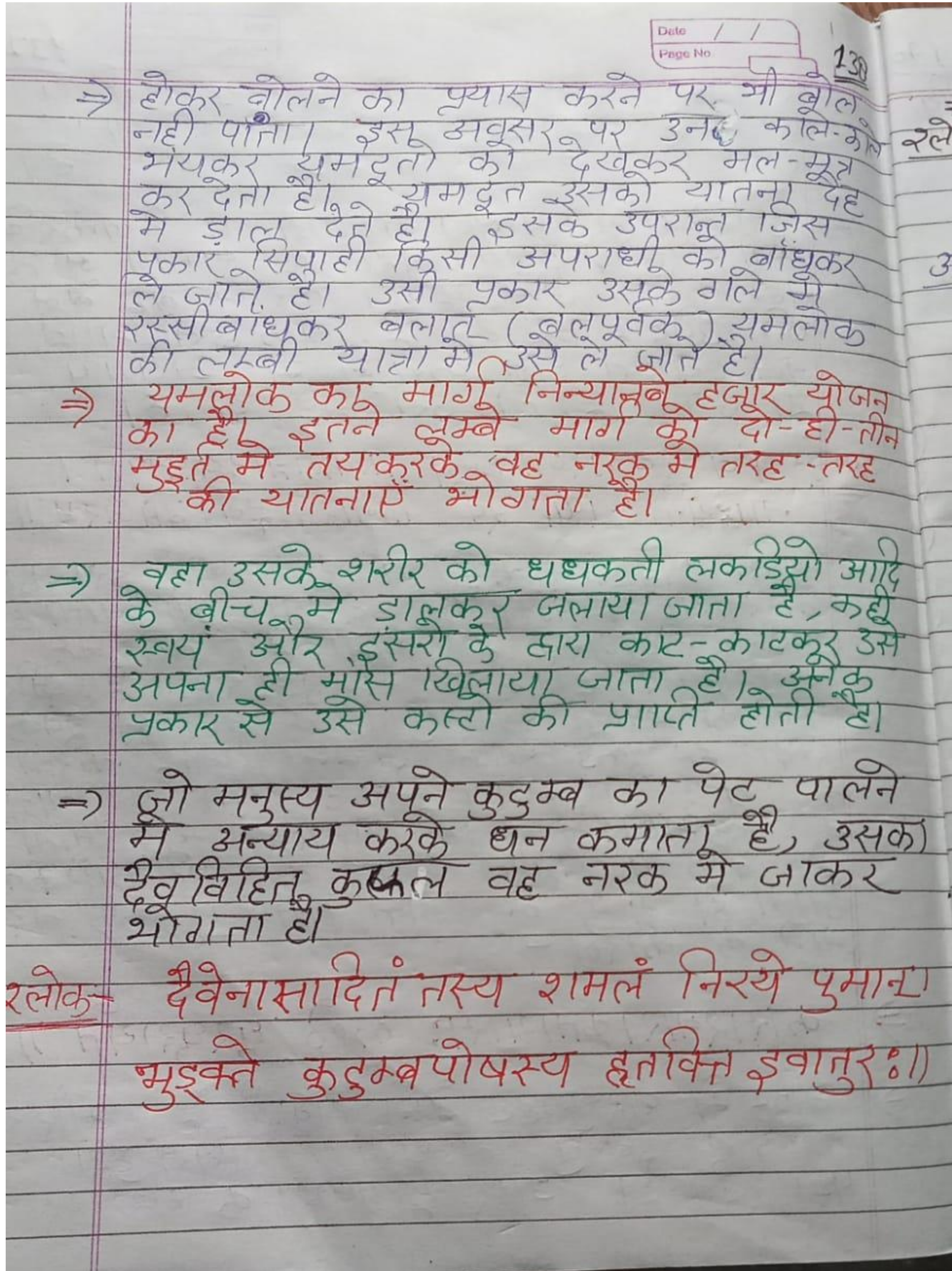
⇒ अपने पालन पोषण में असमर्थ देखकर वे स्त्री-पुत्रादि इसका पहले के समान आदर नही करते, जैसे कृपण किसान बूढ़े बैल की उपेक्षा कर देते है, ठीक इसी भांति जब व्यक्ति धन कमाने में असमर्थ हो जाता है, तो उसे छोड़ देते है।

श्लोक- एवं स्वभरणाकल्पं तत्कलत्रादयस्तथा।
नाद्रियन्ते यथा पूर्वं कीनाशा इव गोजरम्॥

कपिल भगवान् कहते मां धीरे-धीरे इस संसार के माया मे फंस कर बुढ़ापा आ जाता है शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। तब वह मरणोन्मुख होकर घर मे पड़ा रहता है, और कुत्ते की भांति स्त्री-पुत्रादि के अपमान पूर्वक दिए हुए टुकड़े खाकर जीवन निर्वाह करता है। मृत्यु का समय निकट आने पर वायु के उत्क्रमण से इसकी पुतलियां चढ़ जाती है। कफ के कारण श्वास की नालिकाएं रुक जाती है। मृत्यु के अन्त समय मे कफ बढ़ जाने के कारण-

⇒ कासश्वासकृतायासः कण्ठे घुरघुरायते॥

⇒ कण्ठ मे घुरघुराहट होने लगती है। और शोकातुर बन्धु-बान्धवो से घिरा हुआ पड़ा रहता है। और मृत्युपाश के वशीभूत



138

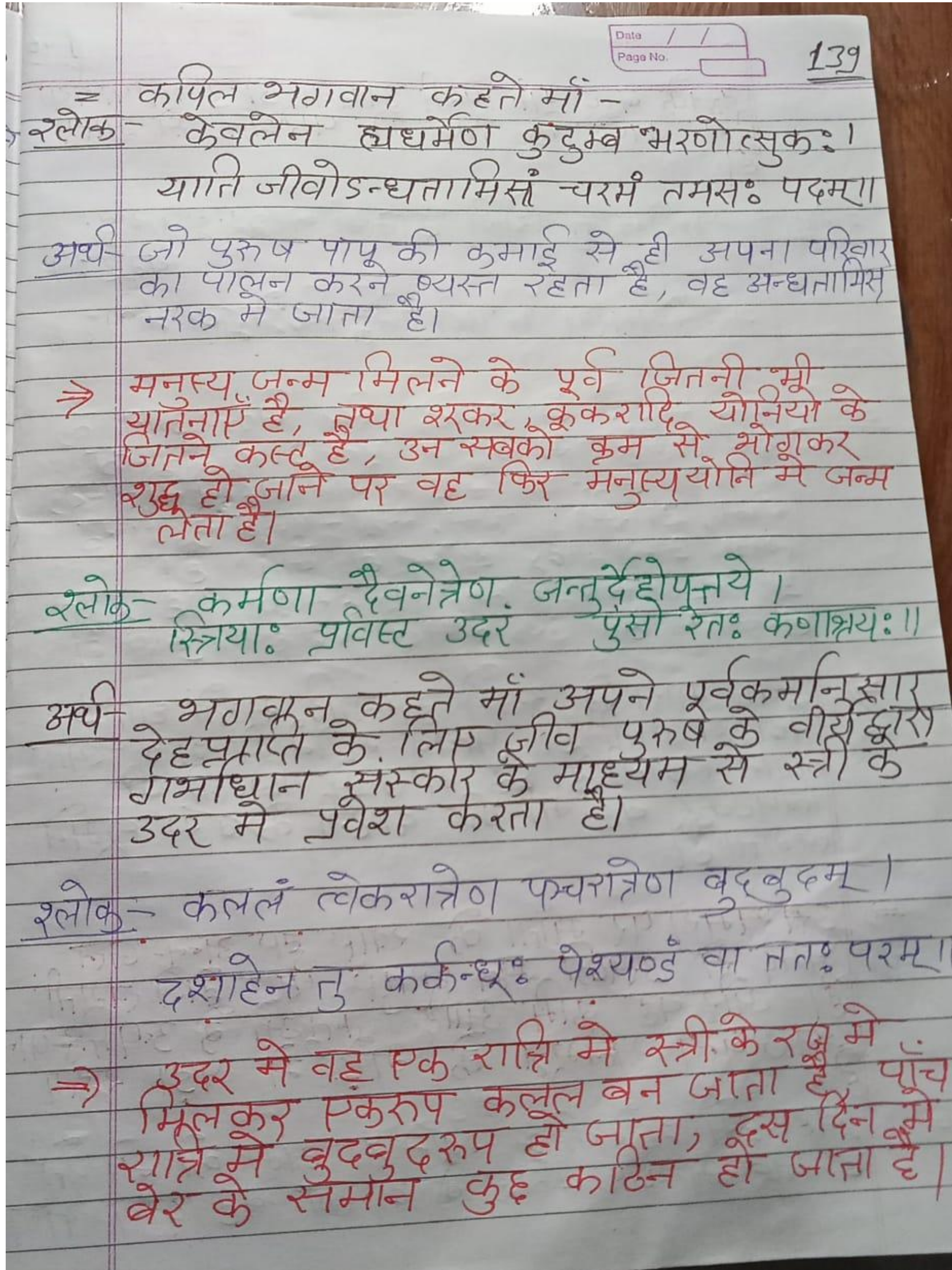
⇒ होकर बोलने का प्रयास करने पर भी बोल नही पाता। इस अवसर पर उनके काले-काले भयकर यमदूतो को देखकर मल-मूत्र कर देता है। यमदूत उसको यातना देह मे डाल देते है। इसके उपरान्त जिस प्रकार सिपाही किसी अपराधी को बांधकर ले जाते है। उसी प्रकार उसके गले मे रस्सी बांधकर बलात् (बलपूर्वक) यमलोक की लम्बी यात्रा मे उसे ले जाते है।

⇒ यमलोक का मार्ग निन्यान्नबे हजार योजन का है, इतने लम्बे मार्ग को दो-ही-तीन मुहुर्त मे तय करके वह नरक मे तरह-तरह की यातनाएँ भोगता है।

⇒ वहा उसके शरीर को धधकती लकडियो आदि के बीच मे डालकर जलाया जाता है, कही स्वयं और दूसरो के द्वारा काट-काटकर उसे अपना ही मांस खिलाया जाता है। अनेक प्रकार से उसे कष्टो की प्राप्ति होती है।

⇒ जो मनुष्य अपने कुटुम्ब का पेट पालने मे अन्याय करके धन कमाता है, उसका दैव विहित कुफल वह नरक मे जाकर भोगता है

श्लोक- दैवेनासादितं तस्य शमलं निरये पुमान्।
भुङ्क्ते कुटुम्बपोषस्य हृतवित्त इवातुरः॥



139

= कपिल भगवान कहते माँ -

श्लोक- केवलेन ह्यधर्मेण कुटुम्ब भरणोत्सुकः।
याति जीवोऽन्धतामिस्रं चरमं तमसः पदम्॥

अर्थ- जो पुरुष पापू की कमाई से ही अपना परिवार का पालन करने व्यस्त रहता है, वह अन्धतामिस नरक मे जाता है।

⇒ मनुस्य जन्म मिलने के पूर्व जितनी भी यातनाएँ है, तथा शूकर, कूकरादि योनियो के जितने कष्ट है, उन सबको क्रम से भोगकर शुद्ध हो जाने पर वह फिर मनुस्ययोनि मे जन्म लेता है।

श्लोक- कर्मणा दैवनेत्रेण जन्तुर्देहोपपत्तये।
स्त्रियाः प्रविस्ट उदरं पुंसो रेतः कणाश्रयः॥

अर्थ- भगवान कहते माँ अपने पूर्वकर्मानुसार देहप्राप्ति के लिए जीव पुरुष के वीर्य द्वारा गर्भाधान संस्कार के माध्यम से स्त्री के उदर मे प्रवेश करता है।

श्लोक- कललं त्वेकरात्रेण पञ्चरात्रेण बुद्बुदम्।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम्॥

⇒ उदर मे वह एक रात्रि मे स्त्री के रज मे मिलकर एकरूप कलल बन जाता है, पाँच रात्रि मे बुदबुदरूप हो जाता, दस दिन मे बेर के समान कुछ कठिन हो जाता है।

इसके बाद मांसपेशी अथवा अण्डज प्राणियो मे अण्डे के रुप मे परिणत हो जाता है।

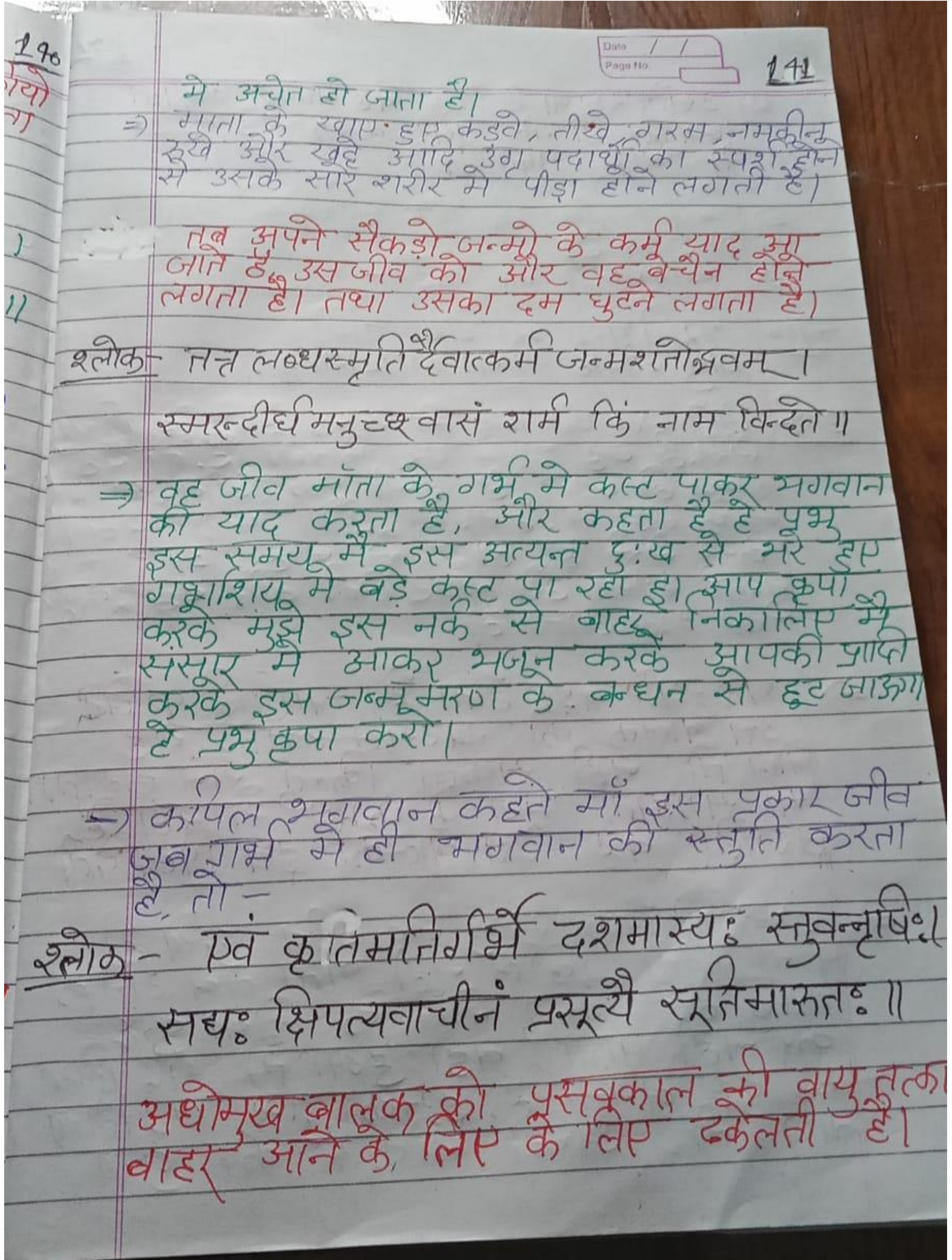
श्लोक - मासेन तु शिरो द्वाभ्यां बाह्वङ्घ्र्याद्यङ्गविग्रहः।
नखलोमास्थिचर्माणि लिङ्गच्छिद्रोद्भवस्त्रिभिः॥

अर्थ - एक महीने मे उसके सिर निकल आता है, दो महीने मे हाथ पाँव आदि अंगो का विभाग हो जाता है। तीसरे महीने मे नख, रोम, अस्थि, चर्म, स्त्री-पुरुष के चिन्ह तथा अन्य छिद्र उत्पन्न हो जाते है। अर्थात तीसरे महीने मे हमको यह ज्ञात हो जाता है कि गर्भ मे स्त्री है या पुरुष है।

⇒ चार मास मे उसमे मांसादि सातों धातुएँ पैदा हो जाती है। पाँचवे महीने मे भूख प्यास लगने लगती है। छठे मास मे झिल्ली से लिपटकर वह माँ की दाहिनी कोख मे घूमने लगता है।

⇒ उस समय पर माता के खाए हुए अन्न-जल आदि से उसकी सब धातुएँ पुष्ट होने लगती है। और वह कृमि आदि जन्तुओ के उत्पत्तिस्थान उस जघन्य मलमूत्र के गढ़े मे पड़ा रहता है।

⇒ वहां उसे भूखे कीड़े खाते है, अंग को नोचते है, तब अत्यन्त क्लेश के कारण वह क्षण-क्षण



141

मे अचेत हो जाता है।

⇒ माता के खाए हुए कड़वे, तीखे, गरम, नमकीन, रुखे और खट्टे आदि उग्र पदार्थो का स्पर्श होने से उसके सारे शरीर मे पीड़ा होने लगती है।

तब अपने सैकड़ो जन्मो के कर्म याद आ जाते है, उस जीव को और वह बेचैन होने लगता है। तथा उसका दम घुटने लगता है।

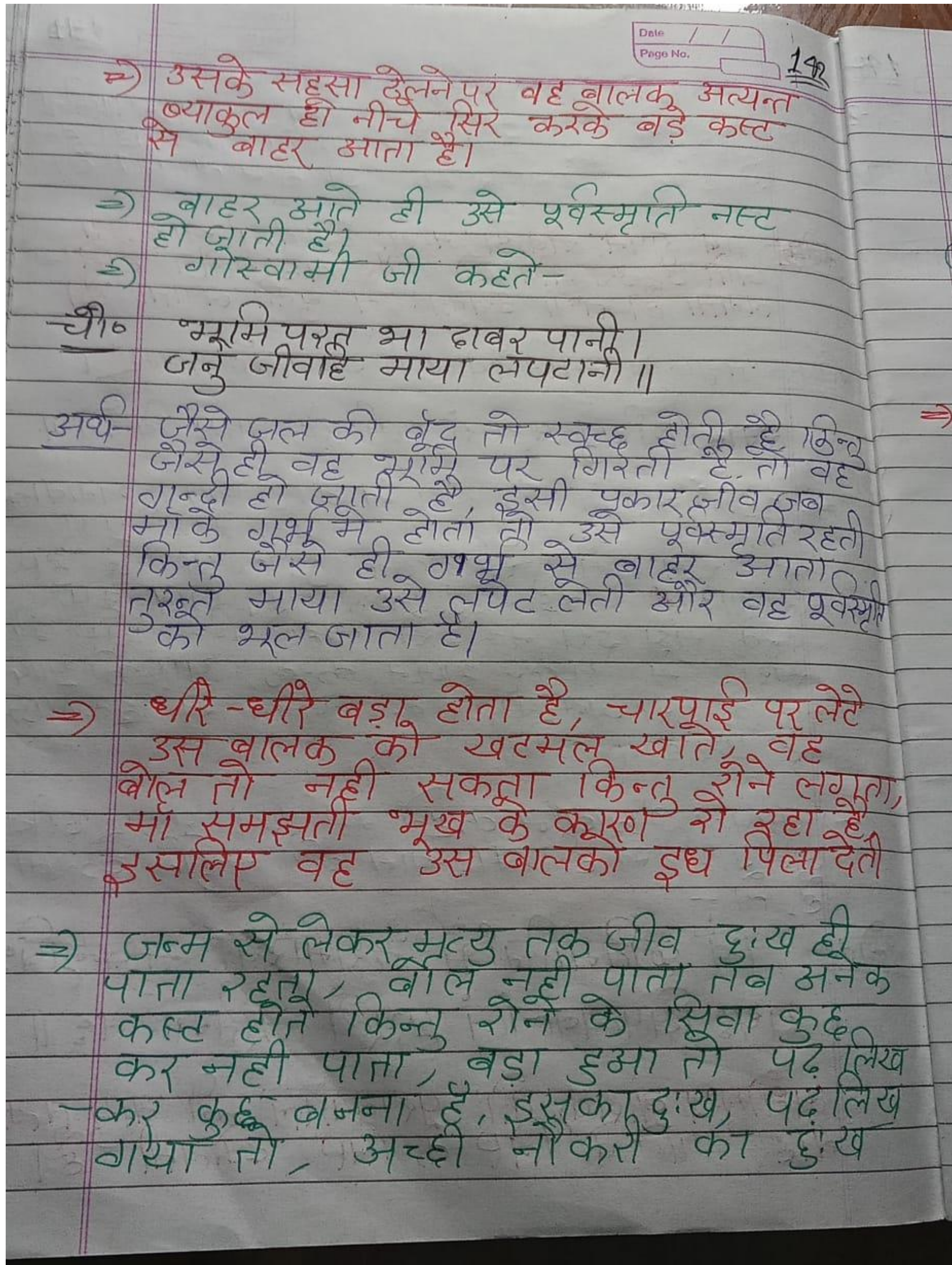
श्लोक- तत्र लब्धस्मृतिर्दैवात्कर्म जन्मशतोद्भवम्।
स्मरन्दीर्घमनुच्छ्वासं शर्म किं नाम विन्दते॥

⇒ वह जीव मॉता के गर्भ मे कस्ट पाकर भगवान की याद करता है, और कहता है हे प्रभु इस समय मे इस अत्यन्त दुःख से भरे हुए गर्भाशय मे बड़े कस्ट पा रहा हु। आप कृपा करके मुझे इस नर्क से बाहर निकालिए मै संसार मे आकर भजन करके आपकी प्राप्ति करके इस जन्म मरण के बन्धन से छूट जाऊगा हे प्रभु कृपा करो।

⇒ कपिल भगवान कहते मॉ इस प्रकार जीव जब गर्भ मे ही भगवान की स्तुति करता है, तो -

श्लोक- एवं कृतमतिर्गर्भे दशमास्यः स्तुवन्नृषिः।
सद्यः क्षिपत्यवाचीनं प्रसूत्यै सूतिमारुतः॥

अधोमुख बालक को प्रसवकाल की वायु तत्काल बाहर आने के लिए के लिए ढकेलती है।



142

⇒ उसके सहसा ठेलने पर वह बालक अत्यन्त व्याकुल हो नीचे सिर करके बड़े कष्ट से बाहर आता है।

⇒ बाहर आते ही उसे पूर्वस्मृति नष्ट हो जाती है।

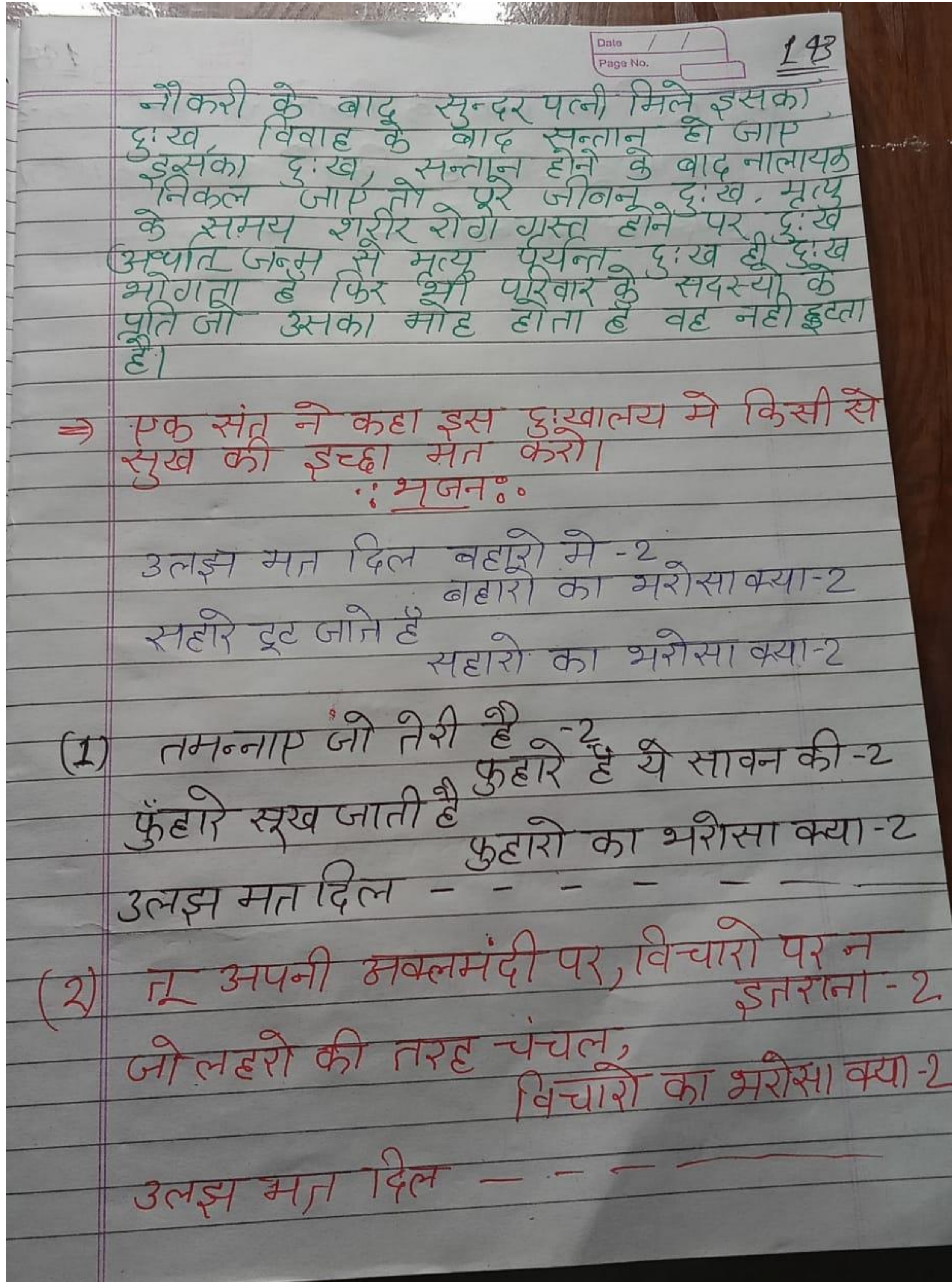
⇒ गोस्वामी जी कहते-

चौ० "भूमि परत भा ढाबर पानी।
जनु जीवहि माया लपटानी॥

अर्थ- जैसे जल की बूंद तो स्वच्छ होती है किन्तु जैसे ही वह भूमि पर गिरती है तो वह गन्दी हो जाती है, इसी प्रकार जीव जब माँ के गर्भ में होता तो उसे पूर्वस्मृति रहती किन्तु जैसे ही गर्भ से बाहर आता तुरन्त माया उसे लपेट लेती और वह पूर्वस्मृति को भूल जाता है।

⇒ धीरे-धीरे बड़ा होता है, चारपाई पर लेटे उस बालक को खटमल खाते, वह बोल तो नहीं सकता किन्तु रोने लगता, माँ समझती भूख के कारण रो रहा है इसलिए वह उस बालको दूध पिला देती

⇒ जन्म से लेकर मृत्यु तक जीव दुःख ही पाता रहता, बोल नहीं पाता तब अनेक कष्ट होते किन्तु रोने के सिवा कुछ कर नहीं पाता, बड़ा हुआ तो पढ़ लिख कर कुछ बनना है, इसका दुःख, पढ़ लिख गया तो, अच्छी नौकरी का दुःख



143

नौकरी के बाद सुन्दर पत्नी मिले इसका दुःख, विवाह के बाद सन्तान हो जाए इसका दुःख, सन्तान होने के बाद नालायक निकल जाए तो पूरे जीवन दुःख, मृत्यु के समय शरीर रोग ग्रस्त होने पर दुःख अर्थात जन्म से मृत्यु पर्यन्त दुःख ही दुःख भोगता है फिर भी परिवार के सदस्यों के प्रति जो उसका मोह होता है वह नही छूटता है।

⇒ एक संत ने कहा इस दुःखालय मे किसी से सुख की इच्छा मत करो।

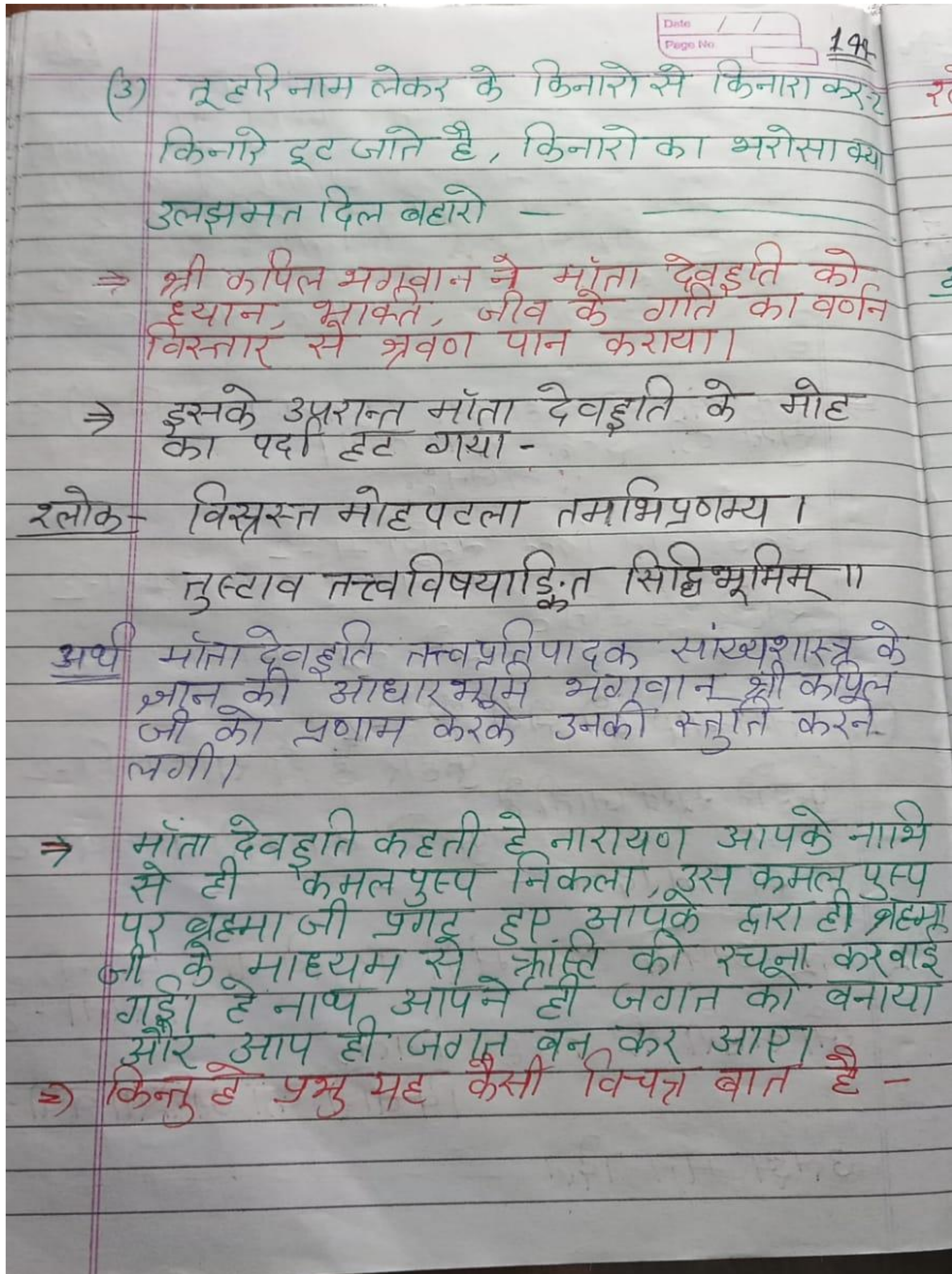
:: भजन ::

उलझ मत दिल बहारो मे -2
बहारो का भरोसा क्या-2
सहारे टूट जाते है
सहारो का भरोसा क्या-2

(1) तमन्नाए जो तेरी है -2
फुहारे है ये सावन की -2
फुँहारे सूख जाती है
फुहारो का भरोसा क्या -2
उलझ मत दिल - - - - - - -

(2) तू अपनी अक्लमंदी पर, विचारो पर न इतराना - 2
जो लहरो की तरह चंचल,
विचारो का भरोसा क्या -2

उलझ मत दिल - - - —



144

(3) तू हरि नाम लेकर के किनारो से किनारा कर-२
किनारे टूट जाते है, किनारो का भरोसा क्या
उलझ मत दिल बहारो — ——

⇒ श्री कपिल भगवान ने मॉता देवहूति को ध्यान, भक्ति, जीव के गति का वर्णन विस्तार से श्रवण पान कराया।

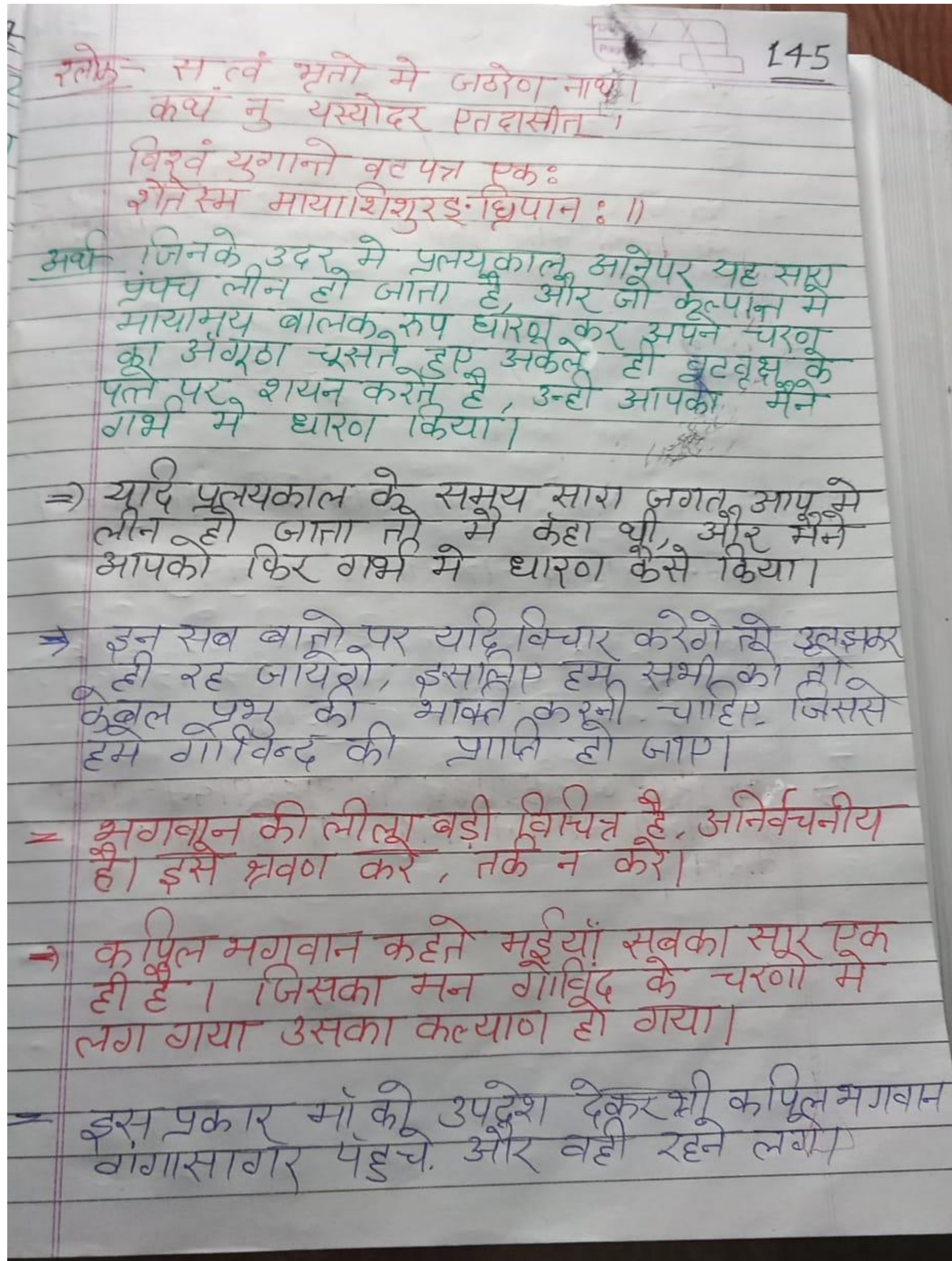
⇒ इसके उपरान्त मॉता देवहूति के मोह का पर्दा हट गया -

श्लोक- विस्रस्त मोहपटला तमभिप्रणम्य ।
तुष्टाव तत्त्वविषयाङ्कित सिद्धिभूमिम् ॥

अर्थ- मॉता देवहूति तत्त्वप्रतिपादक सांख्यशास्त्र के ज्ञान की आधारभूमि भगवान श्री कपिल जी को प्रणाम करके उनकी स्तुति करने लगी।

⇒ मॉता देवहूति कहती है नारायण आपके नाभि से ही कमलपुष्प निकला, उस कमल पुष्प पर ब्रह्मा जी प्रगट हुए आपके द्वारा ही ब्रह्मा जी के माध्यम से सृष्टि की रचना करवाई गई। हे नाथ आपने ही जगत को बनाया और आप ही जगत बन कर आए।

⇒ किन्तु हे प्रभु यह कैसी विचित्र बात है -



145

श्लोक- स त्वं भूतो मे जठरेण नाथ।
कथं नु यस्योदर एतदासीत्।
विश्वं युगान्ते वटपत्र एकः
शेते स्म मायाशिशुरङ्घ्रिपानः॥

अर्थ- जिनके उदर मे प्रलयकाल आनेपर यह सारा प्रपंच लीन हो जाता है, और जो कल्पान्त मे मायामय बालक रुप धारण कर अपने चरणु का अंगूठा चूसते हुए अकेले ही वटवृक्ष के पत्ते पर शयन करते है, उन्ही आपको मैंने गर्भ मे धारण किया।

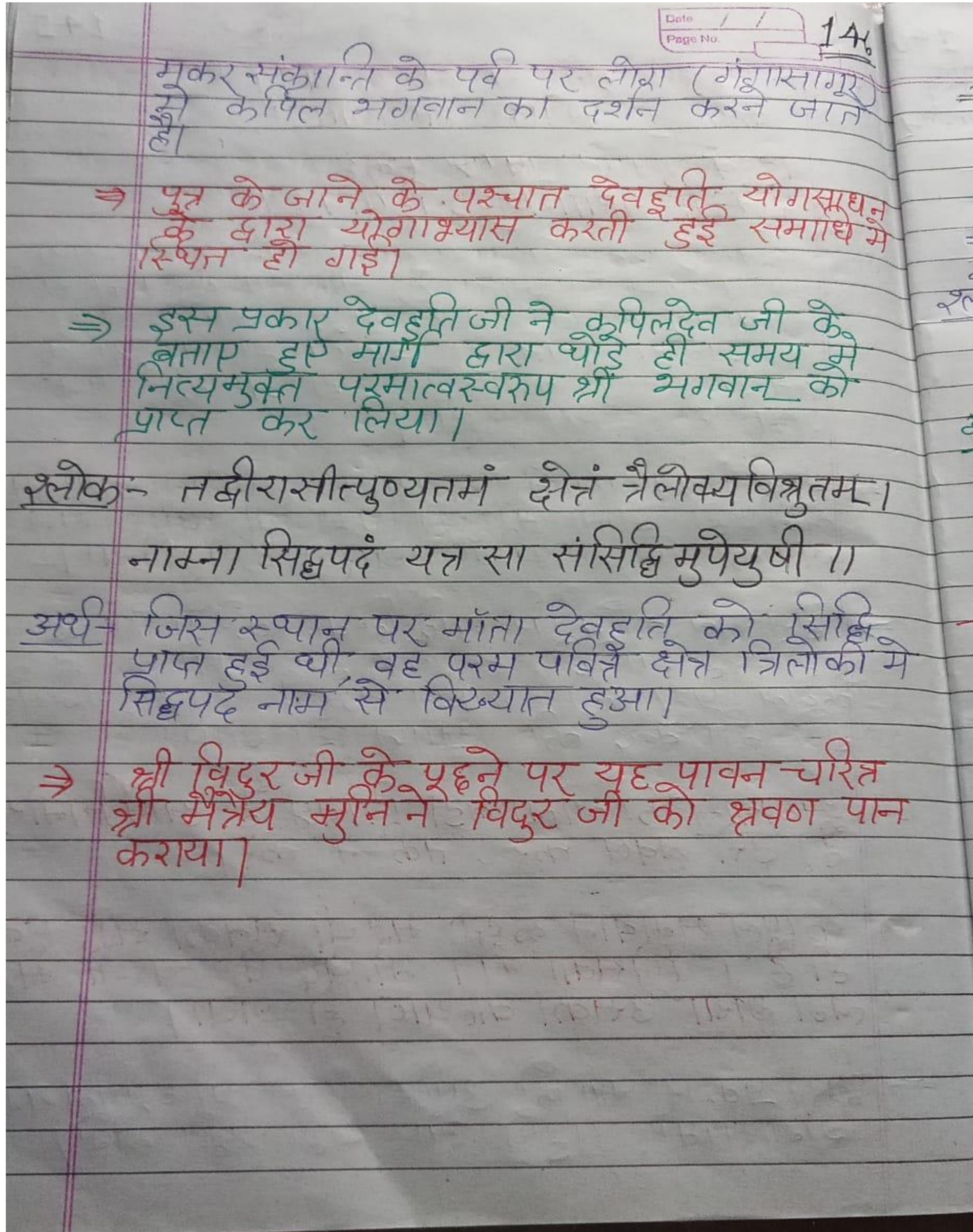
=> यदि प्रलयकाल के समय सारा जगत आप मे लीन हो जाता तो मै कहा थी, और मैंने आपको फिर गर्भ मे धारण कैसे किया।

=> इन सब बातो पर यदि विचार करेगे तो उलझकर ही रह जायेगे, इसलिए हम सभी को तो केवल प्रभु की भक्ति करनी चाहिए जिससे हमे गोविन्द की प्राप्ति हो जाए।

= भगवान की लीला बड़ी विचित्र है, अनिर्वचनीय है। इसे श्रवण करे, तर्क न करे।

=> कपिल भगवान कहते मईयां सबका सार एक ही है। जिसका मन गोविंद के चरणो मे लग गया उसका कल्याण हो गया।

= इस प्रकार मां को उपदेश देकर श्री कपिल भगवान गंगासागर पंहुचे और वही रहने लगे।



146

मकर संक्रान्ति के पर्व पर लोग (गंगासागर) में कपिल भगवान का दर्शन करने जाते हैं।

⇒ पुत्र के जाने के पश्चात देवहूति योगसाधन के द्वारा योगाभ्यास करती हुई समाधि में स्थित हो गई।

⇒ इस प्रकार देवहूति जी ने कपिलदेव जी के बताए हुए मार्ग द्वारा थोड़े ही समय में नित्यमुक्त परमात्वस्वरुप श्री भगवान को प्राप्त कर लिया।

श्लोक - तद्वीरासीत्पुण्यतमं क्षेत्रं त्रैलोक्यविश्रुतम्।
नाम्ना सिद्धपदं यत्र सा संसिद्धिमुपेयुषी ॥

अर्थ - जिस स्थान पर माँता देवहूति को सिद्धि प्राप्त हुई थी, वह परम पवित्र क्षेत्र त्रिलोकी मे सिद्धपद नाम से विख्यात हुआ।

⇒ श्री विदुर जी के पूछने पर यह पावन चरित्र श्री मैत्रेय मुनि ने विदुर जी को श्रवण पान कराया।

Date / /
Page No. 147

⇒ श्री परीक्षित जी महाराज शुकदेव जी से कहते मनु महाराज की अन्य दो बेटियों का विवाह किसके साथ हुआ, विस्तार से श्रवण पान कराइए ?

⇒ श्री शुकदेव जी कहते परीक्षित =

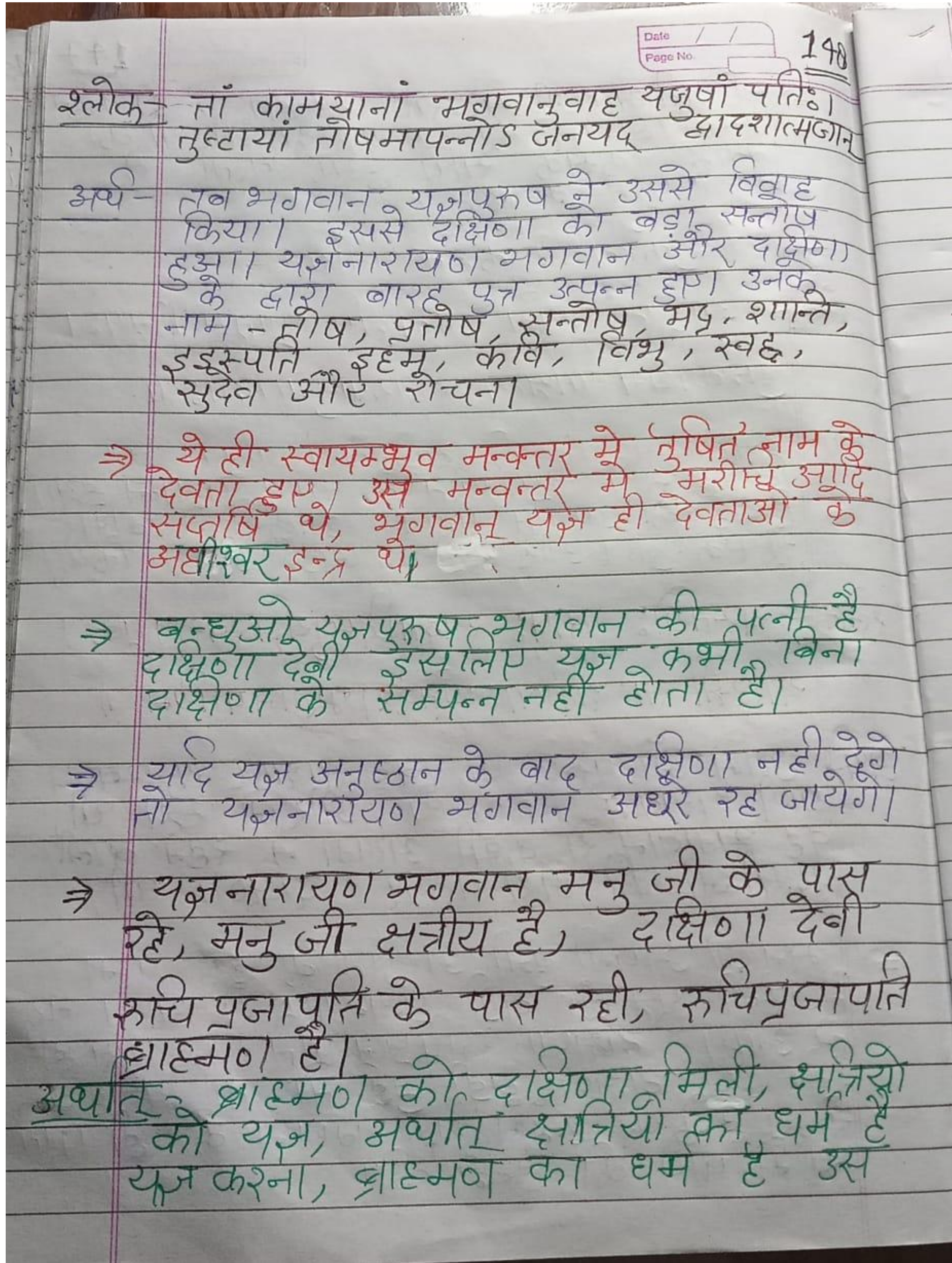
श्लोक - आकूतिं रुचये प्रादादपि भ्रातृमतीं नृपः।
पुत्रिकाधर्ममाश्रित्य शतरूपानुमोदितः॥

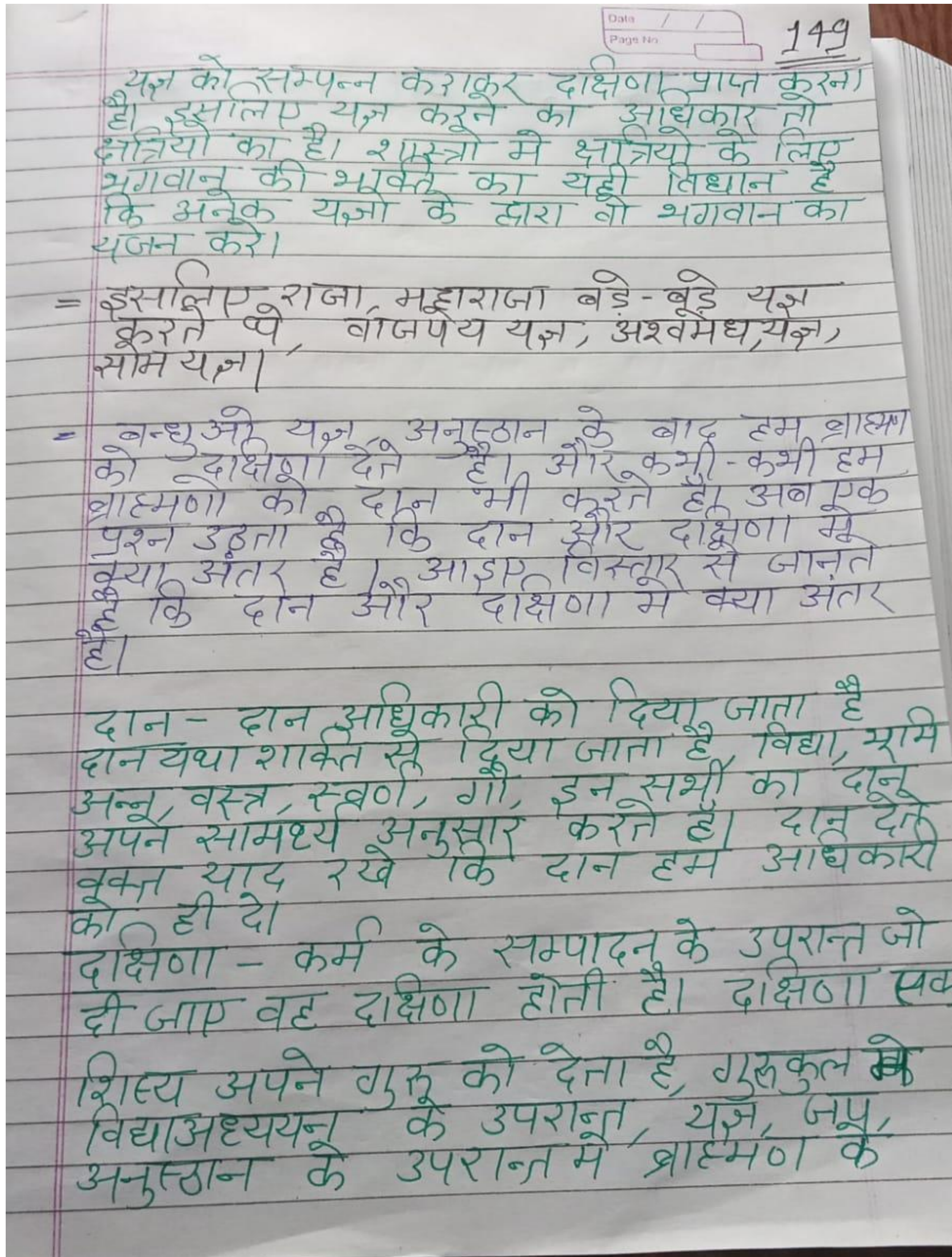
अर्थ - महाराज मनु की बड़ी बेटी आकूति का विवाह रुचि प्रजापति के साथ सम्पन्न हुआ विवाह के उपरान्त महारानी आकूति ने गर्भ से एक पुरुष और स्त्री का जोड़ा उत्पन्न किया।

श्लोक - यस्तयोः पुरुषः साक्षाद्विष्णुर्यज्ञस्वरूपधृक्।
या स्त्री सा दक्षिणा भूतेरंशभूतानपायिनी॥

अर्थ - उनमे जो पुरुष था, वह साक्षात् यज्ञस्वरूप धारी भगवान विष्णु थे, और जो स्त्री थी वह भगवान से कभी अलग न रहने वाली लक्ष्मी जी की अंशस्वरूपा (दक्षिणा) थी।

⇒ मनु जी अपनी पुत्री आकूति के उस परम तेजस्वी पुत्र को बड़ी प्रसन्नता से अपने घर ले आए। दक्षिणा रुचि प्रजापति के पास ही रही। जब दक्षिणा बड़ी हुई तो तो विवाह के योग्य होने पर उन्होने यज्ञ भगवान को ही पति रूप मे पाने की इच्छा की।


148
श्लोक - तां कामयानां भगवानुवाह यजुषां पतिः।
तुष्टायां तोषमापन्नोऽजनयद् द्वादशात्मजान्
अर्थ - तब भगवान यज्ञपुरुष ने उससे विवाह किया। इससे दक्षिणा को बड़ा सन्तोष हुआ। यज्ञनारायण भगवान और दक्षिणा के द्वारा बारह पुत्र उत्पन्न हुए। उनके नाम - तोष, प्रतोष, सन्तोष, भद्र, शान्ति, इड्स्पति, इध्म, कवि, विभु, स्वह्न, सुदेव और रोचन।
⇒ ये ही स्वायम्भुव मन्वन्तर में 'तुषित' नाम के देवता हुए। उस मन्वन्तर में मरीचि आदि सप्तर्षि थे, भगवान यज्ञ ही देवताओं के अधीश्वर इन्द्र थे।
⇒ बन्धुओ यज्ञपुरुष भगवान की पत्नी है दक्षिणा देवी इसलिए यज्ञ कभी बिना दक्षिणा के सम्पन्न नहीं होता है।
⇒ यदि यज्ञ अनुष्ठान के बाद दक्षिणा नहीं देंगे तो यज्ञनारायण भगवान अधूरे रह जायेंगे।
⇒ यज्ञनारायण भगवान मनु जी के पास रहे, मनु जी क्षत्रीय है, दक्षिणा देवी रुचि प्रजापति के पास रही, रुचिप्रजापति ब्राह्मण है।
अर्थात् - ब्राह्मण को दक्षिणा मिली, क्षत्रियों को यज्ञ, अर्थात क्षत्रियों का धर्म है यज्ञ करना, ब्राह्मण का धर्म है उस



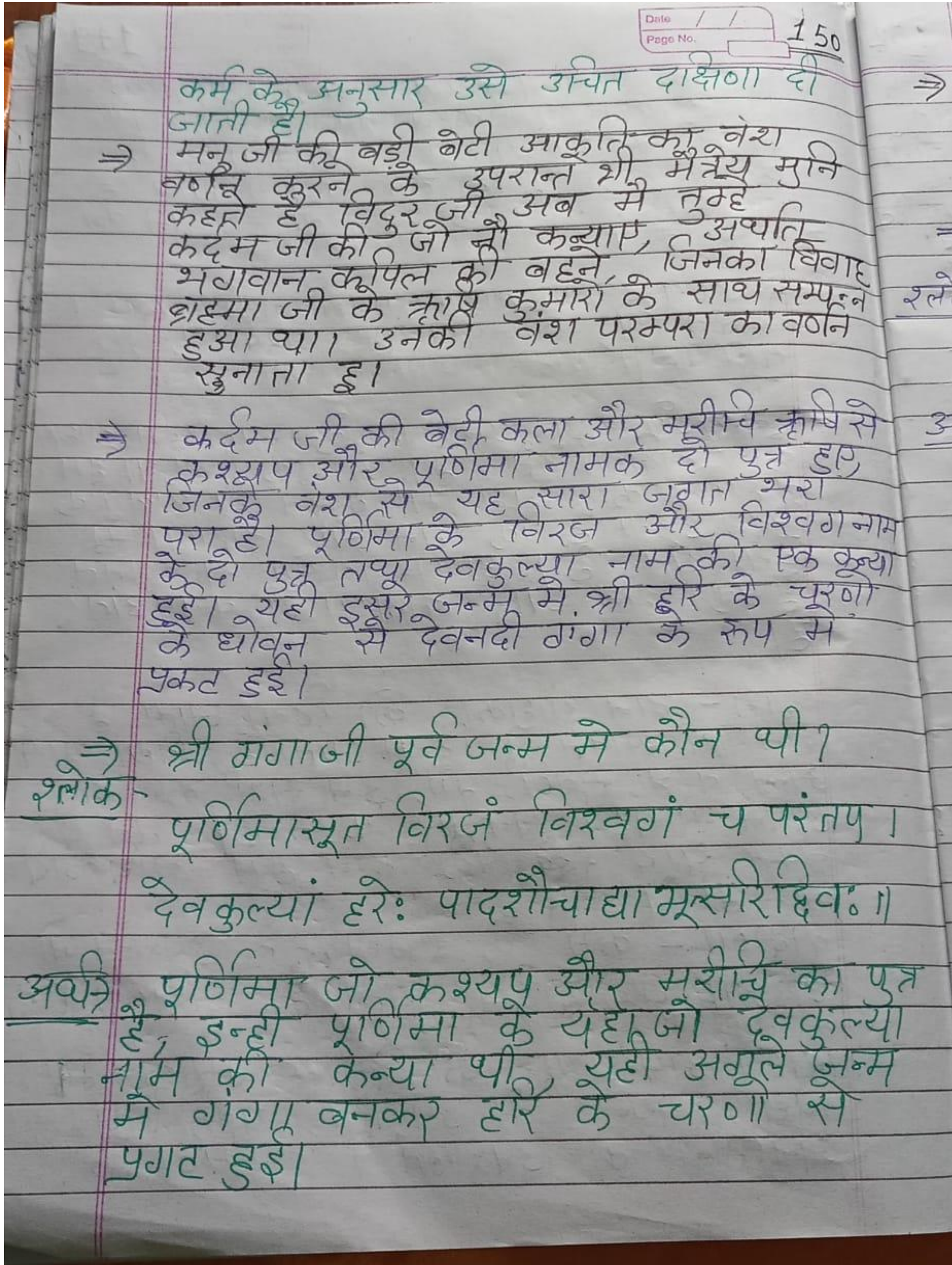
149

यज्ञ को सम्पन्न कराकर दक्षिणा प्राप्त करना है इसलिए यज्ञ करने का अधिकार तो क्षत्रियों का है। शास्त्रों में क्षत्रियों के लिए भगवान् की भक्ति का यही विधान है कि अनेक यज्ञों के द्वारा वो भगवान का यजन करें।

= इसलिए राजा, महाराजा बड़े-बड़े यज्ञ करते थे, वाजपेय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ, सोम यज्ञ।

= बन्धुओ यज्ञ, अनुष्ठान के बाद हम ब्राह्मणों को दक्षिणा देते है। और कभी-कभी हम ब्राह्मणों को दान भी करते है। अब एक प्रश्न उठता है कि दान और दक्षिणा में क्या अंतर है। आइए विस्तार से जानते है कि दान और दक्षिणा में क्या अंतर है।

दान - दान अधिकारी को दिया जाता है दान यथा शक्ति से दिया जाता है, विद्या, भूमि अन्न, वस्त्र, स्वर्ण, गौ, इन सभी का दान अपने सामर्थ्य अनुसार करते है। दान देते वक्त याद रखे कि दान हम अधिकारी को ही दें।
दक्षिणा - कर्म के सम्पादन के उपरान्त जो दी जाए वह दक्षिणा होती है। दक्षिणा सब शिष्य अपने गुरु को देता है, गुरुकुल में विद्याअध्ययन के उपरान्त, यज्ञ, जप, अनुष्ठान के उपरान्त में ब्राह्मणों को



Date / / Page No. 150

कर्म के अनुसार उसे उचित दक्षिणा दी जाती है।

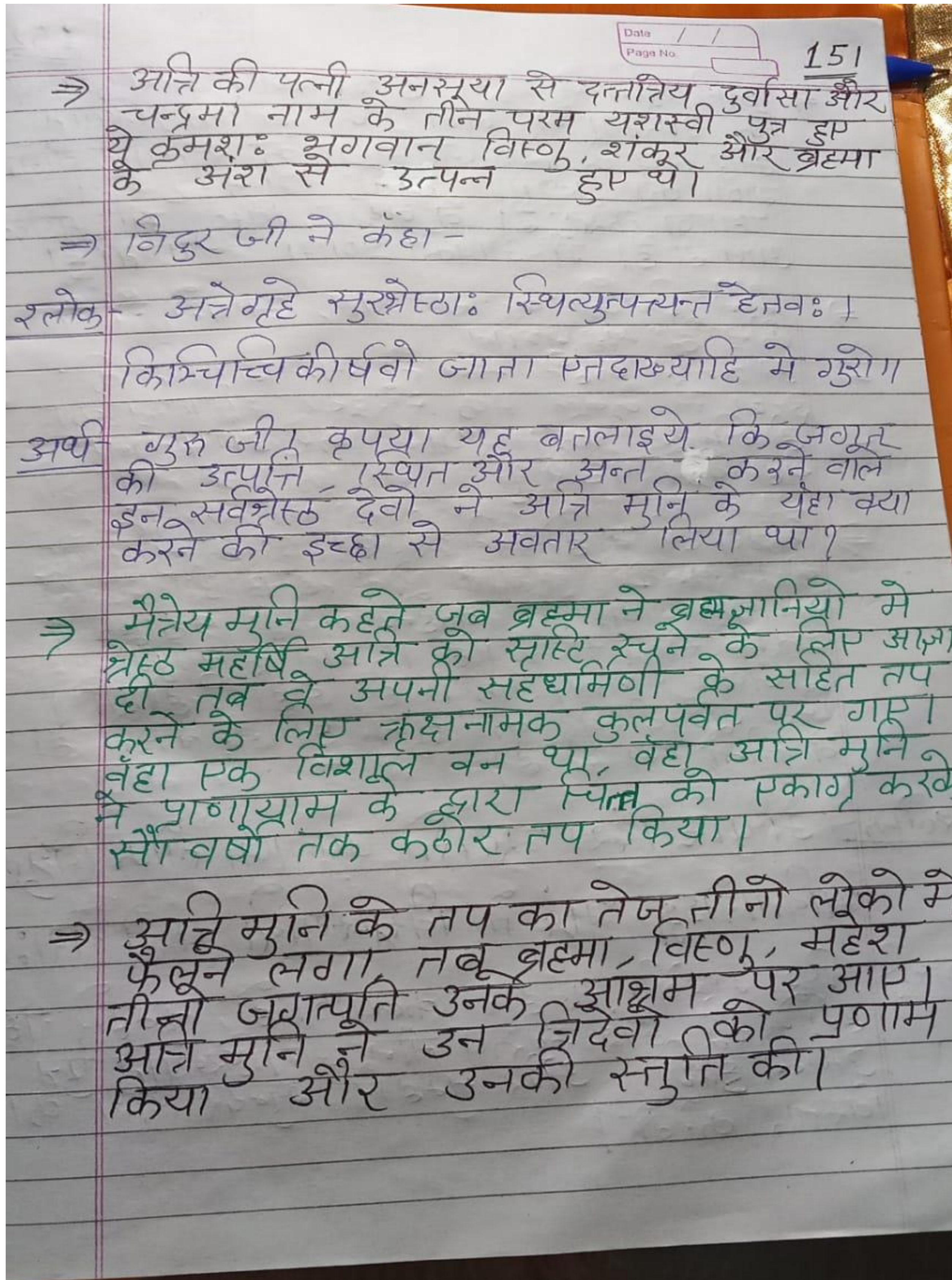
⇒ मनु जी की बड़ी बेटी आकूति का वंश वर्णन करने के उपरान्त श्री मैत्रेय मुनि कहते हैं विदुर जी अब मैं तुम्हें कर्दम जी की जो नौ कन्याएं, अर्थात भगवान कपिल की बहनें, जिनका विवाह ब्रह्मा जी के ऋषि कुमारों के साथ सम्पन्न हुआ था। उनकी वंश परम्परा का वर्णन सुनाता हूँ।

⇒ कर्दम जी की बेटी कला और मरीचि ऋषि से कश्यप और पूर्णिमा नामक दो पुत्र हुए, जिनके वंश से यह सारा जगत भरा पड़ा है। पूर्णिमा के विरज और विश्वग नाम के दो पुत्र तथा देवकुल्या नाम की एक कन्या हुई। यही दूसरे जन्म में श्री हरि के चरणों के धोवन से देवनदी गंगा के रूप में प्रकट हुई।

⇒ श्री गंगा जी पूर्व जन्म मे कौन थी?

श्लोक- पूर्णिमासूत विरजं विश्वगं च परंतप।
देवकुल्यां हरेः पादशौचाद्याभूत्सरिद्दिवः॥

अर्थ- पूर्णिमा जो कश्यप और मरीचि का पुत्र है, इन्हीं पूर्णिमा के यहाँ जो देवकुल्या नाम की कन्या थी, यही अगले जन्म में गंगा बनकर हरि के चरणों से प्रगट हुई।



151

⇒ अत्रि की पत्नी अनसूया से दत्तात्रिय, दुर्वासा और चन्द्रमा नाम के तीन परम यशस्वी पुत्र हुए ये क्रमशः भगवान विष्णु, शंकर और ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न हुए थे।

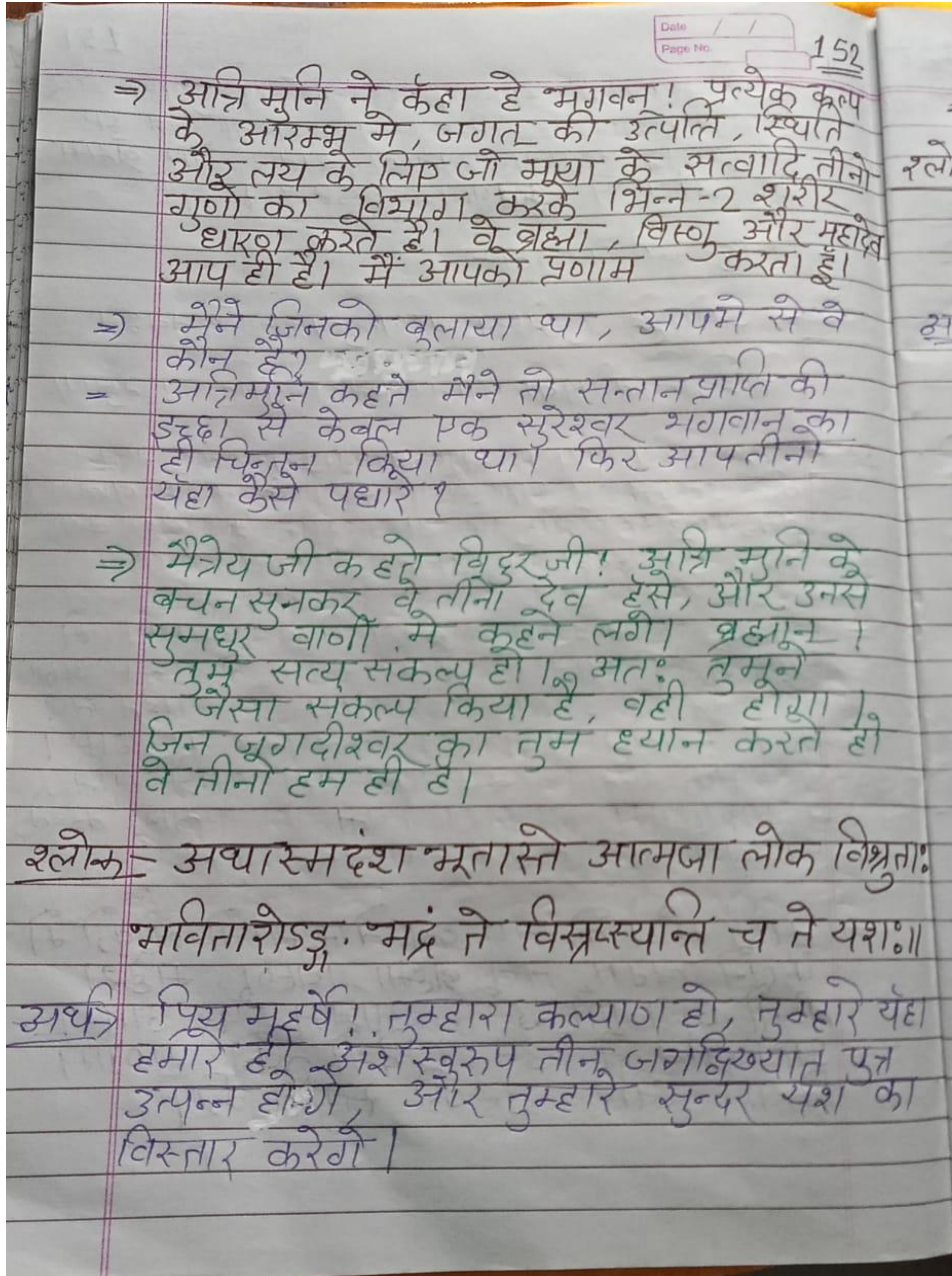
⇒ विदुर जी ने कहा -

श्लोक - अत्रेर्गृहे सुरश्रेष्ठाः स्थित्युत्पत्त्यन्त हेतवः ।
किञ्चिच्चिकीर्षवो जाता एतदाख्याहि मे गुरो ॥

अर्थ - गुरु जी! कृपया यह बतलाइये कि जगत की उत्पत्ति, स्थित और अन्त करने वाले इन सर्वश्रेष्ठ देवो ने अत्रि मुनि के यहा क्या करने की इच्छा से अवतार लिया था?

⇒ मैत्रेय मुनि कहते जब ब्रह्मा ने ब्रह्मज्ञानियो मे श्रेष्ठ महर्षि अत्रि को सृष्टि रचने के लिए आज्ञा दी तब वे अपनी सहधर्मिणी के सहित तप करने के लिए ऋक्ष नामक कुलपर्वत पर गए। वहा एक विशाल वन था, वहा अत्रि मुनि ने प्राणायाम के द्वारा चित्त को एकाग्र करके सौ वर्षो तक कठोर तप किया।

⇒ अत्रि मुनि के तप का तेज तीनो लोको मे फैलने लगा, तब ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनो जगत्पति उनके आश्रम पर आए। अत्रि मुनि ने उन त्रिदेवो को प्रणाम किया और उनकी स्तुति की।



152

⇒ अत्रि मुनि ने कहा हे भगवन ! प्रत्येक कल्प के आरम्भ मे, जगत की उत्पत्ति, स्थिति और लय के लिए जो माया के सत्वादि तीनो गुणो का विभाग करके भिन्न-2 शरीर धारण करते है। वे ब्रह्मा, विष्णु और महादेव आप ही है। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

⇒ मैंने जिनको बुलाया था, आपमे से वे कौन है?

= अत्रिमुनि कहते मैंने तो सन्तान प्राप्ति की इच्छा से केवल एक सुरेश्वर भगवान का ही चिन्तन किया था। फिर आप तीनो यहा कैसे पधारे?

⇒ मैत्रेय जी कहते विदुर जी! अत्रि मुनि के वचन सुनकर वे तीनो देव हसे, और उनसे सुमधुर वाणी मे कहने लगे। ब्रह्मन्! तुम सत्य सकल्प हो। अतः तुमने जैसा सकल्प किया है, वही होगा। जिन जगदीश्वर का तुम ध्यान करते हो वे तीनो हम ही है।

श्लोक - अथास्मदंशभूतास्ते आत्मजा लोकविश्रुताः
भवितारोऽङ्ग भद्रं ते विस्रप्स्यन्ति च ते यशः॥

अर्थ - प्रिय महर्षे! तुम्हारा कल्याण हो, तुम्हारे यहा हमारे ही अंशस्वरुप तीन जगद्विख्यात पुत्र उत्पन्न होंगे, और तुम्हारे सुन्दर यश का विस्तार करेगे।

Date / /
Page No 153

=) समय आने पर अत्रि और अनसूया जी के यहाँ -

श्लोक - सोमोऽभूद् ब्रह्मणोंऽशेन दत्तो विष्णोस्तु योगवित्।
दुर्वासाः शङ्करस्यांशो निबोधाङ्गिरसः प्रजाः॥

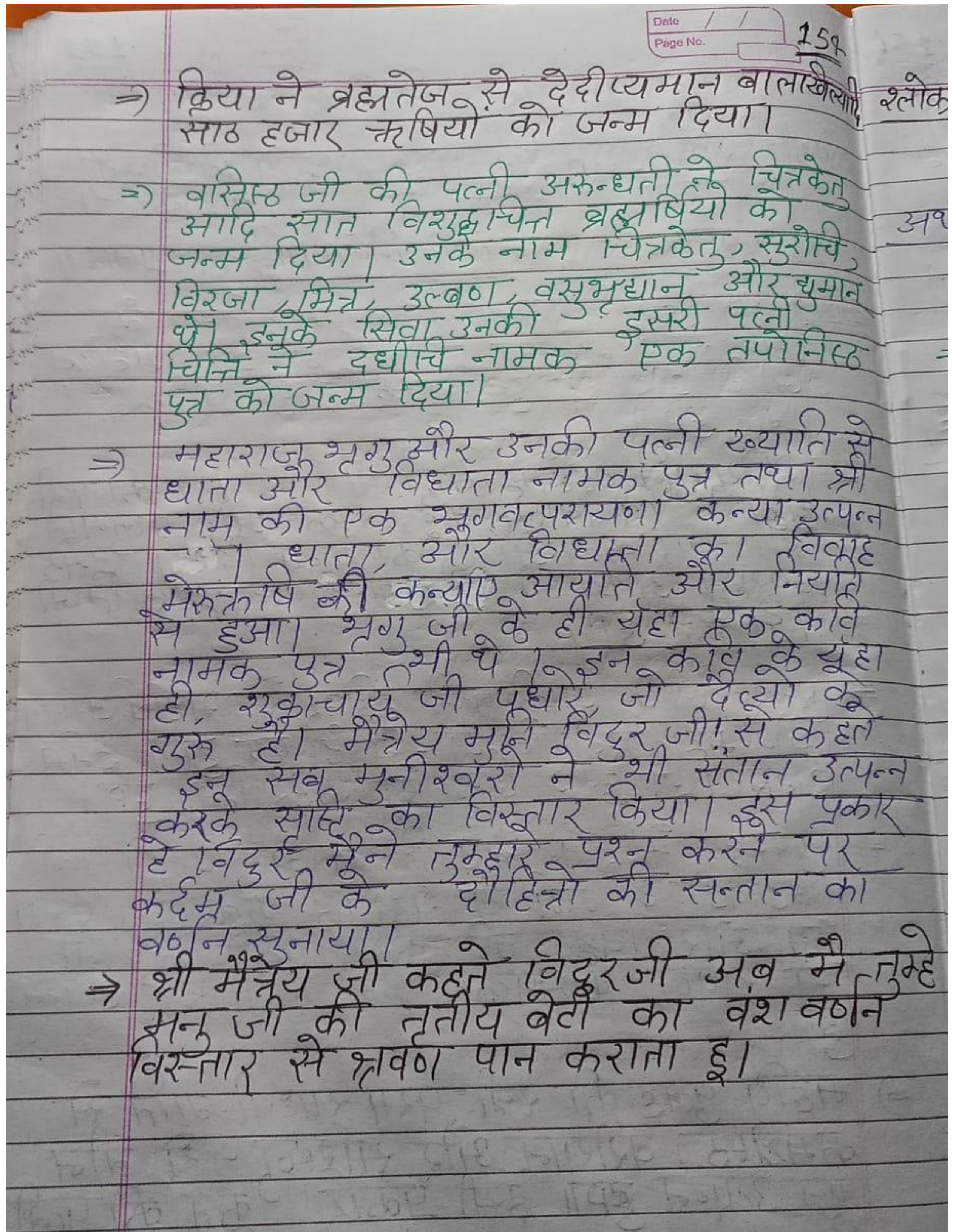
अर्थ - ब्रह्मा जी के अंश से चन्द्रमा, विष्णु के अंश से योगवेत्ता दत्तात्रेय जी, और महादेव जी के अंश से दुर्वासा ऋषि पुत्र बनकर प्रगट हुए।

= मैत्रेय मुनि कहते विदुर जी! अंगिरा की पत्नी श्रद्धा ने सिनीवाली, कुहू, राका और अनुमति इन चार कन्याओं को जन्म दिया। इसके उपरान्त उतथ्य जी और ब्रह्मनिष्ठ बृहस्पति जी ये दो पुत्र हुए,

=) पुलस्त्य जी के उनकी पत्नी हविर्भू से महर्षि अगस्त्य और महातपस्वी विश्रवा - ये दो पुत्र हुए। इनमे अगस्त्य जी दूसरे जन्म मे जठराग्नि हुए।

- पुलस्त्य के दूसरे बेटे विश्रवा और उनकी पत्नी इडविडा के गर्भ से यक्षराज कुबेर का जन्म हुआ. और विश्रवा की दूसरी पत्नी केशिनी से रावण, कुम्भकर्ण एंव विभीषण उत्पन्न हुए।

=) महर्षि पुलह की स्त्री परम साध्वी गति से कर्मश्रेष्ठ, वरीयान् और सहिष्णु - ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए। इसी प्रकार क्रतु की पत्नी



Date / /
Page No. 159

⇒ क्रिया ने ब्रह्मतेज से देदीप्यमान बालखिल्यादि साठ हजार ऋषियो को जन्म दिया।

⇒ वसिस्ठ जी की पत्नी अरून्धती ने चित्रकेतु आदि सात विशुद्धचित्त ब्रह्मर्षियो को जन्म दिया। उनके नाम चित्रकेतु, सुरोचि, विरजा, मित्र, उल्बण, वसुभृद्यान और द्युमान थे। इनके सिवा उनकी दूसरी पत्नी चित्ति ने दधीचि नामक एक तपोनिस्ठ पुत्र को जन्म दिया।

⇒ महाराज भृगु और उनकी पत्नी ख्याति से धाता और विधाता नामक पुत्र तथा श्री नाम की एक भगवत्परायणा कन्या उत्पन्न की। धाता और विधाता का विवाह मेरुऋषि की कन्याए आयति और नियति से हुआ। भृगु जी के ही यहा एक कवि नामक पुत्र भी थे। इन कवि के यहा ही शुक्राचार्य जी पधारे जो दैत्यो के गुरु है। मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते इन सब मुनीश्वरो ने भी संतान उत्पन्न करके सृष्टि का विस्तार किया। इस प्रकार हे विदुर मैने तुम्हारे प्रश्न करने पर कर्दम जी के दौहित्रो की सन्तान का वर्णन सुनाया।

⇒ श्री मैत्रेय जी कहते विदुरजी अब मै तुम्हे मनु जी की तृतीय बेटी का वंश वर्णन विस्तार से श्रवण पान कराता हू।

Date / /
Page No. 155

श्लोक- प्रसूतिं मानवीं दक्ष उपयेमे ह्यजात्मजः।
तस्यां ससर्ज दुहितृः षोडशामल लोचनाः॥

अर्थात् ब्रह्मा जी के पुत्र दक्ष प्रजापति ने मनुनन्दिनी प्रसूति से विवाह किया। उससे उन्होंने सुन्दर नेत्रोंवाली सोलह कन्याएं उत्पन्न की।

⇒ प्रजापति दक्ष ने उनमे से तेरह कन्याए धर्म को, एक अग्नि को, एक समस्त पितृगण को और एक संसार का संहार करने वाले महादेव को दी।

⇒ श्रद्धा, मैत्री, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ह्री और मूर्ति-
ये धर्म की पत्नियाँ है।

⇒ स्वाहा का विवाह अग्नि के साथ हुआ, बन्धुओ यज्ञ करते समय हम स्वाहा बोलते है, इसका क्या अर्थ है।

⇒ बन्धुओ जब अग्निदेव का विवाह स्वाहा के साथ सम्पन्न हो गया तो, स्वाहा देवी ने अग्नि देव से हाथ जोड़कर कहा स्वामी जी मै चाहती हु कि आपका और मेरा प्रेम सदा बना रहे, अतः जहा जहा आपकी उपस्थिति हो वहां, वहा मेरा भी नाम लिया जाए।

⇒ तब अग्नि देव ने कहा हे देवि आज से पूर्व जो भी यज्ञ किया जाता था उसमे स्त्री का नाम नहीं लिया था। किन्तु अब तुम्हारा विवाह मेरे साथ हो गया है।

⇒ इसलिए हे देवि आज के बाद जो भी यज्ञ करेगा वो मेरे साथ तुम्हारा भी नाम लेगा, ऐसा आशीर्वाद है।

⇒ बन्धुओ बिना स्वाहा बोले यज्ञ पूर्ण नही होता, बिना स्वाहा के अग्निदेव अपूर्ण है। बन्धुओ स्वाहा का अर्थ है पहुचाना, अर्थात जो भी सामग्री है, उसको अग्नि के मुख तक पहुचाने के लिए स्वाहा बोलते है।

⇒ स्वा कहते ही अग्निभगवान का मुख खुल जाता है और हा बोलते ही बन्द हो जाता है। बिना स्वा बोले अग्निदेव का मुख खुलेगा ही नही आप चाहे जितनी आहुति दे दो. इसलिए यज्ञ करते समय उच्चस्वर से स्वाहा बोलना चाहिए।

⇒ बन्धुओ प्रजापति दक्ष की जो स्वधा नाम की कन्या थी –

श्लोक – अग्निष्वात्ता बर्हिषदः सौम्याः पितर आज्यपाः

साग्नयोऽनग्नयस्तेषां पत्नी दाक्षायणी स्वधा ॥

अर्थ – इनका विवाह पितरो के साथ हुआ। अग्निष्वात्त बर्हिषद, सोमप, और आज्यप - ये पितर है

श्लोक - भवस्य पत्नी तु सती भवं देवमनुव्रता।
आत्मनः सदृशं पुत्रं न लेभे गुणशीलतः॥

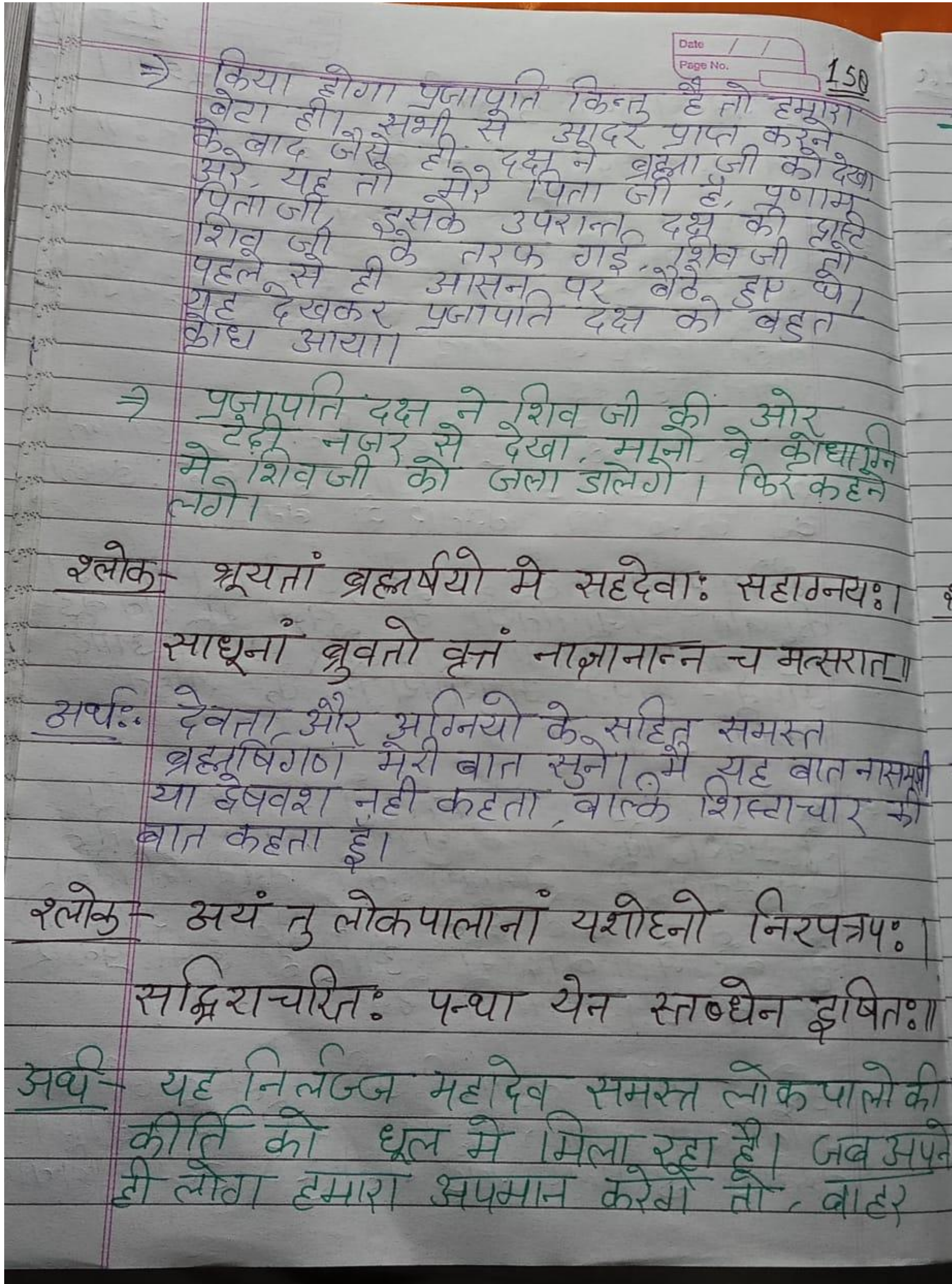
अर्थ - प्रजापति दक्ष की जो सती नाम की बिटिया थी इनका विवाह भगवान शंकर जी के साथ हुआ। सती सब प्रकार से पति के सेवा में संलग्न रहती थी। मैत्रेय जी कहते विदुर जी किन्तु सती को कोई संतान नही हुई।

⇒ विदुर जी कहते गुरुदेव विवाह के उपरान्त सती का वंश आगे क्यो नही बढ़ा? इसका क्या कारण था, विस्तार से बताए?

⇒ मैत्रेय मुनि कहते है विदुर जी! एक समय की बात प्रजापतियों के यज्ञ मे सब बड़े-बड़े ऋषि देवता मुनि और अग्नि आदि अपने-अपने अनुयायियों के सहित एकत्रित हुए।

⇒ उसी समय प्रजापति दक्ष ने भी उस सभा मे प्रवेश किया, बन्धुओ दक्ष प्रजापति है जैसे हमारे है नेताओ की कोई मीटिंग होती है तो छोटे, छोटे नेता पहले आ जाते है बड़े नेता बाद मे आते है, इसी प्रकार दक्ष भी उस सभा मे देर से आए।

⇒ उन्हे आता देख ब्रह्मा जी और महादेव जी के अतिरिक्त सभी सभासद खड़े हो गए। ब्रह्मा जी इसलिए खड़े नही हुए, उन्होने विचार



Date / /
Page No. 158

⇒ किया होगा प्रजापति किन्तु है तो हमारा बेटा ही। सभी से आदर प्राप्त करने के बाद जैसे ही दक्ष ने ब्रह्मा जी को देखा अरे यह तो मेरे पिता जी है, प्रणाम पिता जी, इसके उपरान्त दक्ष की दृष्टि शिव जी के तरफ गई, शिव जी तो पहले से ही आसन पर बैठे हुए थे। यह देखकर प्रजापति दक्ष को बहुत क्रोध आया।

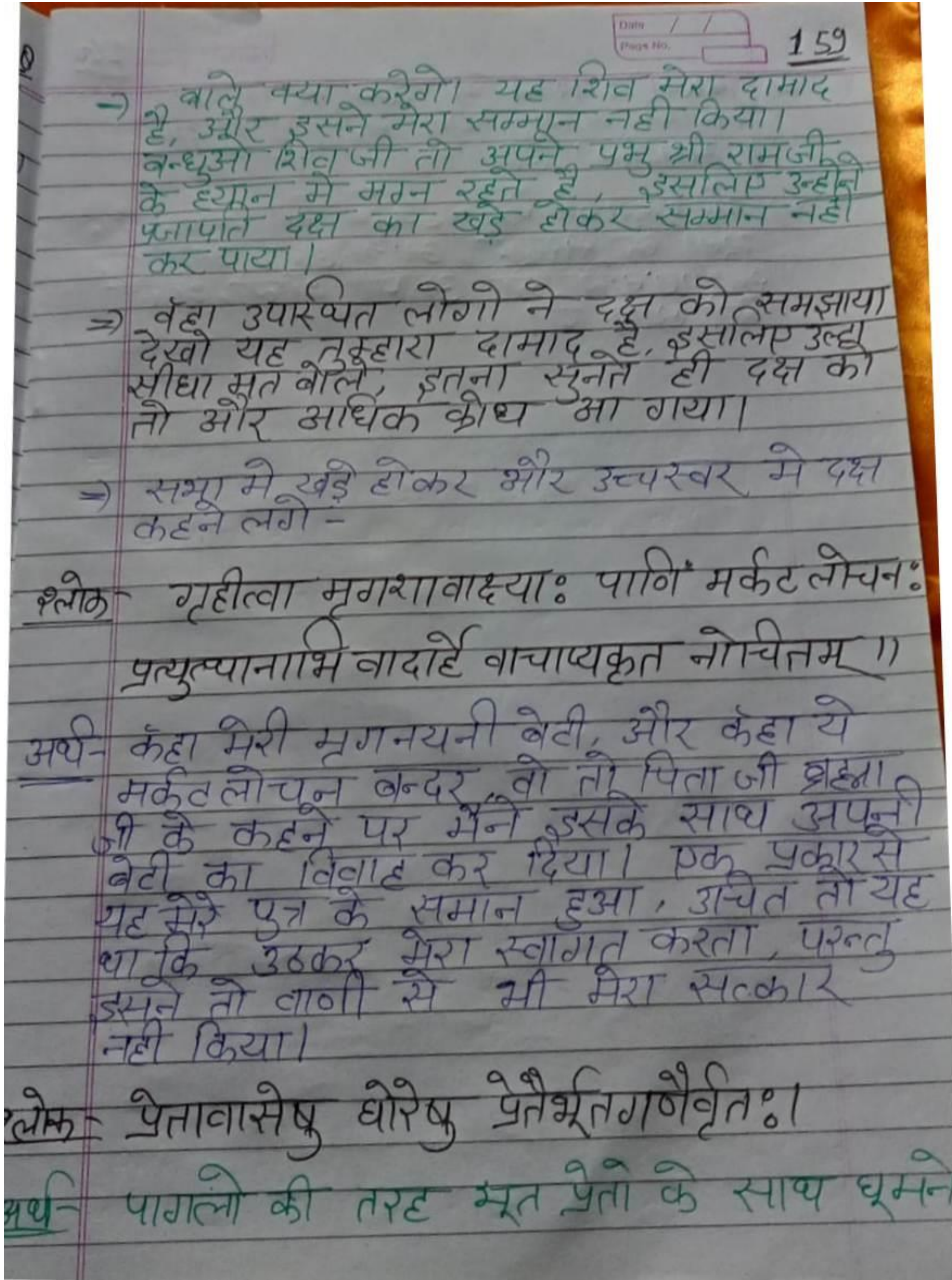
⇒ प्रजापति दक्ष ने शिव जी की ओर टेढ़ी नजर से देखा, मानो वे क्रोधाग्नि मे शिवजी को जला डालेंगे। फिर कहने लगे।

श्लोक- श्रूयतां ब्रह्मर्षयो मे सहदेवाः सहाग्नयः।
साधूनां ब्रुवतो वृत्तं नाज्ञानान्न च मत्सरात्॥

अर्थः- देवता और अग्नियो के सहित समस्त ब्रह्मर्षिगण मेरी बात सुनो। मैं यह बात नासमझी या द्वेषवश नहीं कहता, बल्कि शिष्टाचार की बात कहता हूँ।

श्लोक- अयं तु लोकपालानां यशोघ्नो निरपत्रपः।
सद्भिराचरितः पन्था येन स्तब्धेन दूषितः॥

अर्थ- यह निर्लज्ज महादेव समस्त लोकपालो की कीर्ति को धूल में मिला रहा है। जब अपने ही लोग हमारा अपमान करेंगे तो, बाहर



159

=> बोले क्या करेंगे। यह शिव मेरा दामाद है, और इसने मेरा सम्मान नही किया। बन्धुओ शिव जी तो अपने प्रभु श्री रामजी के ध्यान मे मग्न रहते है, इसलिए उन्होने प्रजापति दक्ष का खड़े होकर सम्मान नही कर पाया।

=> वहा उपस्थित लोगो ने दक्ष को समझाया देखो यह तुम्हारा दामाद है, इसलिए उल्टा सीधा मत बोलो, इतना सुनते ही दक्ष को तो और अधिक क्रोध आ गया।

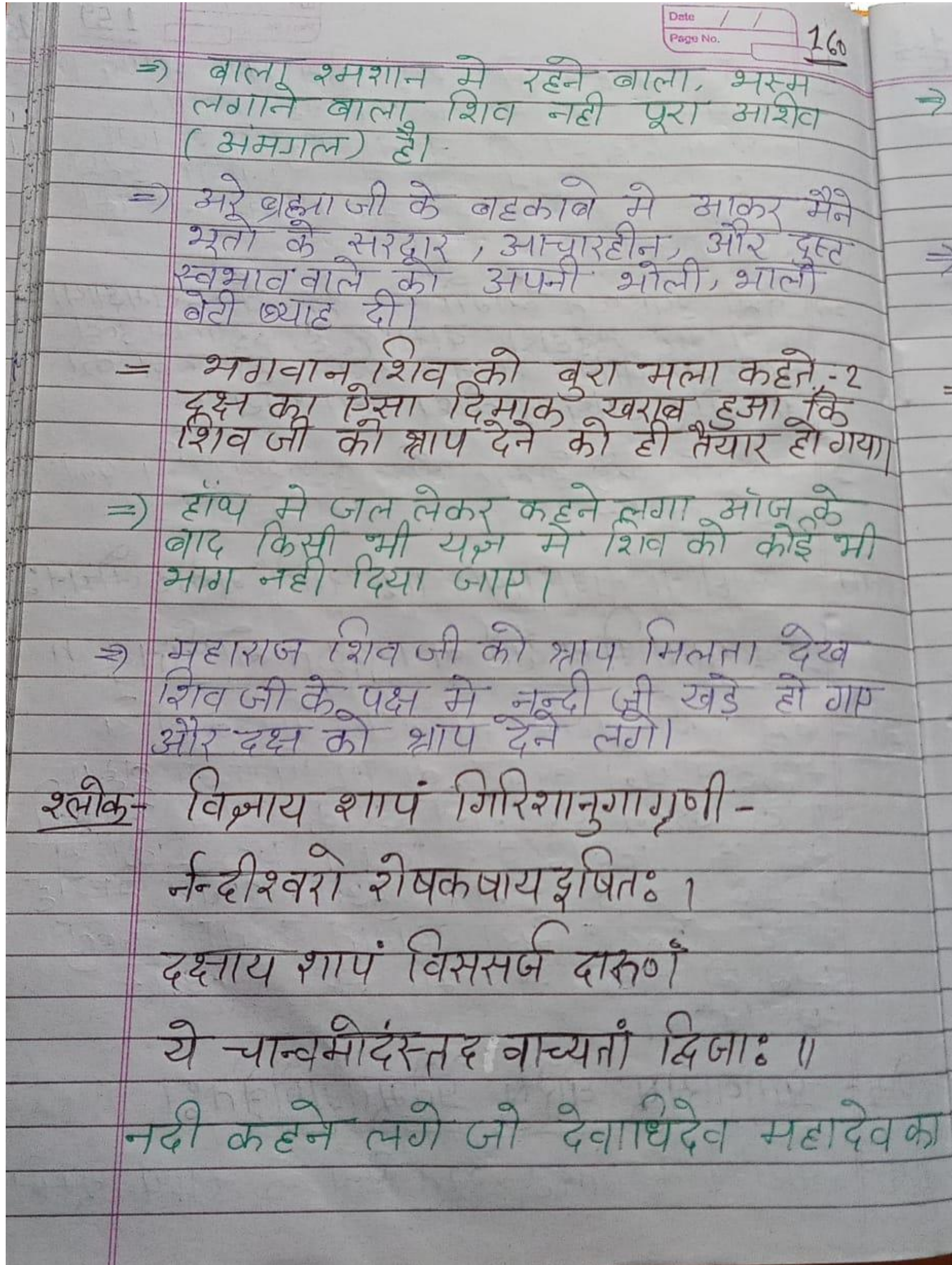
=> सभा मे खड़े होकर और उच्चस्वर मे दक्ष कहने लगे -

श्लोक- गृहीत्वा मृगशावाक्ष्याः पाणिं मर्कटलोचनः।
प्रत्युत्थानाभिवादार्हे वाचाप्यकृत नोचितम् ॥

अर्थ- कहा मेरी मृगनयनी बेटी, और कहा ये मर्कटलोचन बन्दर, वो तो पिता जी ब्रह्मा जी के कहने पर मैने इसके साथ अपनी बेटी का विवाह कर दिया। एक प्रकार से यह मेरे पुत्र के समान हुआ, उचित तो यह था कि उठकर मेरा स्वागत करता, परन्तु इसने तो वाणी से भी मेरा सत्कार नही किया।

श्लोक- प्रेतावासेषु घोरेषु प्रेतैर्भूतगणैर्वृतः।

अर्थ- पागलो की तरह भूत प्रेतो के साथ घूमने



160

=> बाला श्मशान मे रहने वाला, भस्म लगाने वाला शिव नही पूरा अशिव (अमंगल) है।

=> अरे ब्रह्मा जी के बहकावे मे आकर मैंने भूतो के सरदार, आचारहीन, और दुष्ट स्वभाव वाले को अपनी भोली, भाली बेटी ब्याह दी।

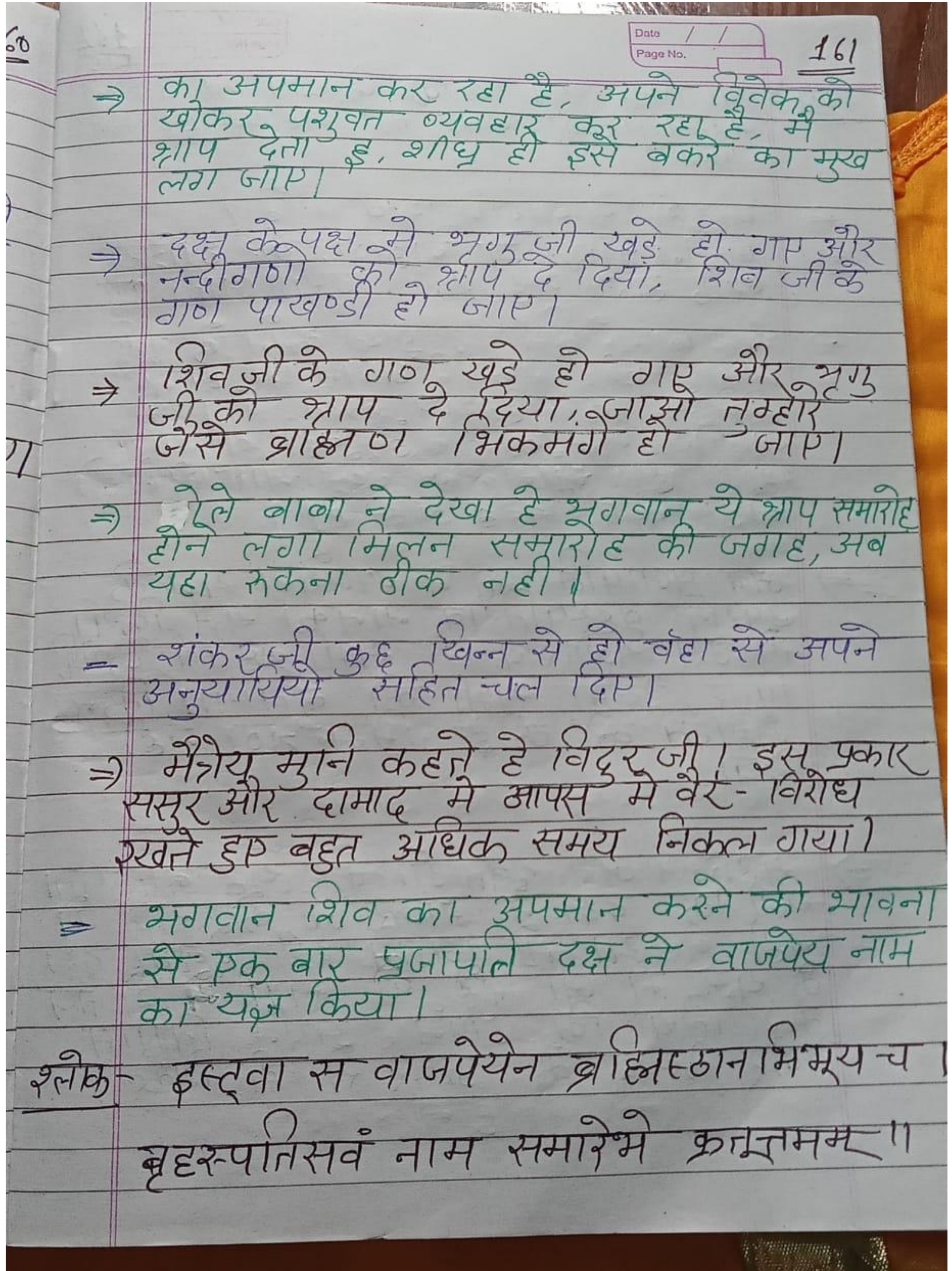
= भगवान शिव को बुरा भला कहते-2 दक्ष का ऐसा दिमाक खराब हुआ कि शिव जी को श्राप देने को ही तैयार हो गया।

=> हाँथ मे जल लेकर कहने लगा आज के बाद किसी भी यज्ञ मे शिव को कोई भी भाग नही दिया जाए।

=> महाराज शिव जी को श्राप मिलता देख शिव जी के पक्ष मे नन्दी जी खड़े हो गए और दक्ष को श्राप देने लगे।

श्लोक- विज्ञाय शापं गिरिशानुगाग्रणी-
नन्दीश्वरो रोषकषायदूषितः।
दक्षाय शापं विससर्ज दारुणं
ये चान्वमोदंस्तद्वाच्यतां द्विजाः॥

नंदी कहने लगे जो देवाधिदेव महादेव का



161

⇒ का अपमान कर रहा है, अपने विवेक को खोकर पशुवत व्यवहार कर रहा है, मैं श्राप देता हूं, शीघ्र ही इसे बकरे का मुख लग जाए।

⇒ दक्ष के पक्ष से भृगु जी खड़े हो गए और नन्दीगणों को श्राप दे दिया, शिव जी के गण पाखण्डी हो जाए।

⇒ शिव जी के गण खड़े हो गए और भृगु जी को श्राप दे दिया, जाओ तुम्हारे जैसे ब्राह्मण भिकमंगे हो जाए।

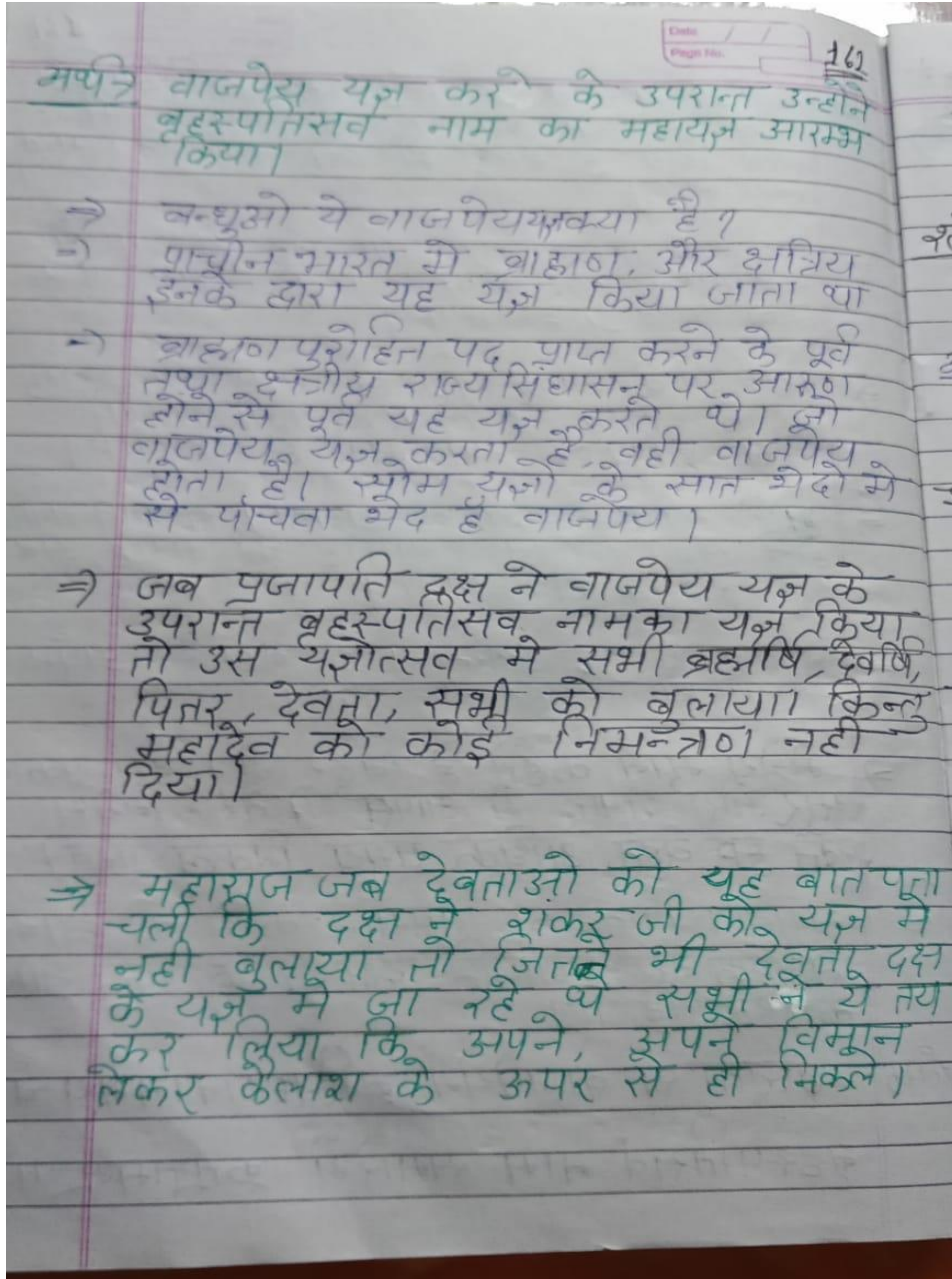
⇒ भोले बाबा ने देखा है भगवान ये श्राप समारोह होने लगा मिलन समारोह की जगह, अब यहा रुकना ठीक नही।

⇒ शंकर जी कुछ खिन्न से हो वहा से अपने अनुयायियो सहित चल दिए।

⇒ मैत्रेय मुनि कहते हे विदुर जी! इस प्रकार ससुर और दामाद मे आपस मे वैर-विरोध रखते हुए बहुत अधिक समय निकल गया।

⇒ भगवान शिव का अपमान करने की भावना से एक बार प्रजापति दक्ष ने वाजपेय नाम का यज्ञ किया।

श्लोक- इष्ट्वा स वाजपेयेन ब्रह्मिष्ठानभिभूय च।
बृहस्पतिसवं नाम समारेभे क्रतूत्तमम्॥



162

मध्ये वाजपेय यज्ञ करने के उपरान्त उन्होंने बृहस्पतिसव नाम का महायज्ञ आरम्भ किया।

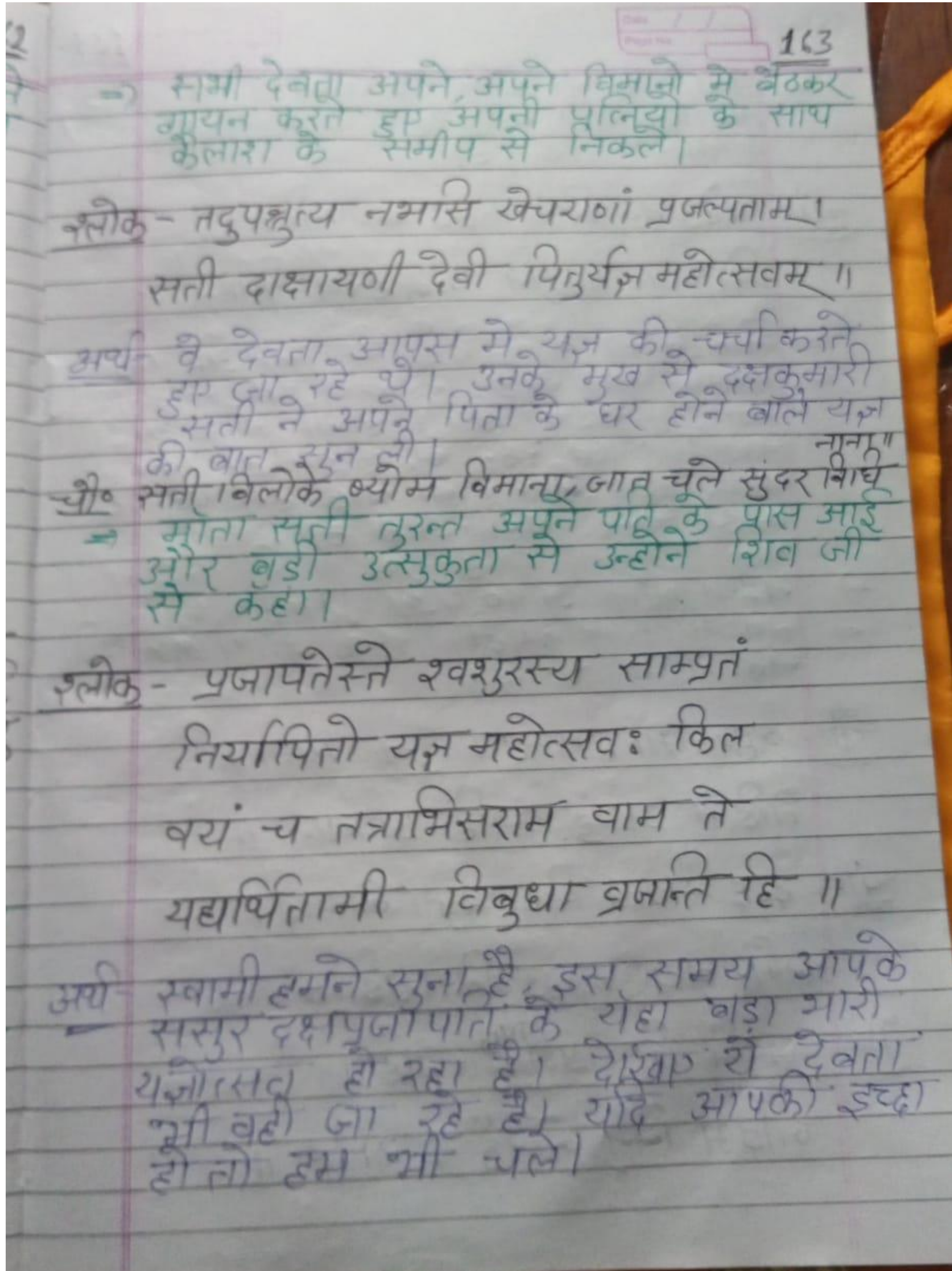
⇒ बन्धुओ ये वाजपेय यज्ञ क्या है?

⇒ प्राचीन भारत मे ब्राह्मण और क्षत्रिय इनके द्वारा यह यज्ञ किया जाता था

⇒ ब्राह्मण पुरोहित पद प्राप्त करने के पूर्व तथा क्षत्रीय राज्य सिंहासन पर आरूढ़ होने से पूर्व यह यज्ञ करते थे। जो वाजपेय यज्ञ करता है, वही वाजपेय होता है। सोम यज्ञो के सात भेदो मे से पांचवा भेद है वाजपेय।

⇒ जब प्रजापति दक्ष ने वाजपेय यज्ञ के उपरान्त बृहस्पतिसव नामका यज्ञ किया, तो उस यज्ञोत्सव मे सभी ब्रह्मर्षि, देवर्षि, पितर, देवता, सभी को बुलाया। किन्तु महादेव को कोई निमन्त्रण नही दिया।

⇒ महाराज जब देवताओ को यह बात पता चली कि दक्ष ने शंकर जी को यज्ञ मे नही बुलाया तो जितने भी देवता दक्ष के यज्ञ मे जा रहे थे सभी ने ये तय कर लिया कि अपने, अपने विमान लेकर कैलाश के ऊपर से ही निकले।



163

⇒ सभी देवता अपने, अपने विमानो मे बैठकर गायन करते हुए अपनी पत्नियो के साथ कैलाश के समीप से निकले।

श्लोक- तदुपश्रुत्य नभसि खेचराणां प्रजल्पताम्।
सती दाक्षायणी देवी पितुर्यज्ञ महोत्सवम्॥

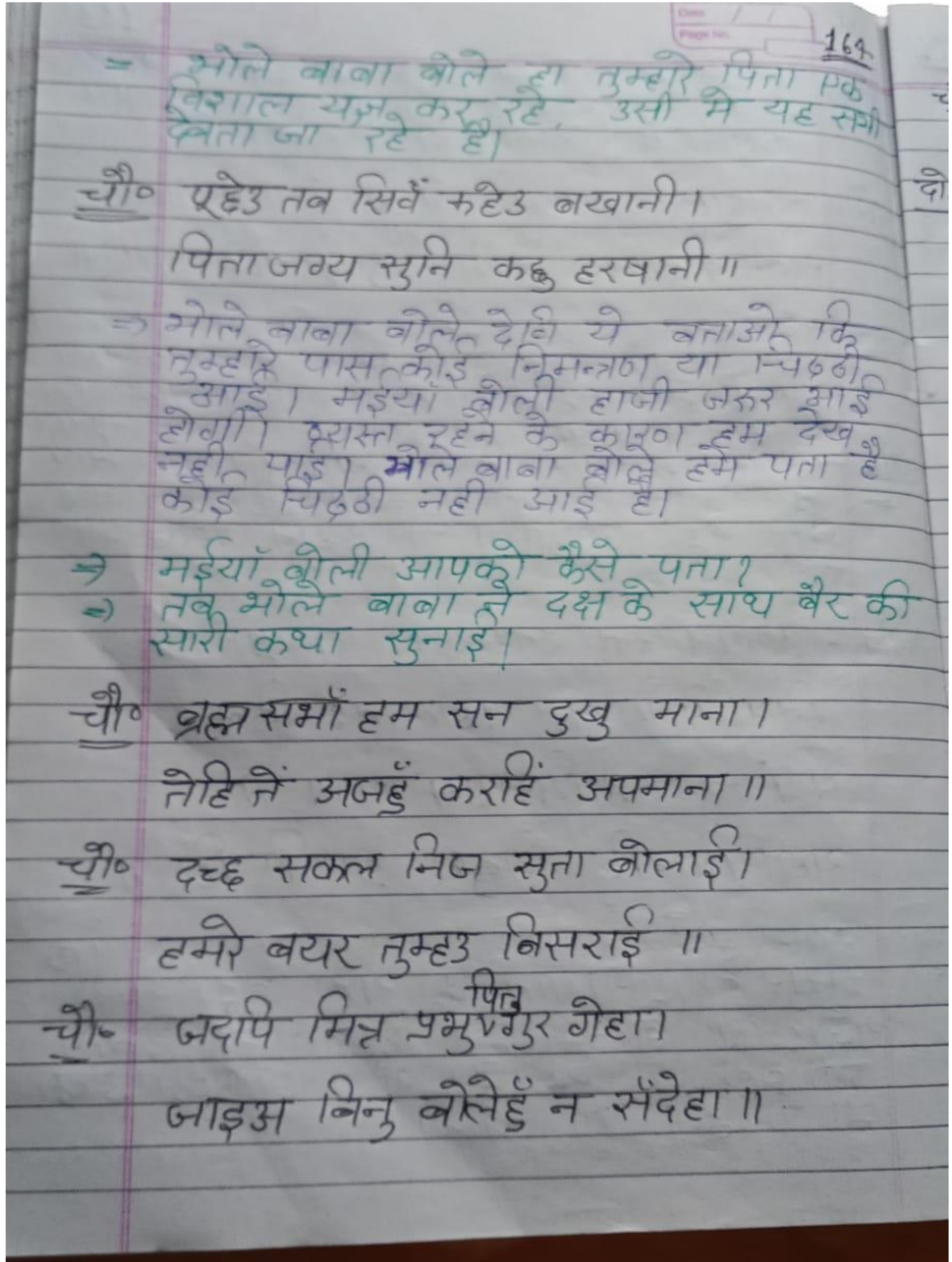
अर्थ- वे देवता आपस मे यज्ञ की चर्चा करते हुए जा रहे थे। उनके मुख से दक्षकुमारी सती ने अपने पिता के घर होने वाले यज्ञ की बात सुन ली।

चौ० सती बिलोके ब्योम बिमाना, जात चले सुंदर बिधि नाना॥

⇒ माता सती तुरन्त अपने पति के पास आई और बडी उत्सुकता से उन्होने शिव जी से कहा।

श्लोक- प्रजापतेस्ते श्वशुरस्य साम्प्रतं
निर्यापितो यज्ञ महोत्सवः किल
वयं च तत्राभिसराम वाम ते
यद्यर्थितामी विबुधा व्रजन्ति हि॥

अर्थ- स्वामी हमने सुना है, इस समय आपके ससुर दक्षप्रजापति के यहा बड़ा भारी यज्ञोत्सव हो रहा है। देखिए ये देवता भी वही जा रहे है, यदि आपकी इच्छा हो तो हम भी चले।



164

=> भोले बाबा बोले हाँ तुम्हारे पिता एक विशाल यज्ञ कर रहे, उसी मे यह सभी देवता जा रहे है।

चौ० पूछेउ तब सिवँ कहेउ बखानी।
पिता जग्य सुनि कछु हरषानी॥

=> भोले बाबा बोले देवि ये बताओ कि तुम्हारे पास कोई निमन्त्रण या चिठ्ठी आई। मईया बोली हाजी जरूर आई होगी। व्यस्त रहने के कारण हम देख नही पाई। भोले बाबा बोले हमे पता है कोई चिठ्ठी नही आई है।

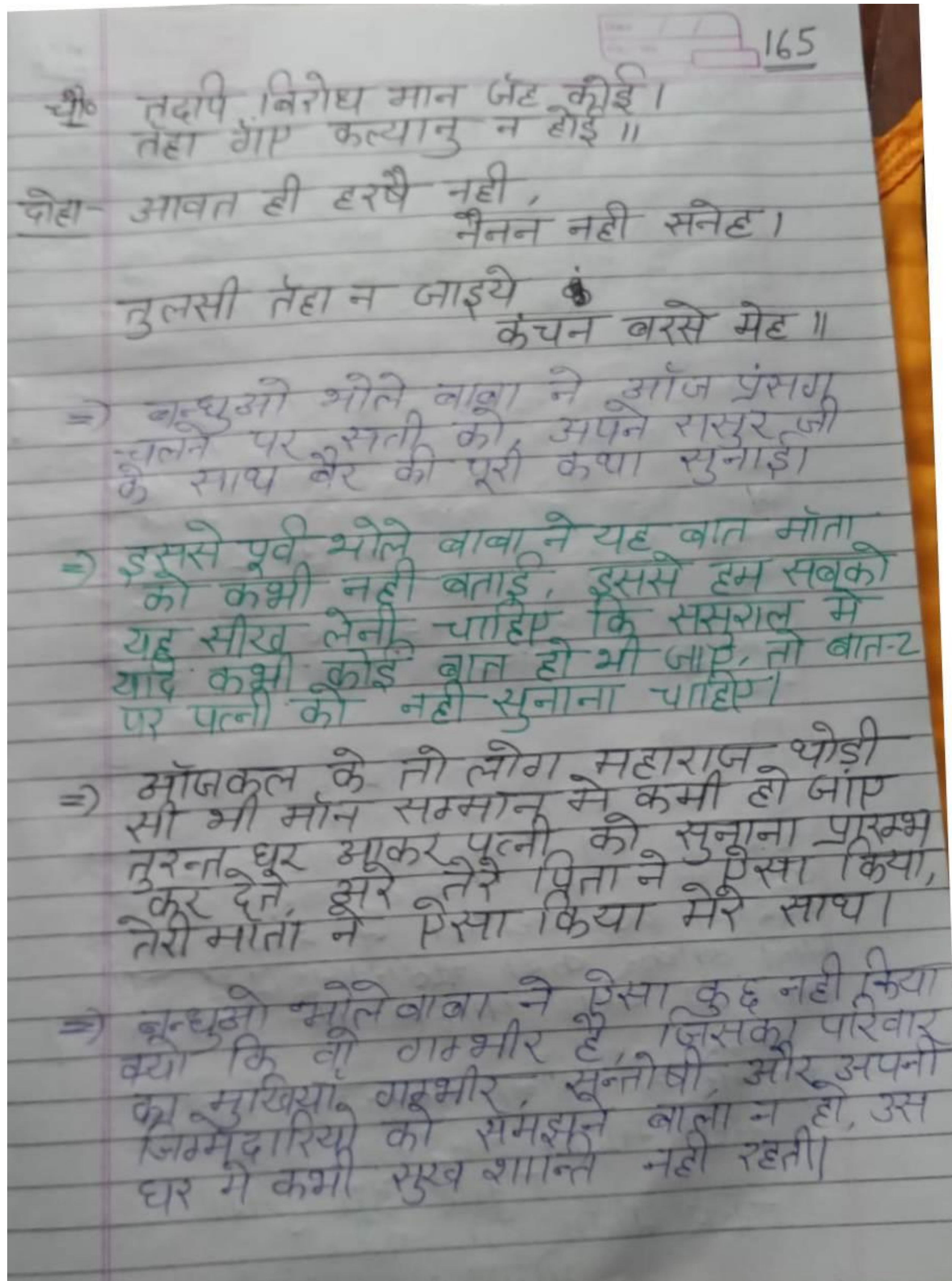
=> मईयाँ बोली आपको कैसे पता?

=> तब भोले बाबा ने दक्ष के साथ बैर की सारी कथा सुनाई।

चौ० ब्रह्मसभाँ हम सन दुखु माना।
तेहि तें अजहुँ करहिं अपमाना॥

चौ० दच्छ सकल निज सुता बोलाईं।
हमरे बयर तुम्हउ बिसराईं॥

चौ० जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा।
जाइअ बिनु बोलेहुँ न सँदेहा॥



165

चौ० तदपि बिरोध मान जँह कोई।
तहा गए कल्यानु न होई॥

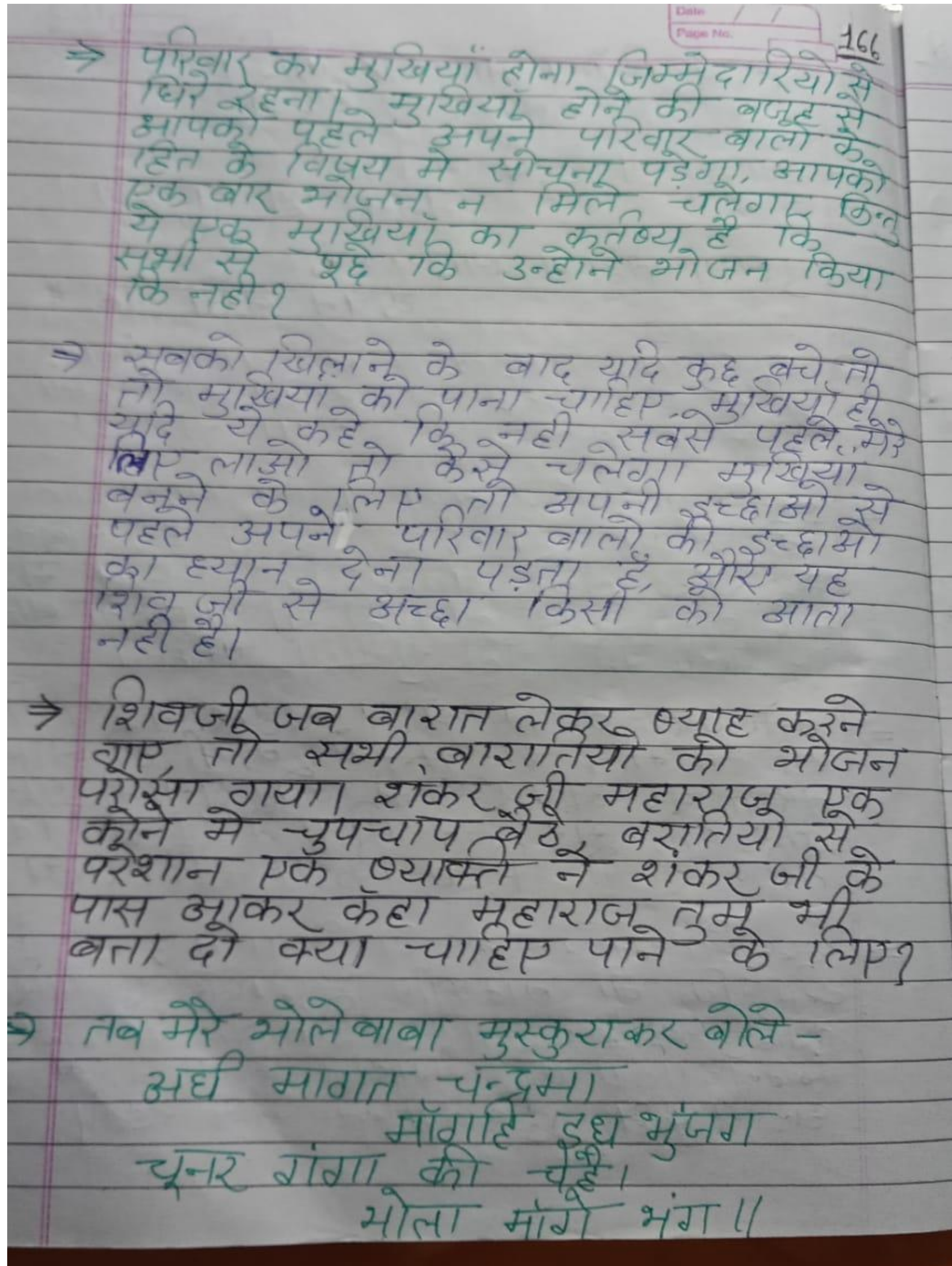
दोहा- आवत ही हरषै नही,
नैनन नही सनेह।
तुलसी तेहा न जाइये
कंचन बरसे मेह॥

=> बन्धुओ भोले बाबा ने आज प्रसंग चलने पर सती को अपने ससुर जी के साथ बैर की पूरी कथा सुनाई।

=> इससे पूर्व भोले बाबा ने यह बात माता को कभी नही बताई, इससे हम सबको यह सीख लेनी चाहिए कि ससुराल मे यदि कभी कोई बात हो भी जाए, तो बात-2 पर पत्नी को नही सुनाना चाहिए।

=> आजकल के तो लोग महाराज थोड़ी सी भी मान सम्मान मे कमी हो जाए तुरन्त घर आकर पत्नी को सुनाना प्रारम्भ कर देते, अरे तेरे पिता ने ऐसा किया, तेरी माता ने ऐसा किया मेरे साथ।

=> बन्धुओ भोले बाबा ने ऐसा कुछ नही किया क्यो कि वो गम्भीर है, जिसका परिवार का मुखिया गम्भीर, सन्तोषी और अपनी जिम्मेदारियो को समझने वाला न हो, उस घर मे कभी सुख शान्ति नही रहती।


166

⇒ परिवार का मुखियां होना जिम्मेदारियो से घिरे रहना। मुखिया होने की वजह से आपको पहले अपने परिवार वालो के हित के विषय मे सोचना पड़ेगा, आपको एक बार भोजन न मिले चलेगा किन्तु ये एक मुखियां का कर्तब्य है कि सभी से पूछे कि उन्होने भोजन किया कि नही?

⇒ सबको खिलाने के बाद यदि कुछ बचे तो तो मुखिया को पाना चाहिए, मुखियां ही यदि ये कहे कि नही सबसे पहले मेरे लिए लाओ तो कैसे चलेगा मुखिया बनने के लिए तो अपनी इच्छाओ से पहले अपने परिवार वालो की इच्छाओ का ध्यान देना पड़ता है, और यह शिव जी से अच्छा किसी को आता नही है।

⇒ शिवजी जब बारात लेकर ब्याह करने गए, तो सभी बारातियो को भोजन परोसा गया। शंकर जी महाराज एक कोने मे चुपचाप बैठे, बरातियो से परेशान एक ब्यक्ति ने शंकर जी के पास आकर कहा महाराज तुम भी बता दो क्या चाहिए पाने के लिए?

⇒ तब मेरे भोलेबाबा मुस्कुराकर बोले -

अर्घ मागत चन्द्रमा
मॉगहि दूध भुजंग
चूनर गंगा की चहै।
भोला मॉगे भंग ॥

166

Date / /
Page No. 167

= भोले बाबा मुस्कुराकर बोले हम अकेले नही तीन लोग और साथ मे है, पहले उन तीनो के भोजन की व्यवस्था करो इसके उपरान्त कुछ बचे तो हमारे लिए ले आना।

=> वह व्यक्ति बोला हमे तो आप अकेले ही दिखाई दे रहे, बाकी तीन कहा है।

= शिवजी बोले तीनो मेरे साथ है।

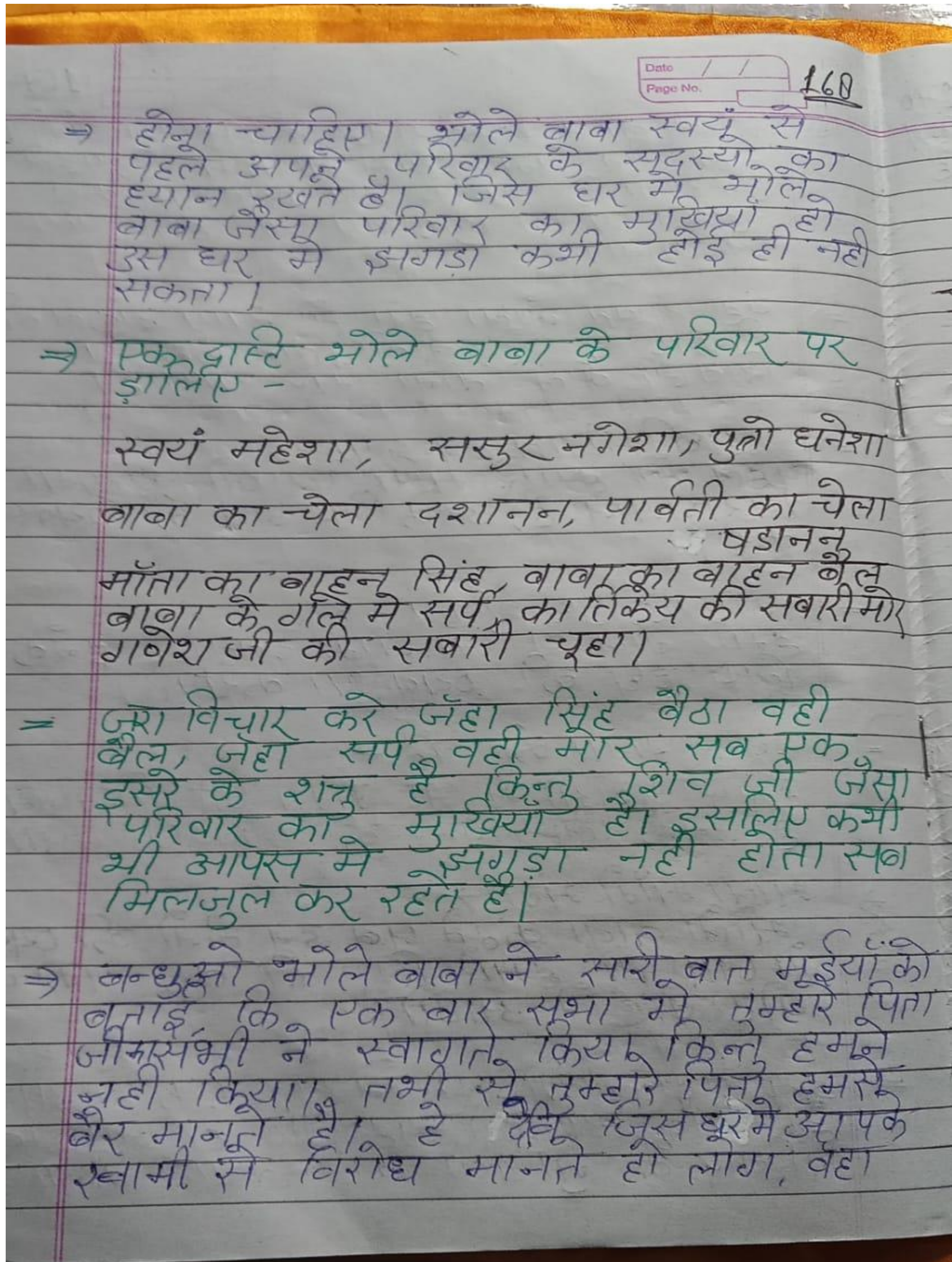
=> अर्घ मॉगत चन्द्रमा –
पहले तो हमारे माथे पर जो चन्द्रमा विराजमान है, उनके लिए अर्घ की व्यवस्था करो।

=> मॉगहि दूध भुजंगा –
हमारे गले मे जो नाग देवता है इनके लिए दूध की व्यवस्था करो।

=> चूनर गंगा की चहै –
हमारे जटाओ मे जो गंगा जी विराजमान है उनके लिए चूनर की व्यवस्था करो।

=> भोला मॉगे भंग –
=> भोले बाबा कहते जब इन तीनो की व्यवस्था हो जाए तो हमारे लिए तो बस चकाचक घोट कर ले आओ।

=> इस दृष्टान्त को सुनाने का एक ही अभिप्राय है, ताकि आपको यह ज्ञात हो जाए कि परिवार के मुखियाँ का स्वभाव कैसा



168

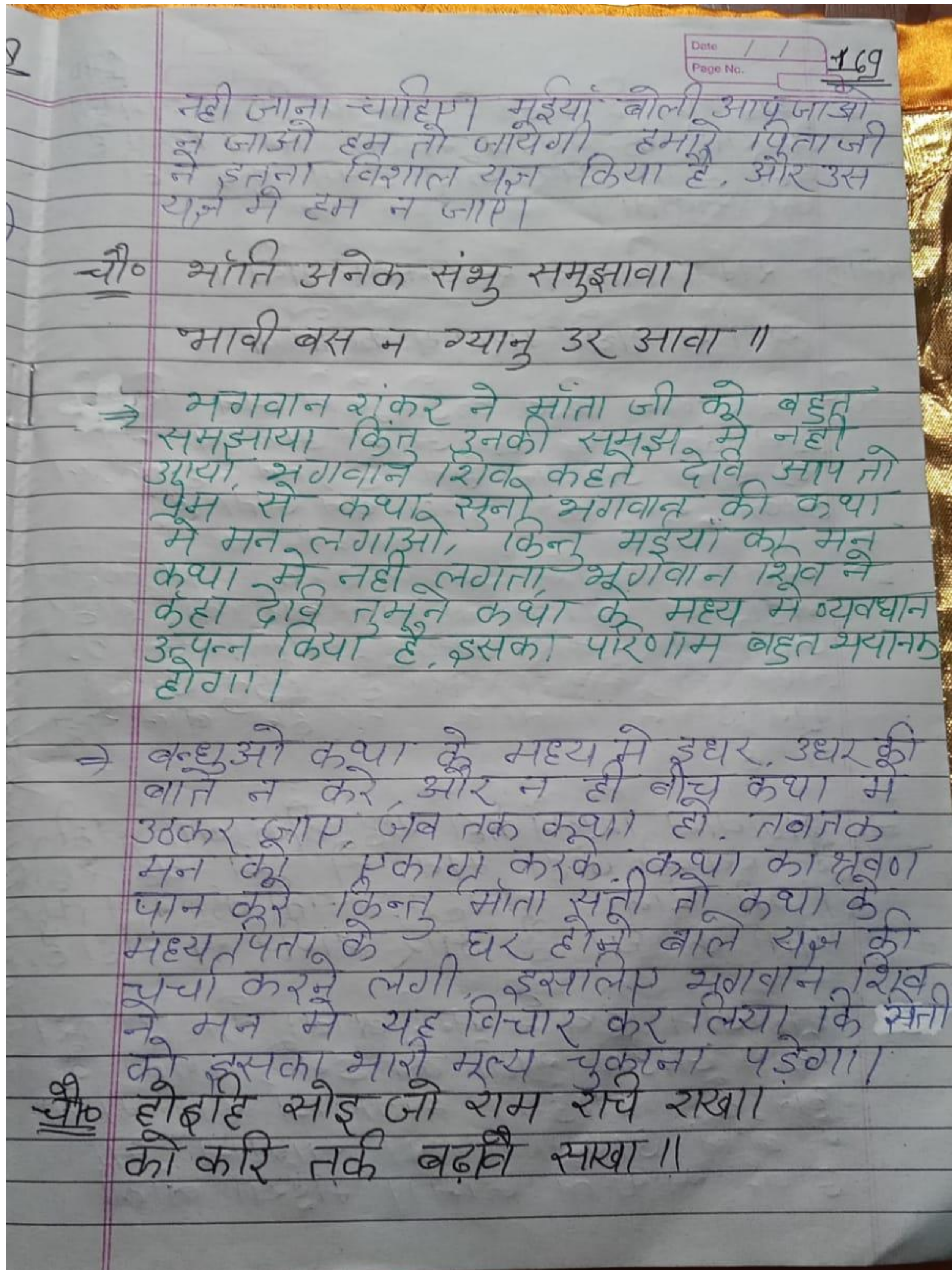
⇒ होना चाहिए। भोले बाबा स्वयं से पहले अपने परिवार के सदस्यों का ध्यान रखते है। जिस घर मे भोले बाबा जैसा परिवार का मुखिया हो उस घर मे झगड़ा कभी होई ही नही सकता।

⇒ एक दृष्टि भोले बाबा के परिवार पर डालिए -

स्वयं महेशा, ससुर नगेशा, पुत्र घनेशा
बाबा का चेला दशानन, पार्वती का चेला षडानन
मॉता का वाहन सिंह, बाबा का वाहन बैल
बाबा के गले मे सर्प, कार्तिकेय की सवारी मोर
गणेश जी की सवारी चूहा।

= जरा विचार करे जहां सिंह बैठा वही बैल, जहां सर्प वही मोर सब एक दूसरे के शत्रु है किन्तु शिव जी जैसा परिवार का मुखिया है इसलिए कभी भी आपस मे झगड़ा नही होता सब मिलजुल कर रहते है।

⇒ बन्धुओ भोले बाबा ने सारी बात मईयां को बताई कि एक बार सभा मे तुम्हारे पिता जी को सभी ने स्वागत किया किन्तु हमने नही किया। तभी से तुम्हारे पिता हमसे बैर मानते है। हे देवि जिस घर मे आपके स्वामी से विरोध मानते हो लोग, वहां



Date / /
Page No. 169

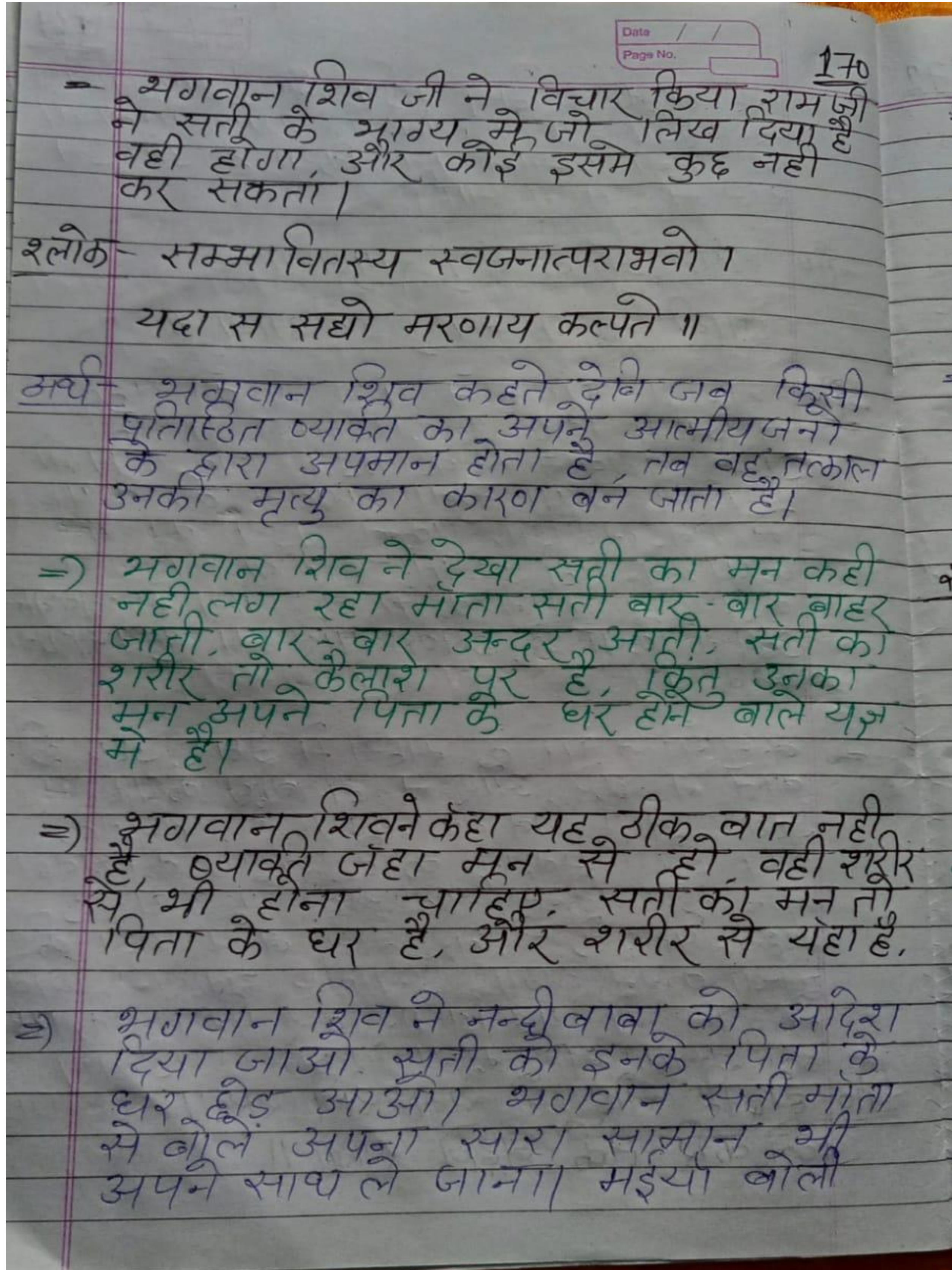
नही जाना चाहिए। मईया बोली आप जाओ न जाओ हम तो जायेगी, हमारे पिता जी ने इतना विशाल यज्ञ किया है, और उस यज्ञ मे हम न जाए।

चौ० भाँति अनेक संभु समुझावा।
भावी बस न ग्यानु उर आवा ॥

⇒ भगवान शंकर ने माँता जी को बहुत समझाया किंतु उनकी समझ मे नही आया, भगवान शिव कहते देवि आप तो प्रेम से कथा सुनो भगवान की कथा मे मन लगाओ, किन्तु मइया का मन कथा मे नही लगता, भगवान शिव ने कहा देवि तुमने कथा के मध्य मे व्यवधान उत्पन्न किया है, इसका परिणाम बहुत भयानक होगा।

⇒ बन्धुओ कथा के मध्य मे इधर, उधर की बाते न करे, और न ही बीच कथा मे उठकर जाए, जब तक कथा हो, तबतक मन को एकाग्र करके, कथा का श्रवण पान करे किन्तु माता सती तो कथा के मध्य पिता के घर होने वाले यज्ञ की चर्चा करने लगी, इसलिए भगवान शिव ने मन मे यह विचार कर लिया कि सती को इसका भारी मूल्य चुकाना पड़ेगा।

चौ० होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा ॥



170

- भगवान शिव जी ने विचार किया राम जी ने सती के भाग्य में जो लिख दिया है वही होगा, और कोई इसमे कुछ नही कर सकता।

श्लोक- सम्भावितस्य स्वजनात्पराभवो ।
यदा स सद्यो मरणाय कल्पते ॥

अर्थ- भगवान शिव कहते देवि जब किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति का अपने आत्मीयजनों के द्वारा अपमान होता है, तब वह तत्काल उनकी मृत्यु का कारण बन जाता है।

=) भगवान शिव ने देखा सती का मन कही नही लग रहा माता सती बार-बार बाहर जाती, बार-बार अन्दर आती, सती का शरीर तो कैलाश पर है, किंतु उनका मन अपने पिता के घर होने वाले यज्ञ मे है।

=) भगवान शिवने कहा यह ठीक बात नही है, व्यक्ति जहा मन से हो वही शरीर से भी होना चाहिए, सती का मन तो पिता के घर है, और शरीर से यहा है.

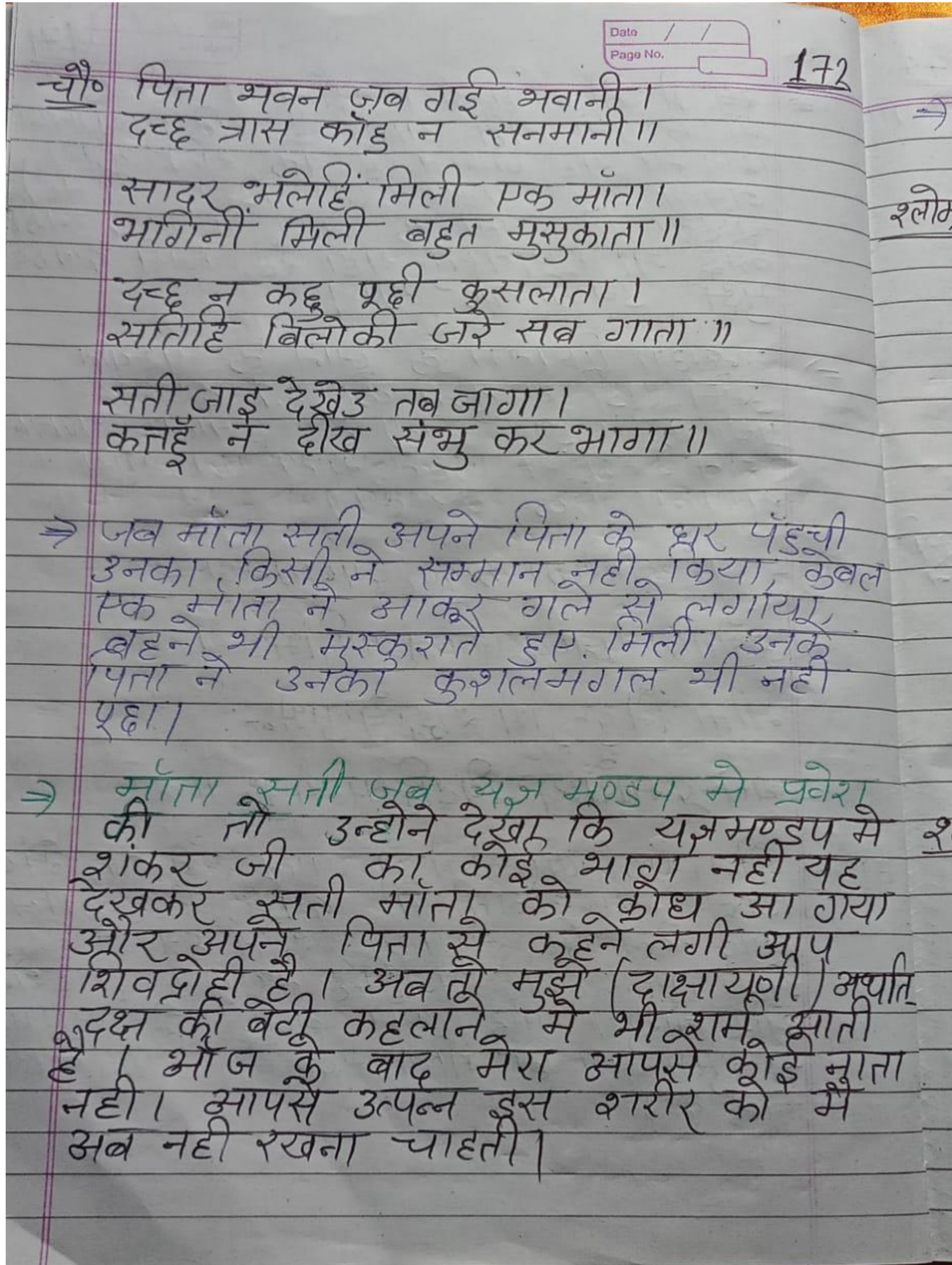
=) भगवान शिव ने नन्दी बाबा को आदेश दिया जाओ सती को इनके पिता के घर छोड़ आओ। भगवान सती माता से बोले अपना सारा सामान भी अपने साथ ले जाना। मईया बोली

=> स्वामी कौन सा वहा बसने जा रही है, लौटकर तो यही आना है, किन्तु भगवान शिव तो यह जानते है, कि सती को अपना देह त्याग करना पड़ेगा, मै नही चाहता कि सती के जाने के बाद उनकी कोई भी प्रियवस्तु यहा रहे, जिसे देखकर मुझे उनकी याद आए।

=> बन्धुओ प्रियतम के जाने के पश्चात उनसे जुड़ी वस्तुओ को भी देखकर प्रेमी को पीड़ा होती है। इसलिए भगवान शिव नन्दी से कहते माता का सारा सामान पैक कर लो।

श्लोक- तां सारिका कन्दुक दर्पणाम्बुज -
श्वेतात पत्रव्य जनस्त्र गादिभिः ।
गीतायनै र्दुन्दुभि शङ्ख वेणुभिः-
वृषेन्द्रमारोप्य विटङ्किता ययुः ॥

अर्थ- मैना पक्षी जो सती ने पाल रखे थे, गेंद जिससे मा खेलती थी, दर्पण, और कमल आदि खेल की सामग्री, श्वेत छत्र, चंवर, और माला आदि राजचिन्ह तथा दुन्दुभि शंख और बॉसुरी आदि गाने बजाने के सामानो से सुसज्जित हो माता नदी के ऊपर बैठकर चल दी।



172

चौ० पिता भवन जब गई भवानी।
दच्छ त्रास कोउ न सनमानी॥

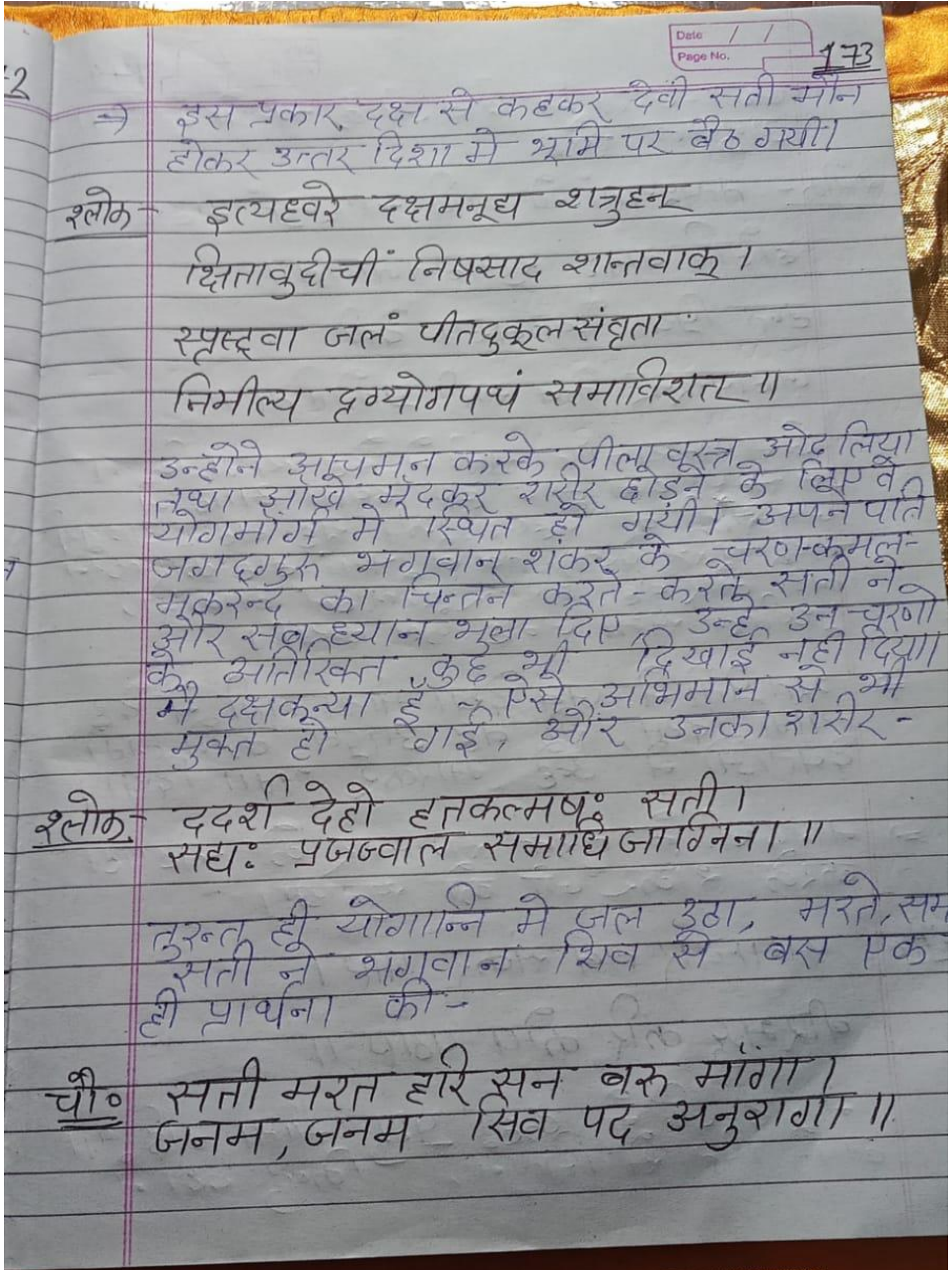
सादर भलेहिं मिली एक माता।
भगिनीं मिलीं बहुत मुसुकाता॥

दच्छ न कछु पूछी कुसलाता।
सतिहि बिलोकी जरे सब गाता॥

सती जाइ देखेउ तब जागा।
कतहुँ न दीख संभु कर भागा॥

⇒ जब माँता सती अपने पिता के घर पंहुची उनका किसी ने सम्मान नही किया, केवल एक माता ने आकर गले से लगाया, बहनें भी मुस्कुराते हुए मिली। उनके पिता ने उनका कुशलमंगल भी नही पूछा।

⇒ माँता सती जब यज्ञ मण्डप मे प्रवेश की तो उन्होने देखा कि यज्ञमण्डप मे शंकर जी का कोई भाग नही यह देखकर सती माँता को क्रोध आ गया और अपने पिता से कहने लगी आप शिवद्रोही है। अब तो मुझे (दाक्षायणी) अर्थात दक्ष की बेटी कहलाने मे भी शर्म आती है। आज के बाद मेरा आपसे कोई नाता नही। आपसे उत्पन्न इस शरीर को मै अब नही रखना चाहती।



173

→ इस प्रकार दक्ष से कहकर देवी सती मौन होकर उत्तर दिशा मे भूमि पर बैठ गयी।

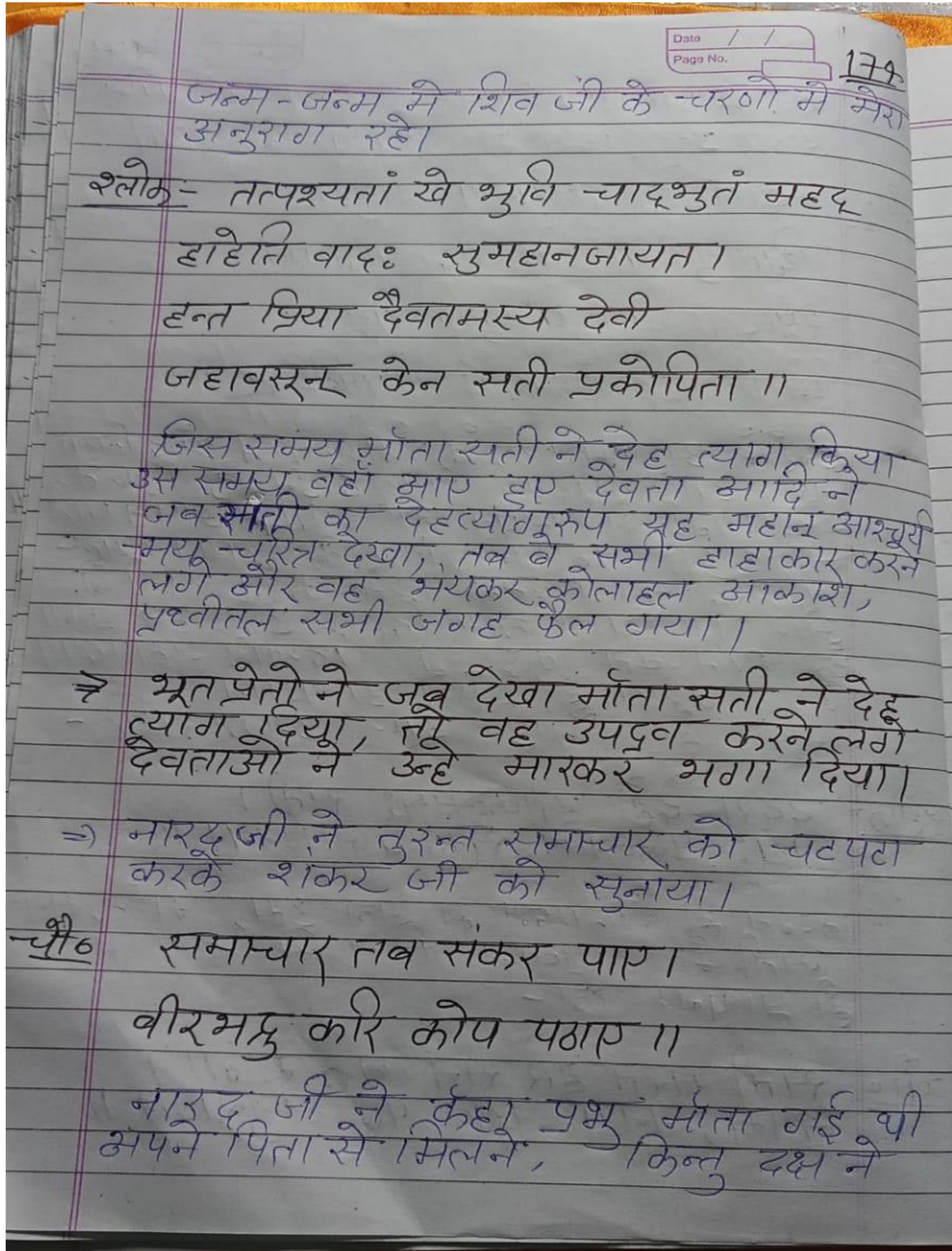
श्लोक - इत्यध्वरे दक्षमनूद्य शत्रुहन्
क्षितावुदीचीं निषसाद शान्तवाक् ।
स्पृष्ट्वा जलं पीतदुकूलसंवृता
निमील्य दृग्योगपथं समाविशत् ॥

उन्होने आचमन करके पीला वस्त्र ओढ लिया तथा आँखे मूँदकर शरीर छोड़ने के लिए वे योगमार्ग मे स्थित हो गयी। अपने पति जगद्गुरु भगवान शंकर के चरण-कमल-मकरन्द का चिन्तन करते-करते सती ने और सब ध्यान भुला दिए उन्हे उन चरणो के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नही दिया। मै दक्षकन्या हूँ ~ ऐसे अभिमान से भी मुक्त हो गई, और उनका शरीर -

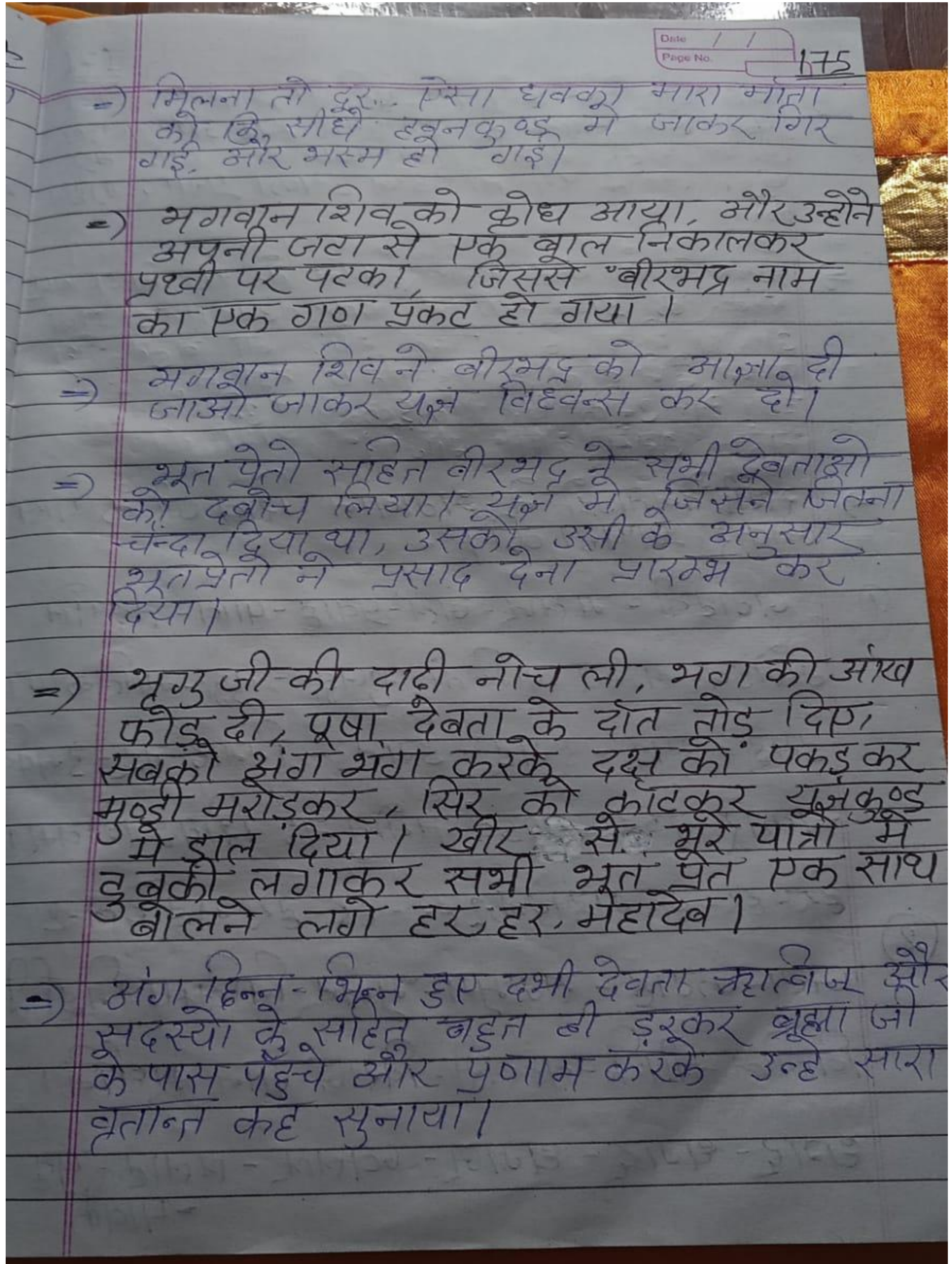
श्लोक - ददर्श देहो हतकल्मषः सती।
सद्यः प्रजज्वाल समाधिजाग्निना ॥

तुरन्त ही योगाग्नि मे जल उठा, मरते समय सती ने भगवान शिव से बस एक ही प्रार्थना की -

चौ० सती मरत हरि सन बरु मांगा।
जनम, जनम सिव पद अनुरागा ॥



174
जन्म-जन्म मे शिव जी के चरणो मे मेरा अनुराग रहे।
श्लोक- तत्पश्यतां खे भुवि चाद्भुतं महद्
हाहेति वादः सुमहानजायत।
हन्त प्रिया दैवतमस्य देवी
जहावसून् केन सती प्रकोपिता ॥
जिस समय माता सती ने देह त्याग किया उस समय वहां आए हुए देवता आदि ने जब सती का देहत्यागरूप यह महान् आश्चर्यमय चरित्र देखा, तब वे सभी हाहाकार करने लगे और वह भयंकर कोलाहल आकाश, पृथ्वीतल सभी जगह फैल गया।
⇒ भूत प्रेतो ने जब देखा माता सती ने देह त्याग दिया, तो वह उपद्रव करने लगे देवताओ ने उन्हे मारकर भगा दिया।
⇒ नारद जी ने तुरन्त समाचार को चटपटा करके शंकर जी को सुनाया।
चौ० समाचार तब संकर पाए।
बीरभद्रु करि कोप पठाए ॥
नारद जी ने कहा प्रभु माता गई थी अपने पिता से मिलने, किन्तु दक्ष ने



Date / /
Page No. 175

=> मिलना तो दूर ऐसा धक्का मारा माता को कि सीधी हवनकुण्ड में जाकर गिर गई और भस्म हो गई।

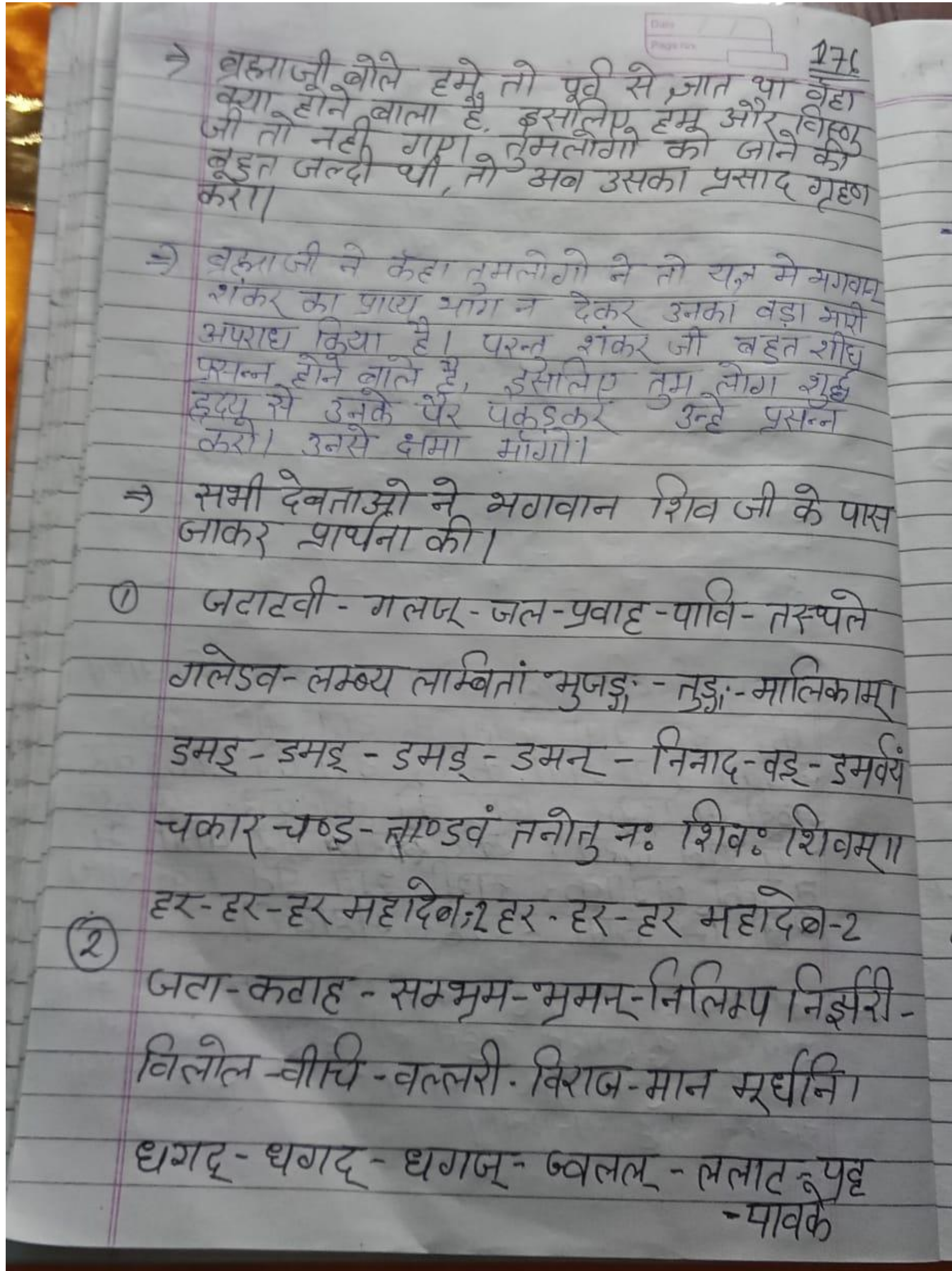
=> भगवान शिव को क्रोध आया, और उन्होंने अपनी जटा से एक बाल निकालकर पृथ्वी पर पटका, जिससे "बीरभद्र नाम का एक गण प्रकट हो गया।

=> भगवान शिव ने बीरभद्र को आज्ञा दी जाओ जाकर यज्ञ विध्वंस कर दो।

=> भूत प्रेतो सहित बीरभद्र ने सभी देवताओं को दबोच लिया। यज्ञ में जिसने जितना चन्दा दिया था, उसको उसी के अनुसार भूतप्रेतो ने प्रसाद देना प्रारम्भ कर दिया।

=> भृगु जी की दाढ़ी नोच ली, भग की आंख फोड़ दी, पूषा देवता के दांत तोड़ दिए, सबको अंग भंग करके दक्ष को पकड़ कर मुण्डी मरोड़कर, सिर को काटकर यज्ञकुण्ड में डाल दिया। खीर से भरे पात्रों में डुबुकी लगाकर सभी भूत प्रेत एक साथ बोलने लगे हर हर महादेव।

=> अंग छिन्न-भिन्न हुए सभी देवता ऋत्विज और सदस्यों के सहित बहुत ही डरकर ब्रह्मा जी के पास पहुँचे और प्रणाम करके उन्हें सारा वृतान्त कह सुनाया।



176

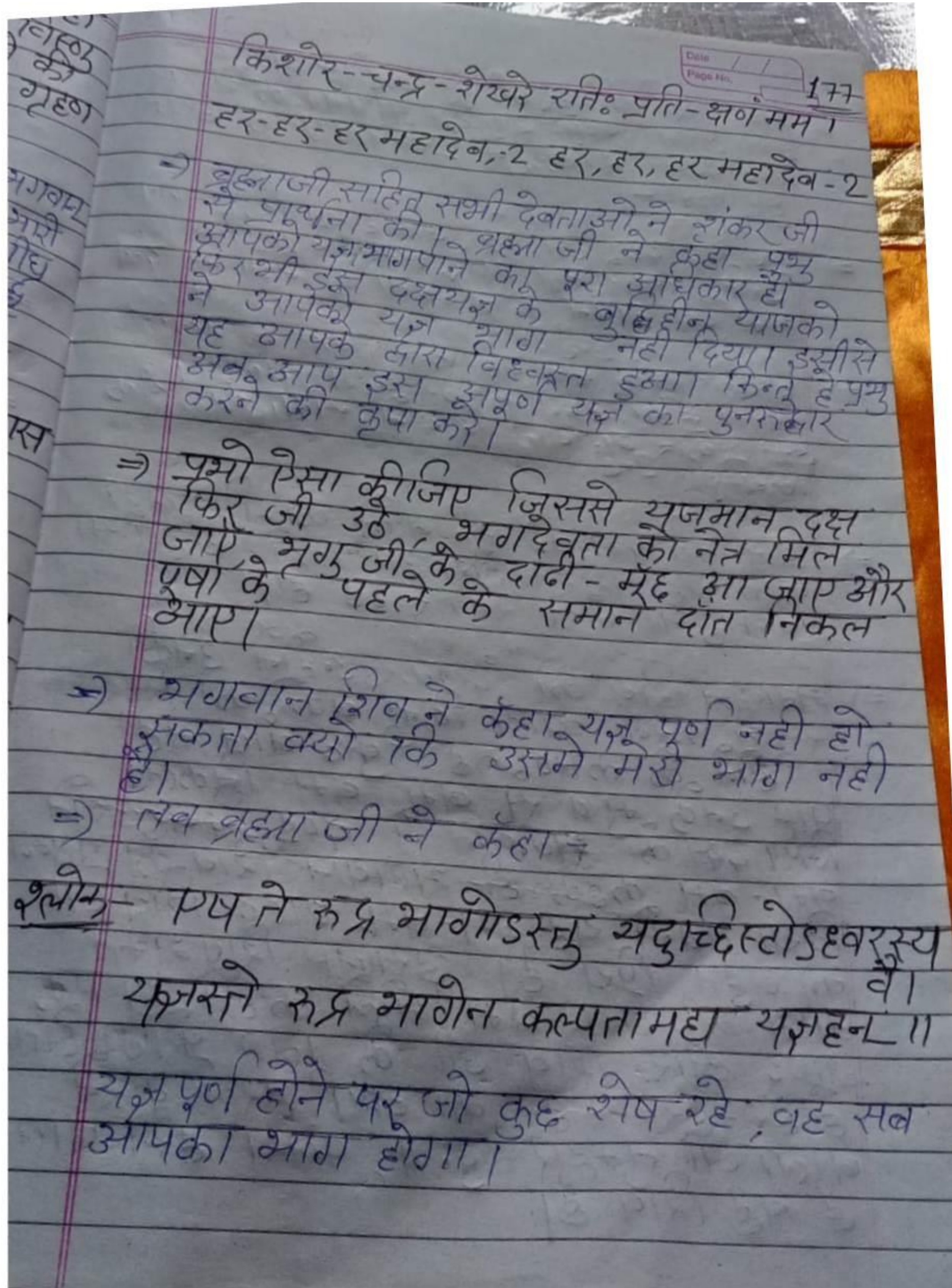
⇒ ब्रह्माजी बोले हमे तो पूर्व से ज्ञात था वहा क्या होने वाला है, इसलिए हम और विष्णु जी तो नही गए। तुमलोगो को जाने की बहुत जल्दी थी, तो अब उसका प्रसाद ग्रहण करो।

⇒ ब्रह्माजी ने कहा तुमलोगो ने तो यज्ञ मे भगवान शंकर का प्राप्य भाग न देकर उनका बड़ा भारी अपराध किया है। परन्तु शंकर जी बहुत शीघ्र प्रसन्न होने वाले है, इसलिए तुम लोग शुद्ध हृदय से उनके पैर पकड़कर उन्हे प्रसन्न करो। उनसे क्षमा मांगो।

⇒ सभी देवताओ ने भगवान शिव जी के पास जाकर प्रार्थना की।

① जटाटवी - गलज् - जल-प्रवाह-पावि- तस्थले
गलेऽव- लम्ब्य लाम्बितां भुजङ्ग - तुङ्ग-मालिकाम्।
डमड् - डमड् - डमड् - डमन् - निनाद-वड् - डमर्वयं
चकार चण्ड- ताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्॥
हर-हर-हर महादेव-2 हर-हर-हर महादेव-2

② जटा-कटाह - सम्भ्रम- भ्रमन्-निलिम्प निर्झरी-
विलोल -वीचि -वल्लरी- विराज-मान मूर्धनि।
धगद्- धगद्- धगज्- ज्वलल् - ललाट -पट्ट
-पावके



किशोर-चन्द्र-शेखरे रतिः प्रति-क्षणं मम।
हर-हर-हर महादेव-2 हर, हर, हर महादेव-2

⇒ ब्रह्माजी सहित सभी देवताओं ने शंकर जी से प्रार्थना की। ब्रह्मा जी ने कहा प्रभु आपको यज्ञ भाग पाने का पूरा अधिकार है फिर भी इस दक्षयज्ञ के बुद्धिहीन याजको ने आपको यज्ञ भाग नहीं दिया। इसीसे यह आपके द्वारा विध्वस्त हुआ किन्तु हे प्रभु अब आप इस अपूर्ण यज्ञ का पुनरुद्धार करने की कृपा करो।

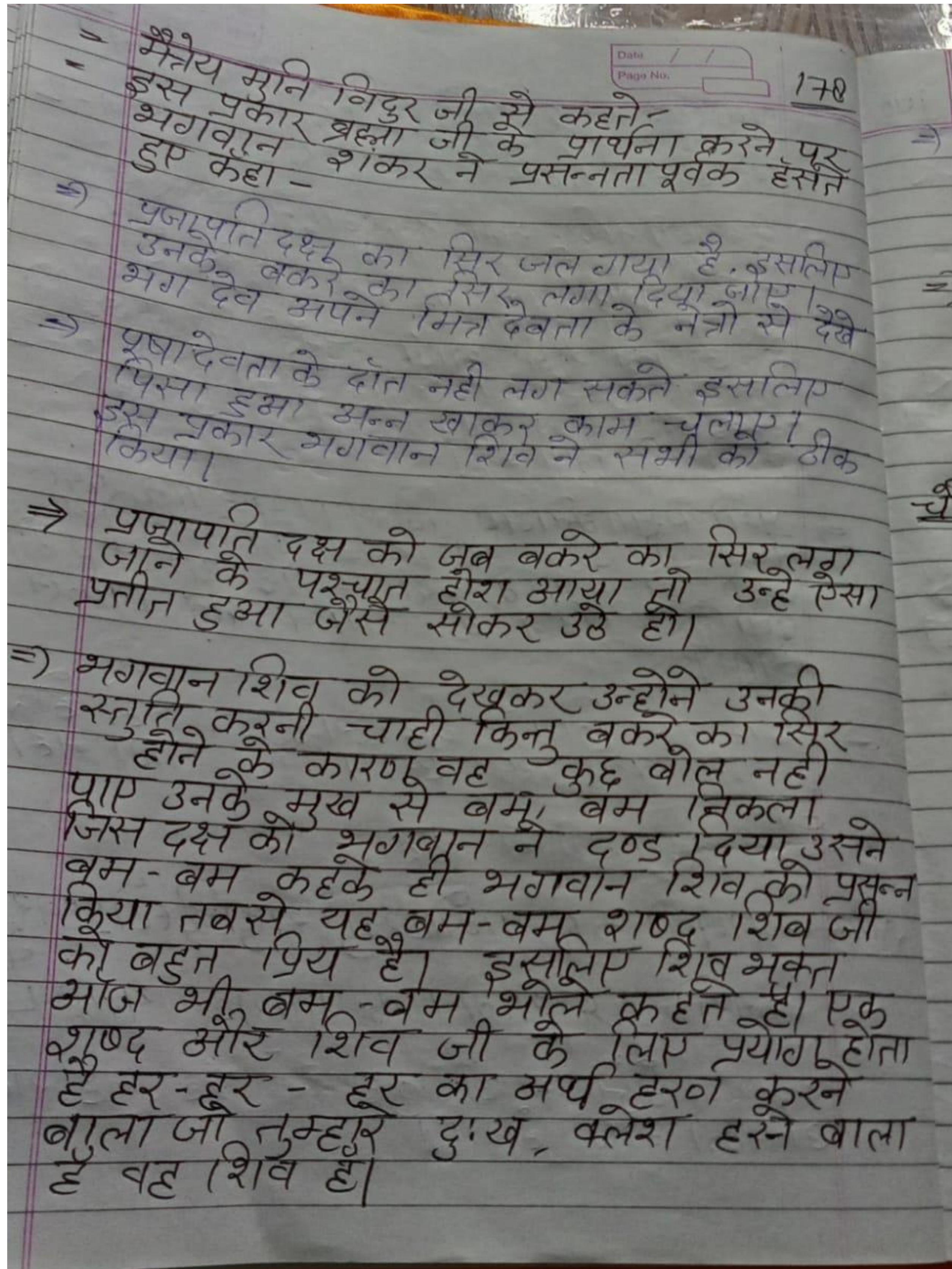
⇒ प्रभो ऐसा कीजिए जिससे यजमान दक्ष फिर जी उठे भगदेवता को नेत्र मिल जाएँ भृगु जी के दाढ़ी-मूँछ आ जाए और पूषा के पहले के समान दाँत निकल आए।

⇒ भगवान शिव ने कहा यज्ञ पूर्ण नहीं हो सकता क्यों कि उसमे मेरा भाग नहीं है।

⇒ तब ब्रह्मा जी ने कहा -

श्लोक - एष ते रुद्र भागोऽस्तु यदुच्छिष्टोऽध्वरस्य वै।
यज्ञस्ते रुद्र भागेन कल्पतामद्य यज्ञहन् ॥

यज्ञ पूर्ण होने पर जो कुछ शेष रहे, वह सब आपका भाग होगा।



178

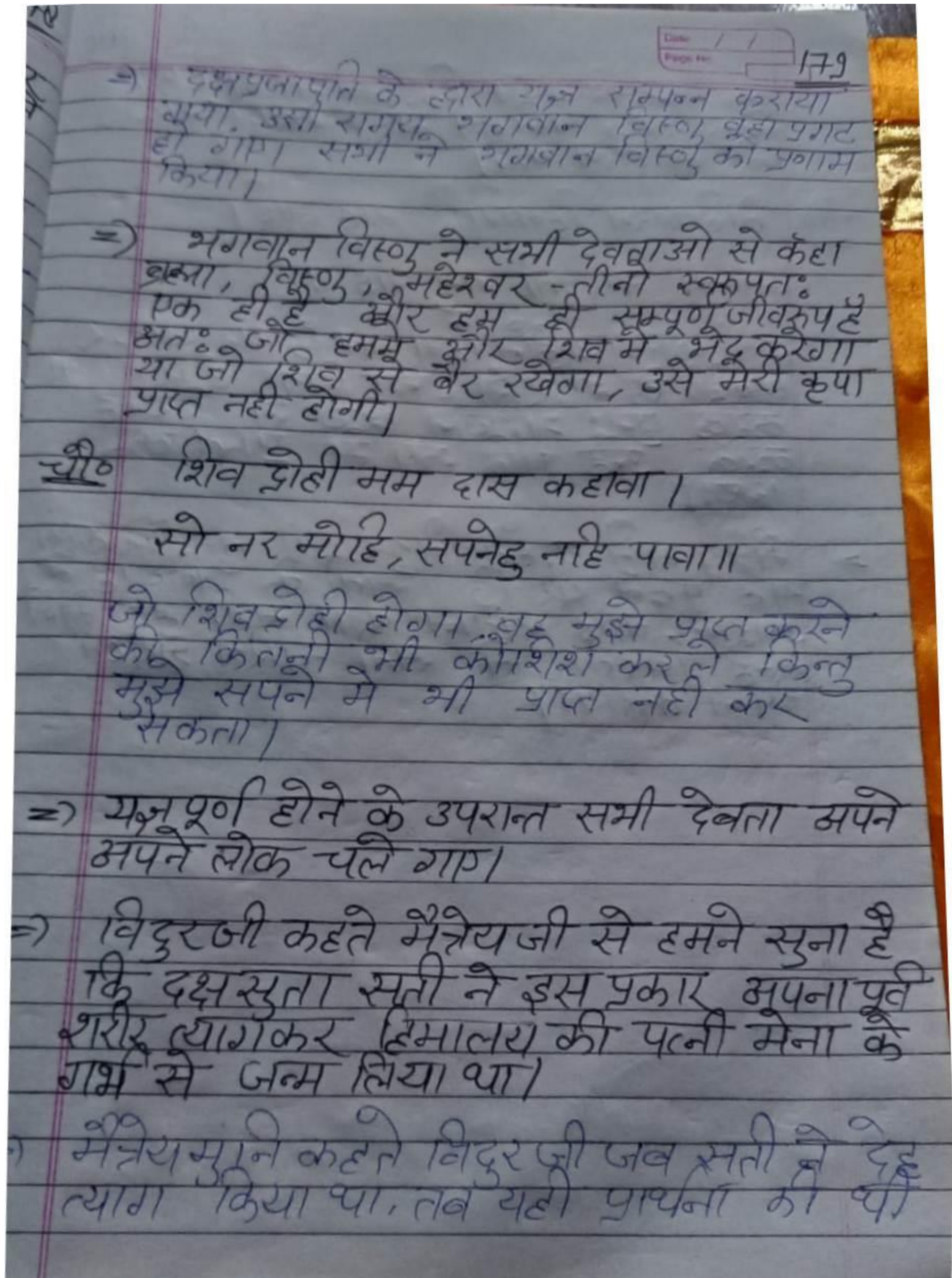
मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते-
इस प्रकार ब्रह्मा जी के प्रार्थना करने पर भगवान शंकर ने प्रसन्नता पूर्वक हँसते हुए कहा -

=> प्रजापति दक्ष का सिर जल गया है, इसलिए उनके बकरे का सिर लगा दिया जाए। भग देव अपने मित्र देवता के नेत्रों से देखे

=> पूषा देवता के दांत नही लग सकते इसलिए पिसा हुआ अन्न खाकर काम चलाए। इस प्रकार भगवान शिव ने सभी को ठीक किया।

=> प्रजापति दक्ष को जब बकरे का सिर लगा जाने के पश्चात होश आया तो उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सोकर उठे हो।

=> भगवान शिव को देखकर उन्होंने उनकी स्तुति करनी चाही किन्तु बकरे का सिर होने के कारण वह कुछ बोल नही पाए उनके मुख से बम, बम निकला जिस दक्ष को भगवान ने दण्ड दिया उसने बम-बम कहके ही भगवान शिव को प्रसन्न किया तबसे यह बम-बम शब्द शिव जी को बहुत प्रिय है। इसलिए शिव भक्त आज भी बम-बम भोले कहते है। एक शब्द और शिव जी के लिए प्रयोग होता है हर-हर - हर का अर्थ हरण करने वाला जो तुम्हारे दुःख, क्लेश हरने वाला है वह शिव है।



179

=> दक्षप्रजापति के द्वारा यज्ञ सम्पन्न कराया गया, उसी समय भगवान विष्णु वहा प्रगट हो गए। सभी ने भगवान विष्णु को प्रणाम किया।

=> भगवान विष्णु ने सभी देवताओ से कहा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर - तीनो स्वरूपतः एक ही है और हम ही सम्पूर्ण जीवरूप है अतः जो हममे और शिव मे भेद करेगा या जो शिव से बैर रखेगा, उसे मेरी कृपा प्राप्त नही होगी।

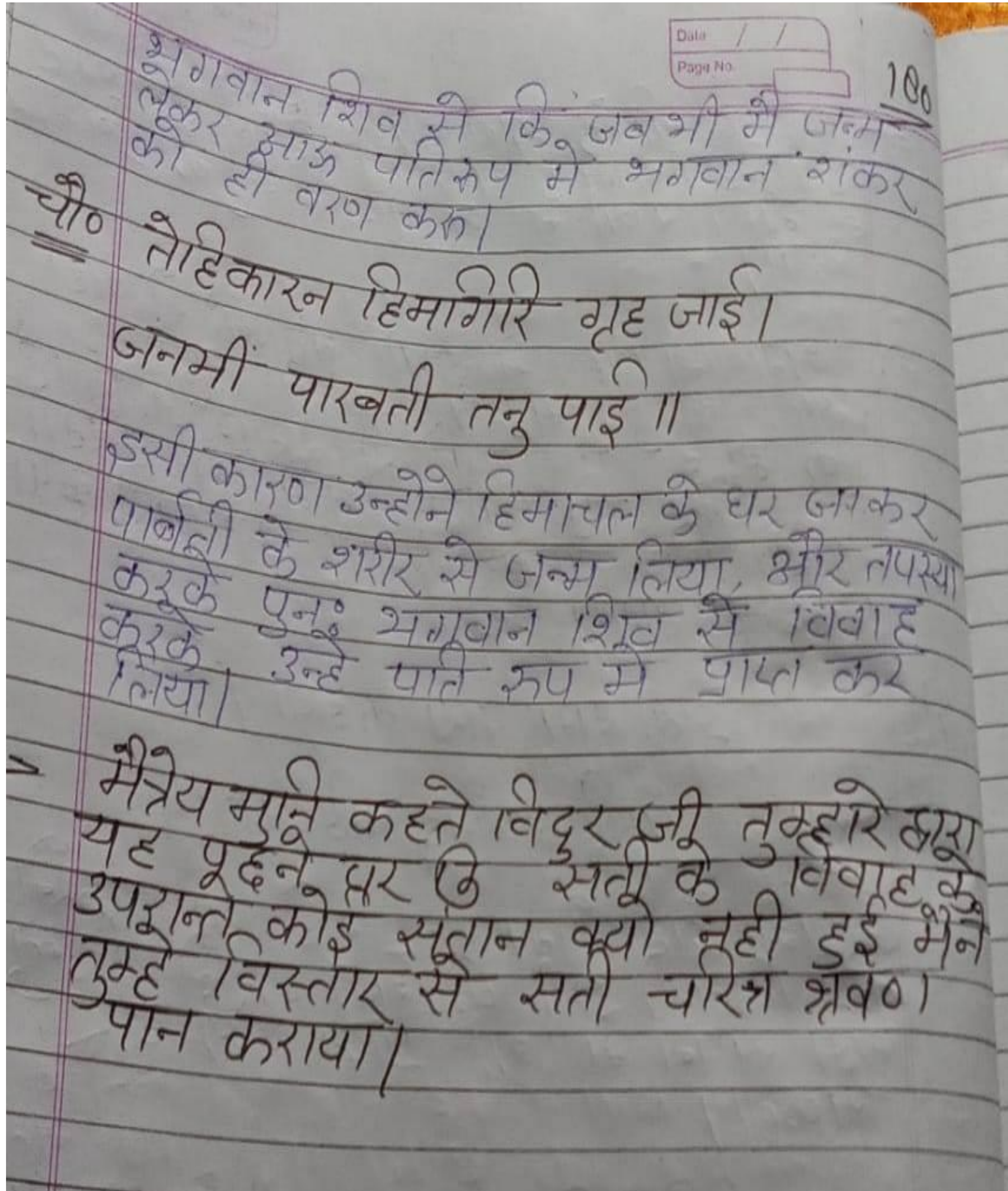
चौ० शिव द्रोही मम दास कहावा।
सो नर मोहि, सपनेहु नहि पावा॥

जो शिव द्रोही होगा, वह मुझे प्राप्त करने की कितनी भी कोशिश कर ले किन्तु मुझे सपने मे भी प्राप्त नही कर सकता।

=> यज्ञ पूर्ण होने के उपरान्त सभी देवता अपने अपने लोक चले गए।

=> विदुरजी कहते मैत्रेयजी से हमने सुना है कि दक्षसुता सती ने इस प्रकार अपना पूर्व शरीर त्यागकर हिमालय की पत्नी मेना के गर्भ से जन्म लिया था।

=> मैत्रेयमुनि कहते विदुर जी जब सती ने देह त्याग किया था, तब यही प्रार्थना की थी



Date / / Page No. 180

भगवान शिव से कि जब भी मैं जन्म लेकर आऊं पतिरूप मे भगवान शंकर को ही वरण करूं।

चौ० तोहिकारन हिमागिरि गृह जाई।
जनमीं पारबती तनु पाई॥

इसी कारण उन्होने हिमाचल के घर जाकर पार्वती के शरीर से जन्म लिया, और तपस्या करके पुनः भगवान शिव से विवाह करके उन्हे पति रूप मे प्राप्त कर लिया।

मैत्रिय मुनि कहते विदुर जी तुम्हारे द्वारा यह प्रश्न था कि सती के विवाह के उपरान्त कोई संतान क्यो नही हुई मैने तुम्हे विस्तार से सती चरित्र श्रवण पान कराया।